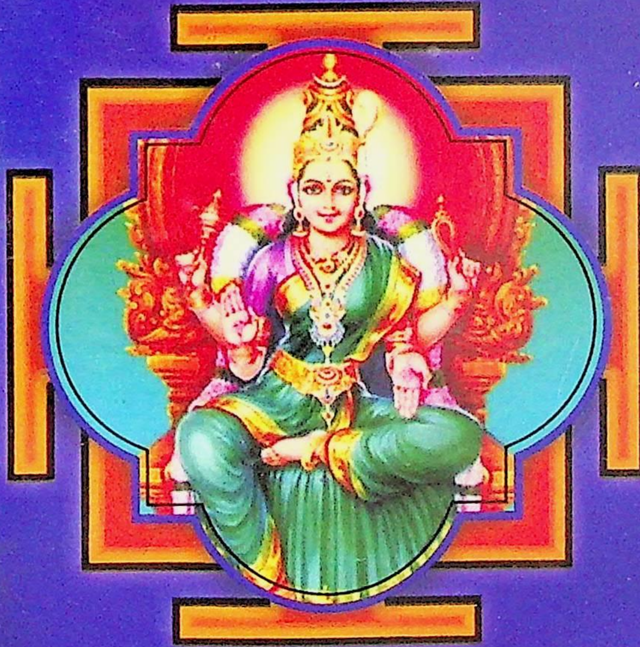
रुद्रयामलतन्त्रोक्तं

श्रीभुवनेश्वरी-रहस्यम्

'कल्याणी' हिन्दीटीका सहित



महाविद्या भुवनेश्वरी-उपासना का सम्पूर्ण विवेचन

आचार्य मृत्युञ्जय त्रिपाठी

पुस्तक-परिचय

उपासनापरक ग्रन्थों में **रुद्रयामलतन्त्र** में वर्णित **भुवनेश्वरी-रहस्य** का विशेष महत्त्व है जो 22 पटलों में समन्वित है । जिसमें भुवनेश्वरी महाविद्या के विविधमन्त्र, उनकी पुरश्चरण-विधि, कवच, सहस्रनाम सहित पूजा-पद्धति, भूकम्प, सूर्यग्रहण-चन्द्रग्रहण, नवरात्रिपूजन, कन्यासंक्रान्ति जैसे अवसरों पर की जाने वाली सामयिक पूजा-विधियों तथा शक्तिपूजा का वर्णन किया गया है । यह देवी भगवत्पाद शङ्कराचार्य के प्रमुख शिष्य श्री पृथ्वीधराचार्य की उपास्या हैं । शक्तिउपासना के तान्त्रिकपक्ष में नित्यार्चन और सामयिक-पूजन दोनों क्रम मिलते हैं, जिन्हें नित्यार्चन और नैमित्तिकार्चन के नाम से पुकार सकते हैं । आलोच्यग्रन्थ में दोनों ही अर्चाओं का प्रभावशाली विवेचन हुआ है । यद्यपि इसकी हिन्दी टीका के समय-समय पर अनेक प्रयत्न हुए किन्तु वे साधकों की उद्देश्य पूर्ति में पूर्णतः सफल नहीं हुये । प्रस्तुत कल्याणीटीका में भगवती भुवनेश्वरी की बौद्धिक अराधना के साथ उन्हीं की कृपा से उद्धृत अंशों के प्रकाशन का यथासम्भव प्रयास हुआ है ।

इनकी उपासना में **श्रीयन्त्रपूजन** का भी संकेत मिलता है; फलतः त्रिपुरा और भुवनेश्वरी दोनों एक ही हैं । दुर्गा ही भुवनेश्वरी हैं । देवीभागवत में दुर्गा को काली का ही रूप बताया गया है । देवी भुवनेश्वरी सर्व बीजमयी हैं किन्तु ह्रीँकार इनका प्रधान बीज है; जो शक्तिप्रणव के नाम से विख्यात है । फलतः ये देवी सभी शक्तियों में श्रेष्ठतमा सिद्ध होती हैं ।

ISBN : 978-93-81484-35-7
₹ 300



उपा
वर्णि
जो
भुवं
पुरश्च
पूजा
नव
की
शरि
भग
पृष्ठ
के
पूज
औ
आ
प्रभ
हिन
हुए
सप

दे
इन
वि
श्रे

!S
₹

॥ श्रीः ॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला

456

रुद्रयामलतन्त्रोक्तं

श्रीभुवनेश्वरीरहस्यम्

कल्याणीटीकासमन्वितम्

व्याख्याकार:

आचार्य मृत्युञ्जय त्रिपाठी



चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

वाराणसी

ISBN : 978-93-81484-35-7

प्रकाशक :

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

(भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक)

के 37/117 गोपाल मंदिर लेन, पोस्ट बॉक्स न. 1129

वाराणसी-221001

दूरभाष : (0542) 2335263

प्रथम संस्करण : 2012

₹ 300

अन्य प्राप्तिस्थान :

चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस

4697/2, भू-तल (ग्राउण्ड फ्लोर)

गली न. 21-ए, अंसारी रोड़, दरियागंज

नई दिल्ली-110002

दूरभाषः (011) 32996391, टेलीफैक्सः (011) 23286537

*

चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान

38 यू. ए. बंगलो रोड़, जवाहर नगर,

पोस्ट बॉक्स न. 2113, दिल्ली-10007

*

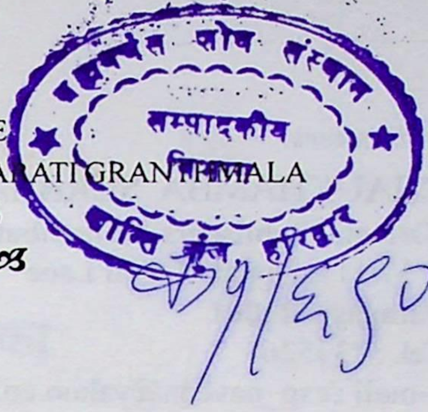
चौखम्बा विद्याभवन

चौक (बैंक ऑफ बड़ोदा भवन के पीछे)

पोस्ट बॉक्स न. 1069, वाराणसी-221001

मुद्रक

डीलक्स ऑफसेट प्रिंटर्स, दिल्ली



THE
CHAUKHAMBA SURBHARATI GRANTHMALA
456

BHUVANEŚVARĪ-RAHASYAM

of

Rudrayāmala Tantram

With

Kalyāṇī Hindi Commentary

Translated by

Acharya Mrityunjay Tripathi



Chaukhamba Surbharati Prakashan
Varanasi (India)

Publishers:
CHAUKHAMBA SURBHARATI PRAKASHAN
(Oriental Publishers & Distributors)
K 37/117, Gopal Mandir Lane
Varanasi 221001
Tel. : 2335263
e-mail : csp_naveen@yahoo.co.in

ISBN : 978-93-81484-35-7

Also can be had from:
CHAUKHAMBA PUBLISHING HOUSE
4697/2, Ground Floor
Gali No. 21-A, Ansari Road
Daryaganj, New Delhi 110002
Tel. : 011-23286537
e-mail : chaukhambapublishinghouse@gmail.com

CHAUKHAMBA SANSKRIT PRATISHTHAN
38 U.A. Bungalow Road, Jawahar Nagar
Post Box No. 2113
Delhi 110007

CHOWKHAMBA VIDYA BHAWAN
Chowk (Behind Bank of Baroda Building)
Post Box No. 1069
Varanasi 221001

भूमिका

शक्तिसाधना के क्षेत्र में प्रकृति, देवी, विद्या, दुर्गा, योगिनी, यक्षिणी, अप्सरा आदि अनेक नाम-रूपों का समावेश हुआ है। देवीक्रम, स्थानदेवियों से पराप्रकृति तक विस्तृत है। शक्तिसाधना की दृष्टि से शान्ति, पुष्टि, धृति, मेधा आदि विशेषताओं को भी शक्ति के विशिष्ट रूप में देखा गया है किन्तु तन्त्रसाधकों में महाविद्याक्रम की उपासना का विशेष प्रचलन है। ये महाविद्याएँ भी अनेक हैं। विभिन्न तन्त्रग्रन्थों में इनकी भिन्न-भिन्न संख्याएँ बताई गई हैं, जैसे मुण्डमालातन्त्र में १०, भैरवमत में १६, निरुत्तरतन्त्र में १८, तन्त्रकौमुदी में २७, महाकालसंहिता में ५१, नारदपञ्चरात्र में ६ करोड़ किन्तु इनमें १० की गणना को प्रमुखता प्राप्त है। शिवपुराण, नारदीयपुराण, महाभागवत आदि पौराणिकग्रन्थों में इनकी दश संख्या का ही उल्लेख है। ये सती या राधा नामक महादेवी के विविध रूप हैं।

काली तारा महाविद्या षोडशी भुवनेश्वरी।
भैरवी छिन्नमस्ता च विद्याधूमावती तथा॥
बगला सिद्धविद्या च मातंगी कमलात्मिका।
एतादशमहाविद्या सर्वतन्त्रेषु गोपिता॥

इन्हें कुल-विचार से काली और श्री (षोडशी) दो तथा विद्याक्रम में महाविद्या, विद्या एवं सिद्धविद्या इन तीनों वर्गों में बाँटा गया है। इसमें महाविद्याक्रम में काली, तारा, षोडशी और भुवनेश्वरी इन चारों का ही नामोल्लेख हुआ है। इनमें से ही युग-व्यवस्था से किसी एक को प्रधानता दे आद्यापद पर विभूषित किया जाता है—

सत्ये च सुन्दरी आद्या त्रेतायां भुवनेश्वरी।
द्वापरे तारिणी विद्या कलौ काली प्रकीर्तिता॥

शाक्तानन्दतरंगिणी में श्रीविद्या ही सुन्दरी कही गई हैं। षोडशाक्षरमन्त्र से उपसिता होने से वही षोडशी या त्रिपुरा भी है। भुवनेश्वरी, दश महाविद्याओं में प्रमुख तथा त्रेतायुग की आद्या है। तृण से लेकर ब्रह्मपर्यन्त सम्पूर्ण सत्ता, भुवन शब्द से सम्बोधित है इनकी अधिष्ठातृ शक्ति का नाम भुवनेश्वरी है। जो भुवन की निर्मात्री एवं स्वामिनी दोनों होने के कारण स्वयं ब्रह्मस्वरूपा है। लोक में चौदह तथा तीन भुवनों की विशेष प्रसिद्धि है। वेदों की वाक् शक्ति ही भुवनेश्वरी रूप से उद्भूत है, जो स्रष्टा की सहधर्मिणी सरस्वती भी कही जाती है। इसकी श्रेष्ठताहेतु महाशब्द के योग से इसे महासरस्वती भी कहा गया है। यही मार्कण्डेयपुराणोक्त देवीमाहात्म्य के उत्तरचरित्र की अधिष्ठातृ देवी है। यही सृष्टि देवी है। इसके ही सहयोग से प्रजापति सृष्टि प्रक्रिया का प्रवर्तन करते हैं। आगम के अनुसार यह सर्जकशक्ति शिव को भी शक्तिमान करने वाली चित् शक्ति है। निगम की वाक्, आगम की चित्तशक्ति, भुवनेश्वरी महाविद्या के ही परिचायक हैं। देवी भागवत महापुराण में भुवनेश्वरी को ही परा एवं महादेवी कहा गया है जो ब्रह्मा, विष्णु महेश को लोकान्तर का भ्रमण कराती हैं। वहाँ देवी के सौन्दर्य का मूर्तिमन्त वर्णन मिलता है—

रक्तमाल्याम्बरधरा रक्तगन्धानुलेपना।
सुरक्तनयना कान्ता विद्युत्कोटिसमप्रभा ।।
सुचारुवदना रक्तदन्तच्छदविराजिता।
रमाकोट्यधिका कान्त्या सूर्यबिम्बनिभाखिला ।।
वरपाशाङ्कुशाभीष्टधरा श्रीभुवनेश्वरी।

भव की अधिष्ठात्री होने से ये ही भवानी हैं। यही भुवनेश्वरी, महाविद्या महामाया, पूर्णा, प्रकृति, अव्यया, परमात्मा की इच्छास्वरूप तथा नित्यानित्य स्वरूपीणी हैं। यही विश्वेश्वरी, शिवा, वेदगर्भा, विशालाक्षी, सबकी आदि स्वामिनी भी है।

भुवनेश्वरी ही पौराणिकसाहित्य में दुर्गा, राधा और गायत्री रूप में भी वर्णित हैं। ललिता, त्रिपुरा का ही अपर रूप है जो पुराणों में राधा की सहचरी और तन्त्र में स्वयं राधा ही हैं।

इसकी उपासना में भी श्रीयन्त्रपूजन का संकेत मिलता है फलतः त्रिपुरा और भुवनेश्वरी दोनों ही एक हैं। दुर्गा ही भुवनेश्वरी हैं। देवीभागवत में दुर्गा को काली का ही रूप बताया गया है। जिससे भुवनेश्वरी सर्वप्रधान महाविद्या सिद्ध होती है।

देवी भुवनेश्वरी सर्व बीजमयी हैं किन्तु ह्रीँकार इनका प्रधान बीज है जो शक्तिप्रणव के नाम से विश्वविख्यात है। फलतः ये देवी सभी शक्तियों में श्रेष्ठतमा सिद्ध होती है।

यद्यपि वैदिकदेवी सूक्त, देव्य अथर्वशीर्ष में इन्हीं का स्तवन किया गया है। पुराणों के अनेक स्तोत्र भी इन्हीं का स्तवन करते है तथापि इसके उपासना परक ग्रन्थों में भुवनेश्वरी रहस्य का विशेष महत्त्व है जो अपने २२ पटलों से समन्वित है। जिसमें भुवनेश्वरी महाविद्या के विविधमन्त्र, उनके पुरश्चरणविधि, कवच, सहस्त्रनाम सहित पूजापद्धति, कवच, भूकम्प, सूर्यग्रहण चन्द्रग्रहण, नवरात्रिपूजन, कन्यासंक्रान्ति जैसे अवसरों पर किए जाने वाली सामयिकपूजाविधियों तथा शक्तिपूजा का वर्णन किया गया है। भगवत्पाद शङ्कराचार्य के प्रमुख शिष्य श्री पृथ्वीधराचार्य की उपास्या होने से अन्यत्र इनका सुन्दर स्तोत्र भी उपलब्ध होता है। शक्तिउपासना के तान्त्रिकपक्ष में नित्यार्चन और सामयिकपूजन दोनों क्रम मिलते हैं। जिन्हें नित्यार्चन और नैमित्तिकअर्चन के नाम से पुकार सकते हैं। आलोच्यग्रन्थ में दोनों ही अर्चाओं का प्रभावशाली विवेचन हुआ है। यद्यपि इसकी हिन्दी टीका के समय-समय पर अनेक प्रयत्न हुए किन्तु वे पूर्णतः साधकों की उद्देश्य पूर्ति में सफल नहीं हुए। कहीं टीकाकार की सीमा बाधक हुई तो कहीं गोपनीयताभंग का भय। प्रस्तुत कल्याणीटीका में दोनों से बचते हुए भगवती भुवनेश्वरी की बौद्धिक अराधना के साथ उन्हीं की कृपा से उद्धृत अंशों के प्रकाशन का यथासम्भव प्रयास हुआ है।

इसकी टीका की प्रेरणा देने वाले गुरुतुल्य शाक्तशिखर पं. आद्याप्रसाद द्विवेदी के करकमलों में यह ग्रन्थाञ्जलि सादर समर्पित है।

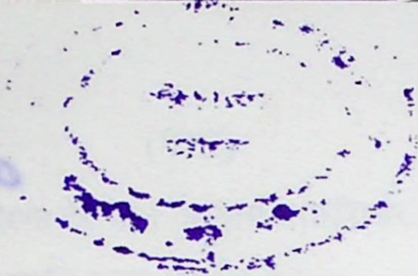
इस ग्रन्थरत्न के प्रकाशन में अन्तरस्थ दिव्यपुरुषों, बहिरस्थ विद्वज्जनों तथा साधकों के प्रति नति प्रस्तुत करते हुए चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन के अधिपति श्री नवनीतदास गुप्त के प्रति सादर आभार प्रदर्शनपूर्वक मैं कालिकाम्बा की ही अनन्यमूर्ति भगवती भुवनेश्वरी से प्रार्थना करता हूँ कि वे उनके व्यवसाय एवं यश को अभिवर्धित करती रहें।

पुनश्च साधकगण इसे गुरूपदेश तथा अपने इष्टदेव के निर्देश में सावधानी से प्रयोग करें तभी उन्हें इसका रसास्वादन हो सकेगा।

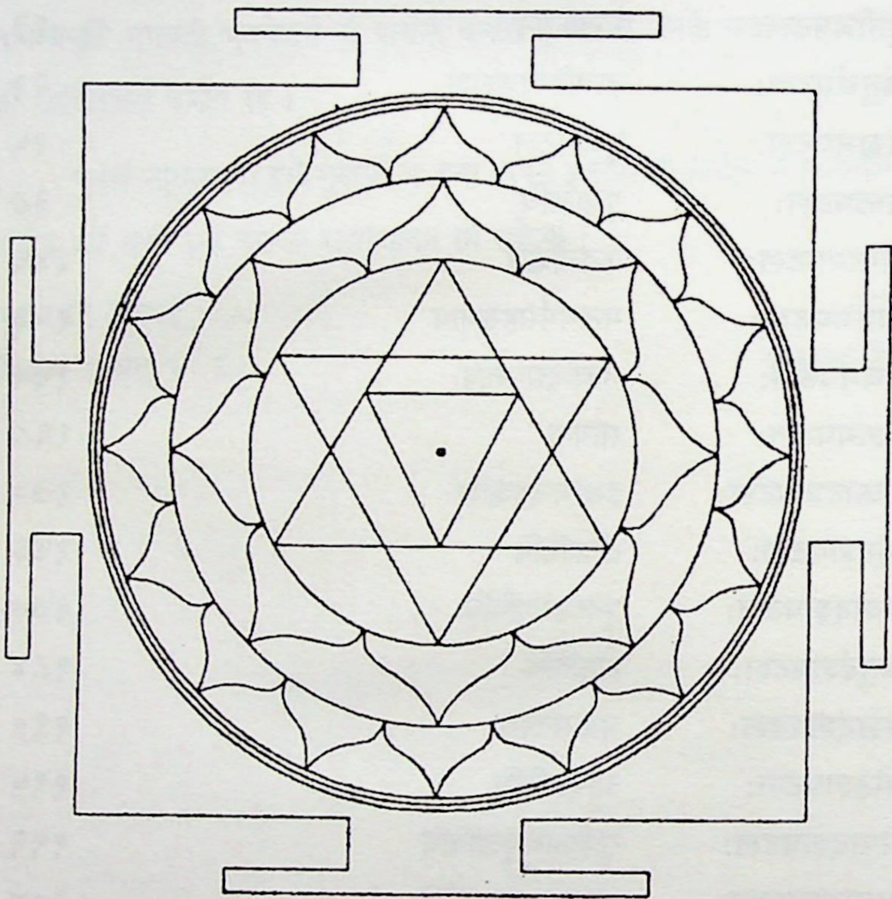
भुवनेश्वरी जयन्ती भवदीय
विक्रम सम्वत् २०६८ मृत्युञ्जय त्रिपाठी

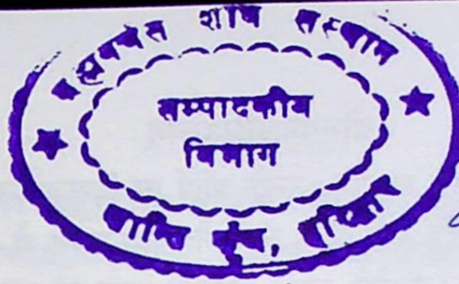
विषयानुक्रमणी





भुवनेश्वरीयन्त्र

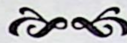




॥ श्रीभुवनेश्वर्यै नमः ॥

'कल्याणी' हिन्दीटीकोपेतम्

श्रीभुवनेश्वरीरहस्यम्



प्रथमपटलः

एकाक्षरीमाहात्म्यनिरूपण

एकाक्षरीविद्या (ह्रीं) भुवनेश्वरीविद्या का प्रधान मन्त्र है । इसे माया, परा, लज्जा, सकला, हल्लेखा, शक्तिप्रणव आदि विविध नामों से पुकारा जाता है ।

ॐ चिद्रूपं यद्रूपं शून्यं स्वरूपं रूपैरूप्यं योगिभिः सर्वसंस्थम् ।
जीयाच्छम्भोस्त्रैपुराख्यं महन्तन्नासन्नोसत्सन्नसच्चित्रचित्रम् ॥१॥

शम्भु (परशिव) का त्रैपुर नामक महः (प्रकाश) रूप, जो योगीजनों द्वारा चित्तरूप, शून्यरूप, आत्मरूप, सबमें स्थित, अद्भुतरूप से चित्रित, निरूपित किया गया है । जो न सत् है न असत्, जो सदसत भी नहीं है, वह रूप साधकों के चित्त में स्थायित्व को प्राप्त करे ॥१॥

श्रीशैलराजशिखरे नानाद्रुमलताकुले ।
वसन्तलक्ष्मीनिलये समासीनमुमापतिम् ॥२॥
एकदादेवमीशानं शशिशेखरमीश्वरम् ।
उमाश्रितार्धवपुषं देवदानवसेवितम् ॥३॥
ध्यानासक्ताक्षित्रितयं जटाजूटलतारुणम् ।
भस्माङ्गरागधवलं नारायणनमस्कृतम् ॥४॥
ब्रह्मादिदेवप्रणतं गन्धर्वजनवन्दितम् ।
यक्षराक्षसनागेन्द्र- दैत्येन्द्रकुलपूजितम् ॥५॥
भैरवं भैरवाकारं गिरीशं परमेश्वरम् ।
उत्थाय विनताभूत्वा पर्यपृच्छत पार्वती ॥६॥

एकबार पार्वती ने सब ओर से विनम्र हो, उठकर भैरव से पूछा । वे भैरव, भयानक आकार के थे । वे ही गिरीश, परमेश्वर भी कहे जाते हैं । देव, ईशान् और

ईश्वर भी वही हैं। उस समय चन्द्रमा, उनके शीर्ष पर विराजमान था तथा वे उमा को अपने अर्धाङ्ग में आश्रय दिये थे। उनके तीनों नेत्र ध्यानासक्त थे और उनका जटाजूट अरुणवर्ण का हो गया था। उन्होनें अपने अङ्गों में भस्म का उज्ज्वल अंगराग धारण किया था। शैलराज हिमालय के (कैलाश नामक) शिखर पर जो अनेक प्रकार की लताओं एवं वृक्षों से घिरा हुआ था और वसन्तकालिक शोभा का घर बना हुआ था, वहाँ उमा के पति, शिव (जिन्हें इस ग्रन्थ में भैरवनाम से सम्बोधित किया गया है) भलीभाँति (स्वस्थचित्त से) विराजमान थे। उस समय भगवान् विष्णु उन्हें नमस्कार कर रहे थे। देव-दानव उनकी सेवा कर रहे थे। ब्रह्मा आदि देवगण उनके प्रति प्रणत थे, गन्धर्वजन उनकी वन्दना कर रहे थे तथा यक्ष, राक्षस, नागराज एवं दैत्यराजों के कुल उनका पूजन कर रहे थे ॥२-६॥

श्रीपार्वत्युवाच

भगवन् सर्वलोकेश सर्वलोकनमस्कृत्।
गुणातीत गणाध्यक्ष भूतेश्वर महेश्वर ॥७॥

श्रीपार्वती बोलीं—हे भगवन्! आप सभी लोकों के स्वामी हैं और समस्त लोक आपको नमस्कार करते हैं। आप गुणों के बन्धन से परे हैं। आप गणों के स्वामी हैं, आप भूतों (प्राणी-मात्र) के स्वामी ही नहीं अपितु महान् ईश्वर हैं ॥७॥

सृजस्यवसि नित्यं त्वं संहरस्यमितं जगत्।
चराचरं महेशान श्रुतं सर्वं भवन् मुखात् ॥८॥
महेश! श्रोतुमिच्छामि भुवनेशीरहस्यकम्।
वद शीघ्रं दयाम्भोधे यद्यहं प्रेयसी तव ॥९॥

हे महान ईशान महेश! आप ही नित्य सचराचर व अमित-जगत की सृष्टि करते हैं, रक्षा (पालन) करते हैं तथा संहार भी करते हैं। आपके मुख से मैंने सुननेयोग्य (सब रहस्य) सुन लिया है। अब मैं आप से श्रीभुवनेश्वरीरहस्य को सुनना चाहती हूँ। हे दया के सागर। यदि मैं आपकी प्रियतमा हूँ तो आप इस रहस्यको शीघ्र मुझसे कहें ॥८-९॥

श्रीभैरवउवाच

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि रहस्यमिदमद्भुतम्।
भुवनेश्याश्च सर्वस्वं सारभूतं समप्रिये ॥१०॥

श्रीभैरव बोले—हे मेरी प्रिये! हे देवि! मैं तुमसे इस अद्भुतरहस्य को कहता हूँ जो भुवनेश्वरी का सर्वस्व तथा सारभूत है। तुम उसे सुनो ॥१०॥

लक्षवारं सहस्राणि वारिताऽसि पुनः पुनः ।
स्त्रीस्वभावान्महादेवि पुनस्त्वं परिपृच्छसि ॥११॥

हे महादेवि ! यद्यपि ऐसा करने से (पूछने से) तुम मेरे द्वारा लाख-हजार (करोड़ों) बार, (बारम्बार) मना की गई हो तथापि स्त्रीस्वभाव से तुम पुनः पूछ रही हो ॥११॥

अद्यभक्तया तव स्नेहाद् वक्ष्यामि परमादभुतम् ।
भुवनेशीरहस्याख्यं तन्त्रराजं महेश्वरि ॥१२॥
सर्वागमैकमुकुटं सर्वसारमयं ध्रुवम् ।
सर्वमन्त्रमयं दिव्यं सर्वैश्वर्यफलप्रदम् ॥१३॥

हे महेश्वरि ! तुम्हारे प्रति प्रेम के कारण, परम-अद्भुत, तन्त्रों में राजा की भाँति श्रेष्ठ, उस भुवनेश्वरीरहस्य नामक तन्त्र को कहूँगा जो सभी प्रकार के आगमों में एक मात्र मुकुट की भाँति महत्त्व रखता है। जो सभी का सारभूत है। निश्चित है, सभी मन्त्रों से युक्त है, दिव्य है, तथा अपने ज्ञाता व प्रयोक्ता को फलरूप में सब प्रकार का ऐश्वर्य देनेवाला है ॥१२-१३॥

एकाक्षरी या देवेशी भुवनेशी महेश्वरी ।
हृदिलेखेव जागर्ति प्राणशक्तिरियं परा ॥१४॥
हृल्लेखा कथ्यते तस्मान् मायानुचिन्त्य वैभवात् ।
अनया रहिताः सर्व निर्जीवा मन्त्रराशयः ॥१५॥
अतस्तु सर्वमन्त्राणामियमुद्बोधिनी मता ।
श्रृणुष्वावहितो भूत्वा नामैकाक्षररूपिणीम् ॥१६॥

हे देवेशि ! भुवनेश्वरी की जो ह्रींकार रूपा एकाक्षरी विद्या है, वह साक्षात् महेश्वरी स्वरूप ही है। वह साधकों के चित्त में या मेरे हृदयमें लेखा (बिम्ब) की भाँति जागृत होती है। स्थित होती है। इसीलिए इसे हृल्लेखा कहा जाता है। यह साधना अथवा सभी विद्याओं की प्राणशक्ति है। यही परा भी है। अपने अनुचिन्त्य वैभव के कारण यही माया भी कही जाती है। इससे रहित सभी मन्त्रसमूह विशेषतः शक्ति-मन्त्र, विद्याएँ, निर्जीव हो जाती हैं। इसीलिए इसे शक्तिप्रणव का महत्त्व भी प्राप्त है। इसीलिए सभी मन्त्रों का उद्बोधन करने वाली भी इसे माना गया है। मैं अब उस एकाक्षरी रूपवाली विद्या को तुमसे कहता हूँ। तुम उसे अवहित (एकाग्रचित्त) होकर सुनो।

देव्युपनिषत् में एकाक्षरीविद्या का मन्त्रोद्धार इस प्रकार कहा गया है—

वियदीकारसंयुक्तं वीतिहोत्रसमन्वितम् ।
अर्धेन्दुलसितं देव्याबीजं सर्वार्थसाधकम् ॥
एवमेकाक्षरं मन्त्रं यतयः शुद्धचेतसः ।
ध्यायन्ति परमानन्दमया ज्ञानाम्बुराशयः ॥

देव्युपनिषद्-११-१२

अर्थात् वीतिहोत्र (रकार) से समन्वित, अर्धेन्दु (चन्द्रबिन्दु) से सुशोभित, ईकार से संयुक्त, वियत् (हकार) सभी अर्थों को सिद्ध करने वाला देवी का एकाक्षरमन्त्र ह्रीं कहा गया है ॥१४-१६॥

कथयामि महादेवि भुवनेशी महेश्वरि ।
मायाबीजं नाममध्ये नमो मन्त्रान्तिमं वदेत् ॥१७॥
एकाक्षरीयं वितता भुवने भुवनेश्वरी ।
अनया सदृशी विद्या नास्त्यन्या ज्ञानसाधने ॥१८॥

हे महादेवि ! हे महेश्वरि ! मैं तुमसे उपर्युक्त भुवनेश्वरीविद्या को कहता हूँ—पहले मायाबीज (ह्रीँ) का उच्चारण करे, मध्य में देवी का चतुर्थ्यन्त नाम (भुवनेश्वर्यै) और मन्त्र के अन्तिमभाग में नमः शब्द बोलना चाहिए । ऐसा करने से **ह्रीँ भुवनेश्वर्यै नमः** यह मन्त्र बनता है ।

भुवनेश्वरी की यह एकाक्षरीविद्या, समस्त भुवनों में व्याप्त है । ज्ञानप्राप्ति की दृष्टि से इसके समान अन्य कोई विद्या नहीं है ।

विशेष—ह्रीँ कार ही एकाक्षरीविद्या के रूप में पर्याप्त है, अतः चतुर्थ्यन्त नाम युक्त नमस्कारान्त मन्त्र का निर्देश क्यों ? यह विचारणीय प्रश्न है । जो ग्रन्थकार की भगवती के प्रति श्रद्धा तो प्रकट करता है किन्तु एकाक्षरी के महत्त्व को कम करता है, जो नहीं होना चाहिए । इस सम्बन्ध में साधक गुरूपदिष्टमार्ग का ही आश्रय लें ॥१७-१८॥

नात्र चित्तविशुद्धिर्वा नारिमित्रादिदूषणम् ।
न वा प्रयासबाहुल्यं समया संसयादिकम् ॥१९॥

इसकी साधना में न तो चित्त की विशेष शुद्धि की आवश्यकता है, न मन्त्र के मित्र-शत्रु आदि दोषों (लक्षणों) पर विचार अपेक्षित है और न समय संशय आदि की दृष्टि से बहुत प्रयास की ही आवश्यकता है ॥१९॥

देवैर्देवत्वविधये सिद्धैः खेचरसिद्धये ।
पन्नगैः राक्षसैर्मर्त्यैं मुनिभिश्च मुमुक्षुभिः ॥२०॥

कामिभिर्धर्मिभिश्चार्थलिप्सुभिः सेविता परा ।
न वसुव्ययवाहुल्यं कायक्लेशकरं तथा ॥२१॥

न तो इसकी साधना में बहुत धन-व्यय की आवश्यकता है न अत्यधिक शारीरिककष्ट उठाने की ही आवश्यकता है। यह पराविद्या, देवताओं द्वारा देवत्व-प्राप्ति हेतु, सिद्धों द्वारा खेचर (आकाशगमन) आदि सिद्धियों की प्राप्ति के निमित्त, नागों, राक्षसों, मनुष्यों, अर्थ-धर्म-काम और मोक्ष की कामना रखने वाले साधकों द्वारा अपनी-अपनी कामनाओं की पूर्ति हेतु सेवित (साधित) की गई है ॥२०-२१॥

या एनां चिन्तयेन् मन्त्री सर्वकामार्थसिद्धिदाम् ।
तस्य हस्ते सदैवास्ति सर्वसिद्धिर्नसंशयः ॥२२॥
गद्यपद्यमयीवाणी सभायां तस्य जायते ।
तस्य दर्शनमात्रेण वादिनो निष्कृतादराः ॥२३॥

जो मन्त्रसाधक इन सभी कामनाओं एवं अर्थों (प्रयोजनों) को सिद्धिप्रदान करने वाली इस विद्या का चिन्तन करता है, सदैव सभी सिद्धियाँ उसके हस्तगत होती है। इसमें कोई सन्देह नहीं है। सभा में उसकी गद्यपद्यमयीवाणी प्रस्फुटित होती है। उसके दर्शनमात्र से वादी (विरोधी), सम्मान से हीन हो जाते हैं ॥२२-२३॥

अग्नेः शैत्यं जलस्तम्भं गतिस्तम्भं विवस्वतः ।
दिवारात्रिव्यत्यं च वशीकर्तुं क्षमोभवेत् ॥२४॥

इस विद्या का साधक, अग्नि को शीतल करने, तथा जल एवं सूर्य की गति को रोकने में, दिन को बदल कर रात्रि तथा रात्रि को दिन करने और सब के वशीकरण में समर्थ होता है ॥२४॥

राजानोऽपि हि दासत्वं भजन्ते किं प्रयोजनम् ।
सर्वस्यैव जनस्येह वल्लभः कीर्त्तिवर्द्धनः ॥२५॥
अन्ते च भजते देवीगणत्वं दुर्लभं नरः ।
चन्द्रसूर्यसमो भूत्वा वसेत् कल्पायुतं दिवि ।
न तस्य दुर्लभं किञ्चिद्योवेत्ति भुवनेश्वरीम् ॥२६॥

राजागण भी उसकी दासता स्वीकार करते हैं अन्यों का क्या प्रयोजन ? वे तो दास हो ही जाते हैं। वह साधक इस लोक में सभी जनों का प्रिय होता है; वह कीर्ति बढ़ाने वाला होता है। वह मनुष्य अन्त होने पर देवी के दुर्लभ गणत्वपद को प्राप्त करता है। चन्द्र, सूर्य के समान श्रेष्ठ होकर वह दस हजार कल्पों तक स्वर्ग में निवास करता है। जो इस भुवनेश्वरीविद्या को जानता है उसे कुछ भी दुर्लभ नहीं होता ॥२५-२६॥

अस्य मन्त्रस्य देवेशि ऋषि शक्तिरुदाहृतः ॥२७॥
छन्दश्च देवदेवेशि गायत्री देवतास्मृता ।
भुवनेशि महेशानि सुरसङ्घनिषेविता ॥२८॥
शिवोबीजं स्मृतं देवि ईकारः शक्तिरुच्यते ।
रकारः कीलकं देवि धर्मकामार्थमुक्तये ॥२९॥
विनियोगो महादेवि कीर्तितोप्यङ्गकल्पनाम् ।
षड्दीर्घयुक्तबीजेन कुर्याच्चसाधकोत्तमः ॥३०॥

हे देवेशि ! इस एकाक्षरीमन्त्र के ऋषि शक्ति कहे गये हैं । हे देवदेवेशि ! इसका छन्द गायत्री है । हे महेशानि ! देवताओं के समूह से पूर्णतः सेवित भुवनेश्वरी देवी इसकी देवता स्मरण की गयी हैं । हे देवि ! शिव (हकार) इसका बीज, ईकार शक्ति कहा जाता है । रकार इसका कीलक है । हे देवि ! धर्म, अर्थ, काम तथा मुक्ति प्राप्ति-हेतु इसका विनियोग निर्देशित है ।

(अस्य एकाक्षरी मन्त्रस्य शक्तिः ऋषिः गायत्रीछन्दः भुवनेश्वरीदेवता हकारोबीजः ईकारः शक्तिः रकारो कीलकं धर्माकामार्थमुक्तयेविनियोगः) यह इसका विनियोगमन्त्र बनता है। इसकी साधना में उत्तम साधक षड्दीर्घ युक्त इसके बीजमन्त्र में (ह्राँ ह्रीँ आदि) का अङ्गन्यास में प्रयोग करें ।

उद्यद्दिनद्युतिमिन्दुकिरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम् स्मेरमुखीं ।
वरदांकुशपाशाऽभीतिकरां प्रभजेद् भुवनेशीम् ॥

ध्यान करें । इसका पुरश्चरण ३२ लाख मन्त्रजप तथा दशांश होमादि से पूर्ण होता है । होम में त्रिमधु (घृत, मधु, शर्करा), अष्टाङ्गहविष्य (अश्वत्थ, उदुम्बर, पाकड़, वट, तिल, श्वेत-सरसो, पायस, घृत) का प्रयोग करना चाहिए ॥२७-३०॥

इदं रहस्यं परमं सर्वतन्त्ररहस्यकम् ।
नाभक्ताय प्रदातव्यं गोपनीयं स्वयोनिवत् ॥३१॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये एकाक्षरीविद्यानिरूपणनाम प्रथमः पटलः ॥१॥

सभी मन्त्रों का रहस्य इसकी भूत यह रहस्य, परमश्रेष्ठ रहस्य है । इसे अभक्तजन को नहीं देना चाहिए तथा अपनी योनि के समान (तुम्हें) गोपनीयता बनाये रखनी चाहिए ॥३१॥

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के एकाक्षरीविद्या निरूपण नामक प्रथमपटल की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ॥१॥



द्वितीयपटलः

चतुर्दशमन्त्रभेदनिरूपण

श्रीदेव्युवाच

भगवन्सर्वधर्मज्ञ सर्वलोकनमस्कृत् ।
तत्त्वं यद् भुवनेश्वर्यास्तत्त्वं वद जगत्प्रभो ॥१॥

श्रीदेवी बोलीं—हे भगवन् ! आप सभी धर्मों को जानने वाले हैं तथा समस्तलोक (निवासी) आपको नमस्कार करते हैं। हे जगत् के प्रभु ! भुवनेश्वरीविद्या का जो तत्त्व है, उसे बताइये ॥१॥

श्रीभैरवउवाच

चतुर्दशात्मिका विद्या भुवने भुवनेश्वरि ।
तस्या श्रीभुवनेश्वर्या भेदा भुवि चतुर्दश ॥२॥

श्रीभैरव बोले—हे भुवनेश्वरि (पार्वती) ! यह भुवनेश्वरीविद्या, भुवनों में व्याप्ति की दृष्टि से चौदहभेदों वाली है, इसी लिए पृथ्वी पर उस सम्बन्धी विद्या या मन्त्र के चौदह भेद पाये जाते हैं ॥२॥

(एक-एक मन्त्र भेद का मन्त्रोद्धार सहित निरूपण किया जाता है।)

प्रथममन्त्रभेद

रमार्णं समस्ताक्षरं कामराजं
तथा पञ्चवर्णाङ्कितं नाम देव्याः ।
ततो ठद्वयं देवि मन्त्रावसाने
स्मृतो भेद मन्त्रो मयाद्यो दशार्णः ॥३॥

प्रथमभेद—हे देवि ! रमार्ण (श्रीं), समस्ताक्षर (ह्रीं), कामराज (क्लीं) तथा पञ्चाक्षर वर्णों वाली देवी का नाम (भुवनेश्वर्यै), तब मन्त्र के अन्त में ठद्वय (स्वाहा) के योग से देवी का दशअक्षरोंवाला प्रथममन्त्रभेद **श्रीं ह्रीं क्लीं भुवनेश्वर्यै स्वाहा** मेरे द्वारा कहा गया है ॥३॥

द्वितीयमन्त्रभेद

तारं माया वाग्भवं कामराजं
शक्तिमध्ये नाम पञ्चाक्षरीयम् ।

अन्ते दद्यान्नीरमेषस्मृतस्ते ।
मन्त्रोद्धारो देवि भेदो द्वितीयः ॥४॥

द्वितीयभेद—हे देवि ! तार (ॐ), माया (ह्रीं), वाग्भव (ऐं), कामराज (क्लीं) शक्ति मध्य में पाँच अक्षरों वाला सौं:नाम (भुवनेश्वर्यै) अन्त में नीरम् (स्वाहा) देने से बना, बारहअक्षरोंवाला, तुम्हारे मन्त्रोद्धार सम्बन्धी द्वितीयमन्त्रभेद **ॐ ह्रीं ऐं क्लीं सौः भुवनेश्वर्यै स्वाहा** कहा गया है ॥४॥

तृतीयमन्त्रभेद

त्र्यक्षं वाग्भवः रमामदनार्णं
शक्ति शून्य शरदूर्ध्वमातृका ।
नाम ठद्वयमथो महेश्वरी
भेद एष गदितस्तृतीयकः ॥५॥

तृतीयभेद—हे महेश्वरि ! त्र्यक्षरं (ॐ), वाग्भव (ऐं), रमा (श्रीं), मदनार्ण (क्लीं), शक्ति (सौः), शून्य (ह) शरत् (स) ऊर्द्धवमातृका (औं) इन तीनों का मिश्रित-रूप (हसौं) नाम (भुवनेश्वर्यै) तत्पश्चात् ठद्वय (स्वाहा) के योग से तेरह अक्षरों वाला यह तृतीयमन्त्रभेद **ॐ ऐं श्रीं क्लीं सौः हसौं भुवनेश्वर्यै स्वाहा** कहा गया है ॥५॥

चतुर्थमन्त्रभेद

तारार्णं सकला रमार्णमदनौ शक्तिस्तथा वाग्भवं,
तारद्वन्दमथो रमार्णद्वितय मध्येऽभिधां विन्यसेत् ।
अन्ते वाग्भवमन्मथौ शरदथो नीरञ्चभेदस्मृतो,
मन्त्राणां भुवनेश्वरी प्रियतरो दुर्गे चतुर्थोमया ॥६॥

चतुर्थभेद—हे दुर्गे ! तारार्ण (ॐ), सकला (ह्रीं), रमार्ण (श्रीं), मदन (क्लीं), शक्ति (सौः), वाग्भव (ऐं), तारद्वन्द्व (ॐ ॐ), दोबार रमार्ण (श्रीं श्रीं) तब मध्य में देवी का नाम लिखे तत्पश्चात् अन्त में वाग्भव (ऐं), मन्मथ (क्लीं), शरद (सौः), नीर (स्वाहा) के विन्यास से बीसअक्षरोंवाला, भुवनेश्वरी का प्रियतर चतुर्थमन्त्रभेद **ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं सौः ऐं ॐ ॐ श्रीं श्रीं भुवनेश्वर्यै ऐं क्लीं सौः स्वाहा**, मेरे द्वारा कहा गया है ॥६॥

पञ्चममन्त्रभेद

तारं लक्ष्मीमन्मथः शक्तिबीजं
मायाबीजं नाममध्ये शिवायाः ।
तारं कूर्चं त्रिष्ठकारं वनं च
भेदः प्रोक्तः पञ्चमो विश्वमातः ॥७॥

पञ्चमभेद—तार (ॐ), लक्ष्मी (श्रीं), मन्मथ (क्लीं), शक्तिबीज (सौः), मायाबीज (ह्रीं), मध्य में देवी का नाम (भुवनेश्वर्यै) तब तार (ॐ) कूर्च (हूँ) तीन ठकार (ठः ठः ठः) और वन (स्वाहा) के योग से बना, विश्वमाता भुवनेश्वरी का सत्रहवर्णोवाला पञ्चममन्त्रभेद **ॐ श्रीं क्लीं सौः ह्रीं भुवनेश्वर्यै ॐ हूँ ठः ठः ठः स्वाहा,** कहा गया है ॥७॥

षष्ठमन्त्रभेद

त्र्यक्षरं माया वाग्भवशक्ति-
मन्मथ लक्ष्मीर्नाम च मध्ये ।
ठद्वयमन्ते पार्वति भेदः
षष्ठो गोप्यो निगदित एषः ॥८॥

षष्ठभेद—हे पार्वति ! त्र्यक्षर (ॐ), माया (ह्रीं), वाग्भव (ऐं), शाक्ति (सौः), मन्मथ (क्लीं), लक्ष्मी (श्रीं), मध्य में नाम (भुवनेश्वर्यै) और अन्त में ठद्वय (स्वाहा) लिखने से बना तेरहअक्षरोंवाला यह गोपनीय षष्ठमन्त्रभेद, **ॐ ह्रीं ऐं सौः क्लीं श्रीं भुवनेश्वर्यै स्वाहा,** मेरे द्वारा कहा गया है ॥८॥

सप्तममन्त्रभेद

तारक शक्तिर्मन्मथ लक्ष्मी-
वाग्भवमाया विगलितकूर्चम् ।
नाम च ठद्वयमन्ते
भेदः प्रोक्तः सप्तम एषः ॥९॥

सप्तमभेद—तारक (ॐ), शक्ति (सौः), मन्मथ (क्लीं), लक्ष्मी (श्रीं), वाग्भव (ऐं), माया (ह्रीं), कूर्च (हूँ) मध्य में नाम (भुवनेश्वर्यै) और अन्त में ठद्वय (स्वाहा) युक्त चौदहअक्षर का सप्तममन्त्रभेद **ॐ सौः क्लीं श्रीं ऐं ह्रीं हूँ भुवनेश्वर्यै स्वाहा** कहा गया है ॥९॥

अष्टममन्त्रभेद

त्रासोल्लसन् मदनवाग्भवशक्तिमाया,
काली तत्रतटयुगे ह्यभिधा च मध्ये ।
काली ठकार त्रितय तुरगं वनञ्च
भेदोऽष्टमो निगदितस्तवप्रीतिवृद्ध्यै ॥१०॥

अष्टमभेद—त्रास (ॐ) बोलते हुये मदन (क्लीं), वाग्भव (ऐं), शक्ति (सौः), माया (ह्रीं), तीन काली (क्रीं क्रीं क्रीं) दो तट् (हूँ हूँ) तब मध्य में देवी नाम,

पुन: काली (क्रीं), तीन ठकार (ठ: ठ: ठ:), तुरग (फट्) और वन (स्वाहा) के योग से बाईसअक्षरोंवाला अष्टममन्त्रभेद, जो देवी की प्रसन्नता बढ़ाने वाला भी है, **ॐ क्लीं ऐं सौः ह्रीं क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूँ भुवनेश्वर्यै क्रीं ठः ठः ठः फट् स्वाहा** कहा गया है ॥१०॥

नवममन्त्रभेद

त्रासो माया मन्मथ कूर्च काली
माया लक्ष्मीर्वाग्भवं शक्तिकामाः ।
नामार्णं वै कूर्च फट् नीरमन्ते
भेदः प्रोक्तो नवमो गोपनीयः ॥११॥

नवमभेद—त्रास (ॐ), माया (ह्रीं), मन्मथ (क्लीं), कूर्च (हूँ), काली (क्रीं), माया (ह्रीं), लक्ष्मी (श्रीं), वाग्भव (ऐं), शक्ति (सौः), काम (क्लीं), नाम (भुवनेश्वर्यै), कूर्च (हूँ), फट्, अन्त में नीर (स्वाहा) के योग से उन्नीसअक्षरोंवाला नवममन्त्रभेद **ॐ ह्रीं क्लीं हूँ क्रीं ह्रीं श्रीं ऐं सौः क्लीं भुवनेश्वर्यै हूँ फट् स्वाहा** कहा गया है जो अत्यन्त गोपनीय है ॥११॥

दशममन्त्रभेद

तारं मारं कमला सकला च कूर्चं शून्यं शरदाख्यमीश्वरि ।
तीरनीरमवसानके मनोर्भेद निगदितः दशमस्ते ॥१२॥

दशमभेद—हे ईश्वरि ! तार (ॐ), मार (क्लीं), कमला (श्रीं), सकला (ह्रीं) कूर्च (हूँ), शून्य शरद (हसौः) आरव्य (भुवनेश्वर्यै), तीर (हूँ) और इनके अन्त में नीर (स्वाहा) मिलकर यह चौदहअक्षरों का तुम्हारा दसवाँमन्त्रभेद **ॐ क्लीं श्रीं ह्रीं हूँ हसौः भुवनेश्वर्यै हूँ स्वाहा** कहा गया है ॥१२॥

एकादशमन्त्रभेद

त्र्यक्षं माया मारलक्ष्मी तटञ्च काली-
युग्वाग्भवंवासनाशक्तिनाम ।
काली कूर्चं फट् हरं देवतायाः
मन्त्रःप्रोक्तो देवि चैकादशोऽयम् ॥१३॥

एकादशभेद—हे देवि ! त्र्यक्ष (ॐ), माया (ह्रीं), मार (क्लीं), लक्ष्मी (श्रीं), तट (हूँ), कालीयुग् (क्रीं क्रीं), वाग्भव (ऐं), वासना (ऐं), शक्ति (सौः) नाम (भुवनेश्वर्यै) काली (क्रीं), कूर्च (हूँ), फट्, हर (स्वाहा) कहने पर भुवनेश्वरी देवता का बीसअक्षरोंवाला एकादशमन्त्रभेद **ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं हूँ क्रीं क्रीं ऐं ऐं सौः भुवनेश्वर्यै क्रीं हूँ फट् स्वाहा** कहा गया है ॥१३॥

द्वादशमन्त्रभेद

त्र्यक्षवाग्भवशरत्कमलार्णं कामनाम भुवनेश्वरीन्यसेत्।
तारकूर्चं हरनीरकमन्ते भेद एष गदितस्तुद्वादशः ॥१४॥

द्वादशभेद—त्र्यक्ष (ॐ), वाग्भव (ऐं), शरत् (सौः), कमला (श्रीं), काम (क्लीं), नाम (भुवनेश्वर्यै) रखें तब तार (ॐ), कूर्च (हूँ), हर (फट्) और अन्त में नीर (स्वाहा) रखने से पन्द्रहवर्णोंवाला बारहवाँमन्त्रभेद **ॐ ऐं सौः श्रीं क्लीं भुवनेश्वर्यै ॐ हूँ फट् स्वाहा** कहा गया है ॥१४॥

त्रयोदशमन्त्रभेद

ततः प्रणववाग्भव शरदनङ्गमायारमा,
वियतगताशरत् तटयुगञ्चमध्येऽभिधाम्।
पुनः प्रणववाग्भवंहरवने तव प्रीतये,
त्रयोदशतमो मया निगदितस्तु भेदोत्तमः ॥१५॥

त्रयोदशभेद—प्रणव (ॐ), वाग्भव (ऐं), शरत् (सौः), अनङ्ग (क्लीं), माया (ह्रीं), रमा (श्रीं), वियत् गता शरत् (हसौः) तट युगः (हूँ हूँ) मध्य में नाम (भुवनेश्वर्यै), पुनः ्रणव (ॐ), वाग्भव (ऐं), हर (फट्), वन (स्वाहा) लिखने से उन्नीसवर्णों का त्रयोदशमन्त्रभेद **ॐ ऐं सौः क्लीं ह्रीं श्रीं हसौः हूँ हूँ भुवनेश्वर्यै ॐ ऐं फट् स्वाहा,** आपकी प्रसन्नता के लिए मेरे द्वारा भेदों में उत्तमभेद कहा गया है ॥१५॥

चतुर्दशमन्त्रभेद

तारं शरन्मदनवाग्भवकामराजम्
शक्तिर्वधूस्तटरमा सकला च काली।
मध्येऽभिधां प्रणवकूर्चहरं तथाऽयं,
भेदश्चतुर्दशतमो गदितो भवान्याः ॥१६॥

चतुर्दशभेद—तार (ॐ), शरत् (सौः), मदन (क्लीं), वाग्भव (ऐं), कामराज (क्लीं), शक्ति (सौः), वधू (स्त्रीं), तट् (हूँ), रमा (श्रीं), सकला (ह्रीं), काली (क्रीं) मध्य में अभिधा (भुवनेश्वर्यैः), प्रणव (ॐ), कूर्च (हूँ), हर (फट्) से बना भवानी (भुवनेश्वरी) का १९ वर्णों का चौदहवाँमन्त्रभेद जो **ॐ सौं क्लीं ऐं क्लीं सौः स्त्रीं हूँ श्रीं ह्रीं क्रीं भुवनेश्वर्यै ॐ हूँ फट्** कहा गया है ॥१६॥

इति श्रीभुवनेश्वर्याः सर्वतन्त्रेषु गोपिताः।
चतुर्दश मया भेदाः कथिताः परमेश्वरि ॥१७॥

हे परमेश्वरि ! इस प्रकार सभी तन्त्रों में गोपित (गुप्तरूप से स्थापित), श्री भुवनेश्वरीदेवी के चौदहमन्त्रभेद तुमसे कहे गये हैं ।।१७।।

एतेषां देवदेवेशि ऋष्यादि पूर्ववत्स्मृतम् ।।१८।।

हे देवताओं की देवेशि ! इन (उपर्युक्त सभी मन्त्रभेदों) के ऋषि आदि पूर्ववत् (एकाक्षरी विद्या के समान ही) मेरे द्वारा कहे गये हैं ।।१८।।

इदं रहस्यं परमं भक्त्या तव मयोदितम् ।
सर्वस्वं भुवनेश्वर्याः गोपनीयम् प्रयत्नतः ।।१९।।

इति भुवनेश्वरीरहस्ये चतुर्दशभेदात्मकमन्त्रनिरूपणनाम द्वितीयपटलः ।।२।।

यह ज्ञान जो भुवनेश्वरी देवी का सर्वस्व है तथा परमरहस्य है, इसी कारण से प्रयत्नपूर्वक गुप्त रखने योग्य है तो भी तुम्हारी भक्ति के कारण मेरे द्वारा तुम्हारे प्रति प्रकट किया गया है ।।१९।।

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के चतुर्दशभेदात्मकमन्त्रनिरूपण नामक द्वितीयपटल की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ।।२।।



तृतीयपटलः

मन्त्रकथन

भैरव उवाच

ॐ श्रृणुदेवि प्रवक्ष्यामि भेदानन्यान्महेश्वरि ;
एकादिषोड़शार्णान्तान्सर्वकामार्थसिद्धिदान् ।
प्रयोगसहितान् देवि! भुवनेशीप्रियात्प्रियम् ।।१।।

श्रीभैरव बोले—हे देवि ! हे महेश्वरि ! अब मैं पूर्ववर्णित मन्त्रभेदों के अतिरिक्त अन्य मन्त्रभेदों को कहूँगा जो एक से १६ अक्षर तक के हैं तथा सभी प्रकार के काम और अर्थों की सिद्धिप्रदान करते हैं एवं भुवनेश्वरी को प्रिय से भी प्रिय हैं, उन्हें मैं प्रयोग के सहित कहूँगा ।।१।।

एकाक्षरी विद्याविधिः

रवौ नन्ददिने मन्त्री प्राङ्मुखः साधकोत्तमः ।
एकाक्षरीं जपेद्विद्यां धर्मकामार्थसिद्धये ।।२।।

उत्तममन्त्रसाधक, नन्दा (प्रतिपद्) युक्त रविवार को पूर्वाभिमुख बैठकर धर्म, अर्थ और काम की सिद्धि हेतु एकाक्षरीविद्या का जप करे ।।२।।

हकारो वह्निसंयुक्तो वामनेत्रेन्दु संयुतः ।
ततोऽभिधां नमः प्रान्ते प्रोक्तेयेमेकवर्णिका ।।३।।

यह एकाक्षरी विद्या ह्रीं, वह्नि (र) से संयुक्त, वामनेत्र (ई), इन्दु (चन्द्रबिन्दु) से युक्त हकार (ह्रीं), तब अमिधा (देवी नाम) भुवनेश्वर्यै, अन्त में नमः के योग से बनी **ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः** कही जाती है ।।३।।

द्वयक्षरीविद्या

आग्नेयाभिमुखो भूत्वा चन्द्रे भद्रादिने शुभे ।
द्वयक्षरीं साधको जप्त्वा सर्वान्कामानवाप्नुयात् ।।४।।

शुभ चन्द्रवासरीय भद्रा (द्वितीया) तिथि को आग्नेयदिशा में मुख कर साधक द्वयक्षरी विद्या का जप कर सभी कामनाओं को प्राप्त करता है ।।४।।

लक्ष्मीं मायां महादेवि ततो नाम वदेत्ततः ।
नतिरियं महेशानि द्व्यक्षरी परिकीर्त्तिता ॥५॥

हे महादेवि ! हे महेशानि ! लक्ष्मी (श्रीं), माया (ह्रीं) तब नाम (भुवनेश्वर्यै) कहना चाहिए अन्त में नति (नमः) के योग से बना मन्त्र **श्रीं ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः द्व्यक्षरी विद्या** कहा जाता है ॥५॥

त्र्यक्षरीविद्या

दक्षिणाभिमुखो भूत्वा भौमे जयाह्नि साधकः ।
त्र्यक्षरीं प्रजपेद् भक्त्या सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥६॥

साधक, जया (तृतीया) युक्त, मङ्गलवार को दक्षिणाभिमुख होकर भक्तिपूर्वक त्र्यक्षरीविद्या का जप करे तो वह सभी कामनाओं को प्राप्त कर लेता है ॥६॥

तारं रमाकामराजो ङेऽन्तं नाम समुद्धरेत् ।
प्रान्ते नतिः समाख्याता त्र्यक्षरीयं महेश्वरि ॥७॥

हे महेश्वरि ! तार (ॐ), रमा (श्रीं), कामराज (क्लीं) कहकर चतुर्थ्यन्त देवी नाम (भुवनेश्वर्यै) कहे, अन्त में नति (नमः) के योग से त्र्यक्षरीविद्या **ॐ श्रीं क्लीं भुवनेश्वर्यैनमः** कही गई है ॥७॥

चतुरक्षरीविद्या

नैर्ऋत्याभिमुखो भूत्वा चतुर्थ्यां सौम्यवासरे ।
चतुर्वर्णात्मिकां विद्यां जपेन्मन्त्री स्वशक्तितः ॥८॥

चतुर्थीयुक्त बुधवार को नैर्ऋत्यकोण में मुख कर मन्त्रसाधक, अपनी सामर्थ्य के अनुसार चतुरक्षरीविद्या का जप करे ॥८॥

प्रणवञ्च तथा माया कमलामन्मथस्तथा ।
अन्ते विश्वं नाम मध्ये विदध्याञ्च सुरेश्वरि ॥९॥

हे सुरेश्वरि! प्रणव (ॐ), माया (ह्रीं), कमला (श्रीं), मन्मथ (क्लीं) के साथ अन्त में विश्व (नमः) तथा मध्य में नाम (भुवनेश्वर्यै) कहने से चतुरक्षरीविद्या **ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं भुवनेश्वर्यै नमः** जाननी चाहिए ॥९॥

पञ्चाक्षरीविद्या

पश्चिमाभिमुखो भूत्वा पञ्चम्यां गुरुवासरे ।
पञ्चाक्षरीं जपेन् मन्त्री कलावीप्सितदायिनीम् ॥१०॥

पञ्चमीतिथियुक्त गुरुवार को पश्चिमाभिमुख होकर, मन्त्री (मन्त्र साधक), यदि

पञ्चाक्षरीविद्या का जप करे तो यह विद्या कलियुग में सभी प्रकार का इच्छितफल देने वाली होती है ।।१०।।

तारं लक्ष्मीं वाग्भवं कामो मायाभिधा तथा ।
ङेन्तानतिरियं प्रोक्ता देवि पञ्चाक्षरी मया ।।११।।

हे देवि! मेरे द्वारा तार (ॐ), लक्ष्मी (श्रीं), वाग्भव (ऐं), काम (क्लीं), माया (ह्रीं) ङेन्त (चतुर्थ्यन्त) नाम (भुवनेश्वर्यै) अन्त में नति (नमः) के प्रयोग से बनी, पञ्चाक्षरीविद्या **ॐ श्रीं ऐं क्लीं ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः** कही गई है ।।११।।

षडक्षरीविद्या

वायव्याभिमुखो भूत्वा शुक्रे षष्ठ्यां सुरेश्वरि ।
षष्ठाक्षरीं महाविद्यां प्रजपेत्साधकोत्तमः ।।१२।।

हे सुरेश्वरि ! उत्तमसाधक षष्ठीतिथियुक्त शुक्रवार को वायव्यदिशा में मुख कर षडाक्षरीमहाविद्या का जप करे ।।१२।।

तारं लक्ष्मीः पराकामो वाग्भवं शक्तिरेव च ।
अभिधानतिसंयुक्ता प्रोक्ता षष्ठाक्षरी परा ।।१३।।

तार (ॐ), लक्ष्मी (श्रीं), परा (ह्रीं), काम (क्लीं), वाग्भव (ऐं), शक्ति (सौः), अभिधा (भुवनेश्वर्यै), नति (नमः) संयुक्त रूप से श्रेष्ठ षडाक्षरीविद्या **ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः भुवनेश्वर्यै नमः** कही गई है ।।१३।।

सप्ताक्षरीविद्या

उत्तराभिमुखो भूत्वा सप्तम्यां शनिवासरे ।
सप्ताक्षरीमिमां विद्यां प्रजपेत्साधकोत्तमः ।।१४।।

उत्तमसाधक उत्तराभिमुख होकर शनिवासरी सप्तमी तिथि को इस सप्ताक्षरी-विद्या का जप करे ।।१४।।

प्रणवं कमला माया कामो वाग्भव एव च ।
शक्तिर्मायाभिधाप्रान्ते नतिः सप्ताक्षरी मता ।।१५।।

प्रणव (ॐ), कमला (श्रीं), माया (ह्रीं), काम (क्लीं), वाग्भव (ऐं), शक्ति (सौः), माया (ह्रीं), अभिधा (भुवनेश्वर्यै) अन्त में नमः संयुक्तरूप से सप्ताक्षरीविद्या **ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः** कही गई है ।।१५।।

अष्टाक्षरीविद्या

ईशानाभिमुखो भूत्वा अष्टम्यां रविवासरे ।
अष्टाक्षरीं महाविद्यां प्रजपेत् साधकोत्तमः ।।१६।।

उत्तमसाधक ईशानाभिमुखहोकर रविवासरीय अष्टमी को अष्टाक्षरीमहाविद्या का भलीभांति जप करे ॥१६॥

तारं लक्ष्मीः पराकामो वाग्भवशक्तिरेव च ।
कामोमायाभिधा प्रान्ते नतिरष्टाक्षरी मता ॥१७॥

तार (ॐ), लक्ष्मी (श्रीं), परा (ह्रीं), काम (क्लीं), वाग्भव (ऐं), शक्ति (सौः), काम (क्लीं), माया (ह्रीं) तब अभिधा (भुवनेश्वर्यै) और अन्त में नमः के योग से अष्टाक्षरीविद्या **ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः क्लीं ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः** कही गई है ॥१७॥

नवाक्षरीविद्या

प्राङ्मुखस्तु पुनर्भूत्वा नवम्यां चन्द्रवासरे ।
देवीं नवाक्षरीं जप्त्वा लभते सिद्धिमुत्तमाम् ॥१८॥

साधक पुनः पूर्वाभिमुख होकर सोमवासरीय नवमीतिथि को नवाक्षरीदेवी (विद्या) का जप कर उत्तम सिद्धि प्राप्त करता है। (यहाँ तक आठ दिशाओं में आठ प्रकार के मन्त्रजपनिर्देश के पश्चात् शेष के लिए पुनः पूर्वादि दिशा में मुख करने का निर्देश करते हैं। इसीलिये यहाँ पुनः शब्द का प्रयोग किया गया है।) ॥१८॥

तारं लक्ष्मीः पराकामो वाक्कामो शक्तिरेव च ।
वाक्शक्तिरभिधाविश्वं सम्प्रोक्तेयं नवाक्षरी ॥१९॥

तार (ॐ), लक्ष्मी (श्रीं), परा (ह्रीं), काम (क्लीं), वाक् (ऐं), काम (क्लीं), शक्ति (सौः), वाक् (ऐं), शक्ति (सौः) अभिधा (भुवनेश्वर्यै), विश्व (नमः) संयुक्तरूप से नवाक्षरीविद्या **ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं क्लीं सौः ऐं सौः भुवनेश्वर्यै नमः** कही गई है ॥१९॥

दशाक्षरीविद्या

दशम्यामग्निकोणस्थो मङ्गले साधको जपेत् ।
दशाक्षरीं महाविद्यां साक्षाद्ब्रह्मस्वरूपिणीम् ॥२०॥

साधक मङ्गलवारयुक्त दशमीतिथि को अग्निकोण में मुख कर, साक्षात् ब्रह्मस्वरूपिणी दशाक्षरीमहाविद्या का जप करे ॥२०॥

प्रणवं सकला लक्ष्मीः कामोवाक्शक्ति कालिके ।
कूर्चमायाद्वयं नाम विश्वप्रोक्ता दशाक्षरी ॥२१॥

प्रणव (ॐ), सकला (ह्रीं), लक्ष्मी (श्रीं), काम (क्लीं), वाक (ऐं), शक्ति (सौः), कालिका (क्रीं), कूर्च (हूँ), मायाद्वय (ह्रीं ह्रीं) बीजाक्षरों, तत्पश्चात् नाम

(भुवनेश्वर्यै) अन्त में विश्व (नमः) संयुक्तरूप से दशाक्षरीविद्या **ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं सौः क्रीं हूं ह्रीं ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः** कही गई है ॥२१॥

एकादशाक्षरीविद्या

एकादश्यां बुधदिने दक्षिणाभिमुखो नरः।
एकादशाक्षरीं विद्यां प्रजपेद् भक्तिपूर्वकम् ॥२२॥

मनुष्य (साधक) को एकादशीयुक्त बुधवार को दक्षिणाभिमुख होकर, भक्तिपूर्वक एकादशाक्षरीविद्या का जप करना चाहिए ॥२२॥

तारं माया रमा कामो वाक्शक्तिकामवाग्भवाः।
शक्तिर्माया कला नाम विश्वमेकादशाक्षरी ॥२३॥

तार (ॐ), माया (ह्रीं), रमा (श्रीं), काम (क्लीं), वाक् (ऐं), शक्ति (सौः), काम (क्लीं), वाग्भव (ऐं), शक्ति (सौः), माया (ह्रीं), कला (ह्रीं), तब नाम (भुवनेश्वर्यै) अन्त में विश्व (नमः) के योग से एकादशाक्षरीविद्या—**ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं सौः क्लीं ऐं सौः ह्रीं ह्रीं भुवनेश्वर्यैनमः** बनती है ॥२३॥

द्वादशाक्षरीविद्या

नैर्ऋत्याभिमुखो भूत्वा द्वादश्यां गुरुवासरे।
साधकः प्रजपेद् विद्यां द्वादशाक्षररूपिणीम् ॥२४॥

साधक द्वादशीतिथियुक्त गुरुवार को नैर्ऋत्यामिमुख हो द्वादशाक्षरमयी इस विद्या का भलीभाँति जप करे ॥२४॥

तारद्वयं परायुग्मं लक्ष्मीयुगलमेव च।
कामे वाग्भवशक्ति सर्वयुगलमेवच ॥
नाम ङेन्तं विश्वमन्ते प्रोक्तेयं द्वादशाक्षरी।
सर्वकामप्रदादेवि सर्वदुःखनिवारिणी ॥२५॥

हे देवि! तारद्वय (ॐ ॐ), परायुग्म (ह्रीं ह्रीं), लक्ष्मीयुगल (श्रीं श्रीं), तथा काम (क्लीं), वाग्भव (ऐं), शक्ति (सौः), ये सब दो दो की संख्या में तत्पश्चात् चतुर्थ्यन्त नाम (भुवनेश्वर्यै) अन्त में विश्व (नमः) से युक्त द्वादशाक्षरीविद्या **ॐ ॐ ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं क्लीं क्लीं ऐं ऐं सौः सौः भुवनेश्वर्यै नमः** कही कई है। यह सभी कामनाओं को प्रदान करने तथा सब प्रकार के दुःखों का निवारण करनेवाली विद्या है ॥२५॥

त्रयोदशाक्षरी विद्या

पश्चिमाभिमुखो भूत्वा त्रयोदश्यां कवेर्दिने।
साधको देवतां ध्यात्वा जपेत् त्रयोदशाक्षरीम् ॥२६॥

साधक त्रयोदशीयुक्त, शुक्रवार के दिन, देवता (भुवनेश्वरी देवी) का ध्यान करता हुआ पश्चिमाभिमुखहोकर त्रयोदशाक्षरीविद्या का जप करे ।।२६।।

प्रणवं शिववह्नी च द्वितीयस्वरसंयुते ।
बिन्दुयुक्ते कालिका च मायाश्रीवाक् शरस्तथा ।।
कामोरमा परावाणी शक्तिः कामोऽभिधा ततः ।
ङेऽन्ता विश्वं समाख्याता कामोत्र्योदशाक्षरी ।।२७।।

प्रणव (ॐ), द्वितीयस्वर तथा बिन्दुयुक्त शिववह्नि (ह्रीं), कालिका (क्रीं), माया (ह्रीं), श्री (श्रीं), वाक् (ऐं), शरत् (सौः), काम (क्लीं), रमा (श्रीं), परा (ह्रीं), वाणी (ऐं), शक्ति (सौः), काम (क्लीं), तब चतुर्थ्यन्तनाम (भुवनेश्वर्यै) और अन्त में विश्व (नमः) यह त्रयोदशाक्षरीविद्या **ॐ ह्रीं क्रीं ह्रीं श्रीं ऐं सौः क्लीं श्रीं ह्रीं ऐं सौः क्लीं भुवनेश्वर्यै नमः** कही गई है ।।२७।।

उत्तराभिमुखो भूत्वा साधकः शनिवासरे ।
चतुर्दशात्मिकां विद्यां जपेत्साधकसिद्धिदाम् ।।२८।।

उत्तमसाधक, चतुर्दशीतिथि को जब शनिवार हो तो उत्तराभिमुख हो इस चौदहवर्णोवाली विद्या का जप करे ।।२८।।

तारद्वयं कामयुग्मं शक्तिद्वन्दं रमायुगम्;
वाग्युगं शक्तियुगं च मायायुग्मं तथैव च ।
नामङेन्तश्च विश्वश्च प्रोक्ता चतुर्दशात्मिका ।।२९।।

तार (ॐ), काम (क्लीं), शक्ति (सौः), रमा (श्रीं), वाग् (ऐं), शक्ति (सौः), माया (ह्रीं), दो-दो की संख्या में क्रमशः मिलने पर तथा नाम (भुवनेश्वर्यै) अन्त में विश्व (नमः) के योग से चतुर्दशाक्षरी विद्या **ॐ ॐ क्लीं क्लीं सौः सौः श्रीं श्रीं ऐं ऐं सौः सौः ह्रीं ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः** कही गई है ।।२९।।

अमायां पूर्णिमायाश्च जपेत्पञ्चदशाक्षरीम् ।
ईशानाभिमुखो भूत्वा रविवारे च साधकः ।।३०।।

साधक अमावस्या और पूर्णिमा तिथियों से युक्त रविवार को ईशानकोण में मुख कर पञ्चदशाक्षरीविद्या का जप करे ।।३०।।

तारं रमा प्रणवो लक्ष्मीर्माया वाक् कला तथा ।
वाणीकामौ शक्तिकामौ शक्तिः कालीयुगं परा ।
नामङेन्तन्नमो देवि प्रोक्ता पञ्चदशाक्षरी ।।३१।।

तार (ॐ), रमा (श्रीं), प्रणव (ॐ), लक्ष्मी (श्रीं), माया (ह्रीं) वाक् (ऐं),

कला (ह्लीं), वाणी (ऐं), काम (क्लीं), शक्ति (सौंः), काम (क्लीं), शक्ति (सौंः), कालीयुग (क्रीं क्रीं), परा (ह्लीं), चतुर्थ्यन्त नाम (भुवनेश्वर्यै) और अन्त में नमः संयुक्त हो पञ्चदशाक्षरीविद्या, **ॐ श्रीं ॐ श्रीं ह्लीं ऐं ह्लीं ऐं क्लीं सौंः क्लीं सौंः क्रीं क्रीं ह्लीं भुवनेश्वर्यै नमः** कही गई है ॥३१॥

षोडशाक्षरीविद्या

विद्यां यो जपते भूमाविमाञ्च षोडशात्मिकाम्।
तस्य देवि कलौ देवी स्वपदं भुवि दास्यति ॥३२॥

हे देवि ! इस कलिकाल में पृथ्वी पर जो इस षोडशात्मिकाविद्या का जप करता है उसे देवी अपना पद (धाम) प्रदान करती हैं। यहाँ षोडशाक्षरीविद्या हेतु किसी तिथिवार या दिशा का निर्देश नहीं है अतः सामान्यतः यह समझा जा सकता है कि यह सर्वदा एवं सर्वत्र जपी जा सकती है। अथवा तिथिक्रम में पूर्णिमा पन्द्रहवीं तथा अमावस्या सोलहवीं कला या तिथि का सूचक है। ऐसी दशा में इस षोडशाक्षरी विद्या की साधना अमावस्यातिथि चन्द्रवार को पूर्वाभिमुख होकर की जा सकती है। यद्यपि प्रस्तुत ग्रन्थ में मन्त्रोंद्धार के पश्चात् इस षोडशाक्षरी विद्या को **सर्वदिनेषु इयं षोडशाक्षरी पठनीया** लिखकर सभी दिन पढ़ने का निर्देश भी किया गया है ॥३२॥

प्रणवं सकला लक्ष्मीमारो वाग्भवशक्तिके।
प्रासादः प्रणवश्चैव प्रासादशक्तिवाग्भवाः ॥३३॥
कामोरमासकलातारं मायानामनतिस्तथा।
महादेवि गुह्यतरा प्रोक्तेयं षोडशाक्षरी ॥३४॥
सर्वदिनेषु इयं षोडशाक्षरी पठनीया।

हे महादेवि ! प्रणव (ॐ), सकला (ह्लीं), लक्ष्मी (श्रीं), मार (क्लीं), वाग्भव (ऐं), शक्तिका (सौंः), प्रासाद (हसौं), प्रणव (ॐ), प्रासाद (हसौं) शक्ति (सौंः), वाग्भव (ऐं), काम (क्लीं), रमा (श्रीं), सकला (ह्लीं), तार (ॐ), माया (ह्लीं) (भुवनेश्वर्यै), तब नति (नमः) के योग से बनी यह षोडशाक्षरीविद्या **ॐ ह्लीं श्रीं क्लीं ऐं सौंः ह्सौं ॐ हसौं सौंः ऐं क्लीं श्रीं ह्लीं ॐ ह्लीं भुवनेश्वर्यै नमः** अन्य सभी विद्याओं से अधिक गुह्य (गोपनीय) कही गई है। इस षोडशाक्षरीविद्या का प्रत्येक दिन अभ्यास करे ॥३३-३४॥

राज्यं देयं शिरो देयं न देया भुवनेश्वरी।
भुक्तिमुक्तिप्रदातस्य षोडशी भुवनेश्वरी ॥३५॥

साधक को चाहिए कि वह अपना राज्य और शिर भी दे दे किन्तु (अपात्र) को

यह भुवनेश्वरी विद्या न दे। यह षोडशाक्षरी भुवनेश्वरीविद्या उस (साधक) को भोग और मोक्ष दोनों ही देने वाली है ॥३५॥

इत्येवं पटलो देवि गुह्याद् गुह्यतरोमतः।
अभक्ताय न दातव्यो गोपनीयः स्वयोनिवत् ॥३६॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये मन्त्रकथननाम तृतीयपटलः ॥३॥

हे देवि! यह पटल, गोपनीय से भी गोपनीय कहा गया है। इसे किसी अभक्त को नहीं देना चाहिए अपितु अपनी योनि के समान इसे गुप्त रखना चाहिए। यहाँ अभक्त शब्द, देवता, विद्या और गुरु तीनों में से किसी में भी भक्ति न रखने वाले के लिए प्रयुक्त हुआ है ॥३६॥

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के मन्त्रकथन नामक तृतीयपटल
की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ।।३।।



चतुर्थपटलः

तत्त्वविद्याप्रकाश

श्रीदेव्युवाच

देवदेवमहेशान दयात्रैगुण्यमानस ।
श्रीदेव्या भुवनेश्वर्यास्तत्त्वविद्यां ब्रवीषि मे ॥१॥

श्रीदेवी बोलीं—हे देवों के देव ! हे महेशान ! आपका मानस सत्त्वादि त्रैगुण्य से पूरित होते हुए भी दयाभरित है । अतः आप मेरे प्रति दया करके श्रीभुवनेश्वरीदेवी की तत्त्वविद्या को मुझे बताइये ॥१॥

श्रीभैरवउवाच

तत्त्वविद्यां ब्रवीम्यद्य तव भक्तया वरानने ।
कलावीप्सित दात्रीयं न कस्य कथिता मया ॥२॥

श्रीभैरव बोले—हे श्रेष्ठ मुखवाली देवि ! आज मैं तुम्हारी भक्ति से संतुष्ट हो, तुमसे (तुम्हारे द्वारा) पूछी गई तत्त्वविद्या को कहता हूँ । यह विद्या कलियुग में साधकों को इच्छितफल देने वाली है । अब तक यह मेरे द्वारा किसी से भी नहीं कही गई है ॥२॥

एकाक्षरीति विख्याता भुवने भुवनेश्वरी ।
अत ऊर्ध्वं पर बीजं तत्त्वरूपं न विद्यते ॥
परन्तु तव भक्त्याद्य तत्त्वविद्यां ब्रवीम्यहम् ॥३॥

चौदहोंभुवन में भुवनेश्वरी इसी एकाक्षरी बीजमन्त्र के रूप में ख्यात हैं । इससे ऊपर (श्रेष्ठ) तत्त्वरूपमें कोई अन्य बीजमन्त्र नहीं है । परन्तु आज मैं उसे भी तुम्हारी भक्ति के कारण ही तुमसे कहता हूँ ॥३॥

श्रुत्वा परस्मै नो वाच्या तत्त्वविद्या सुरेश्वरी ।
चेद्वदिष्यसि देवेशि न तत्फलमवाप्स्यसि ॥४॥

हे सुरेश्वरि! इस तत्त्वविद्या को सुनकर अन्य (अनाधिकारी) के प्रति नहीं कहना चाहिए । हे देवेशि ! यदि तुम इसका उल्लंघन कर इसे कहोगी तो इस विद्या का फल नहीं प्राप्त कर सकोगी ॥४॥

चन्द्रशक्तिः पराबीजं तथैव तत्त्वरूपिणी ।
मायाबीजं समुद्धृत्य सकलागमनिश्चिता ।।५।।
ततश्च साधको दद्यात्तथैव भुवनेश्वरि ।
मायाबीजं समुद्धृत्य तत्त्वविद्येयमाहृता ।।६।।

साधक चन्द्र (ऐं), शक्ति (सौः), पराबीज (ह्रीं) उसी क्रम में तत्त्वरूपिणी शब्द तब माया बीज (ह्रीं) तत्पश्चात् भुवनेश्वरि शब्द देकर अन्त में पुनः मायाबीज (ह्रीं) का प्रयोग करे तो ऐसा करने से ऐं सौः ह्रीं तत्त्वरूपिणी ह्रीं भुवनेश्वरि ह्रीं यह सभी आगमों का द्वारा निश्चित की गई भुवनेश्वरी तत्त्वविद्या कही गई है ।।५-६।।

अस्य श्री भुवनेश्वर्यास्तत्त्वविद्यामनोस्मृतः ।
भैरवो ऋषिराख्यातश्छन्दोनुष्टुप्प्रकीर्तितः ।।७।।
श्रीतत्त्वरूपिणी देवी भुवनेशी प्रकीर्तिता ।
देवता चैव ह्रीं बीजं हूं शक्तिः समुदीरिता ।।८।।
हः कीलकं महादेवि प्रोक्तं च वीरसाधने ।
विनियोगः स्मृतो देवि तत्त्वविद्या जपस्य वै ।।९।।
ह्रामित्यादि चरेन्न्यासं हृदयादि षडङ्गकम् ।।१०।।

हे महादेवि ! उपर्युक्त मन्त्र श्री भुवनेश्वरी तत्त्वविद्यामन्त्र कहा गया है । इसके ऋषि भैरव, छन्द अनुष्टुप्, देवता श्रीतत्त्वरूपिणी देवी भुवनेशी (भुवनेश्वरी), बीज ह्रीं, शक्ति हूँ, कीलक हः और वीरसाधन में विनियोग कहा गया है । इस तत्त्वविद्या के जप के समय ॐ अस्य श्री भुवनेश्वरीतत्त्वविद्यामन्त्रस्य भैरवऋषिः अनुष्टुप् छन्दः श्री तत्त्वरूपिणी-भुवनेश्वरी देवता ह्रीं बीजं हूँ शक्तिः हः कीलकम् वीर साधने विनियोगः पढ़कर जल गिराते हुये विनियोग करना चाहिए । विनियोग के उपरान्त ह्रां इत्यादि षड्दीर्घों से हृदयादि-अङ्गन्यास एवं करन्यास्यादिक का साधक आचरण करे ।।७-१०।।

अन्यां देवि प्रवक्ष्यामि तत्त्वविद्यां महेश्वरि ।।
दण्डिकेश्वर शरत्परास्ततो देविनाम भुवनेश्वरीकृशा ।
तत्त्वरूपिणि पराक्षरं शिवे तत्त्वमूलकमनुस्थिति संख्यः ।।११।।

हे देवि ! हे महेश्वरि ! पूर्वोक्त तत्त्वविद्या के अतिरिक्त मैं अब अन्य तत्त्वविद्या तुमसे कहता हूँ—हे शिवे ! दण्डिकेश्वर (हसौं), शरत् (सौः), परा (ह्रीं) तब देवी का नाम (भुवनेश्वरी), कृशा (ह्रीं), तत्त्वरूपिणी, पराक्षर (ह्रीं), **हसौः सौः ह्रीं भुवनेश्वरी ह्रीं तत्त्वरूपिणि ह्रीं** यह तिथिसंख्यक पन्द्रहवर्णोंवाली द्वितीयतत्त्वमूलकविद्या है ।।११।।

अस्याः ध्यानं प्रवक्ष्यामि सर्वैः ज्ञातं सुरेश्वरैः ॥१२॥

अब मैं तुमसे इस तत्त्वविद्या का वह ध्यान कहता हूँ जो सभी श्रेष्ठ देवों को ज्ञात है ॥१२॥

ध्यानम्

स्मरेद्रवीन्द्वग्निविलोचनां तां,
सत्पुस्तकं जाप्यवटीं दधानाम् ॥
सिंहासनां मध्यमपत्रसंस्थां,
श्रीतत्त्वविद्यां परमां भजामि ॥१३॥

जो रवि, चन्द्र, अग्नि रूपी तीन नेत्रों को धारण करने वाली, अपने हाथ में सत्पुस्तक (वेद) तथा जपवटी (जपमाला) को धारण की हुई, सिंहासन पर स्थित, मध्यम (कमल) पत्र पर विराजमान हैं, मैं ऐसी श्रेष्ठ विद्या का भजन, स्मरण करता हूँ। इस विद्या के आराधक साधक को ऐसा ध्यान करना चाहिए ॥१३॥

तत्त्वविद्येयमाख्याता मया पञ्चदशाक्षरी ।
राज्यं देयं शिरो देयं न देया भुवनेश्वरी ॥१४॥

हे देवि ! यह मेरे द्वारा पन्द्रहअक्षरोंवाली जो तत्त्वविद्या कही गई है, राज्य दे दे, शिर दे दे किन्तु इस भुवनेश्वरीविद्या को किसी अपात्र, अयोग्य साधक को न देनी चाहिए। (पुस्तक पढ़कर ली गई विद्या, साधना के क्षेत्र में कोई महत्त्व नहीं रखती, अतः निश्चितरूप से गुरुत्व को प्राप्त विद्वानों के लिए ही यह शास्त्र है) ॥१४॥

अस्याः श्रीतत्त्वविद्याया न विघ्नो न च दूषकः ।
अन्या दोषा न विज्ञेया उत्कीलनादि कर्मणाम् ॥
बिना देवि महेशानि पुरश्चरणकर्मणा ॥१५॥

हे देवि ! हे महेशानि ! इस श्री तत्त्वविद्या के पुरश्चरणकर्म में न तो कोई विघ्न है और न मन्त्रसम्बन्धी कोई अन्य दोष, अतः इसकी साधना में, किन्हीं अन्य दोषों की चिन्ता या उत्कीलन आदि कर्मों के बिना ही इस विद्या का पुरश्चरण कियाजाना चाहिए ॥१५॥

पञ्चदश च लक्षाणि सहस्राणि तथैव च ।
अस्याः श्रीतत्त्वविद्यायाः पुरश्चरणमुच्यते ॥१६॥

यह पन्द्रहअक्षरों वाली विद्या है। इस तत्त्वविद्या का पन्द्रहलाख और उतने ही हजार मन्त्रजप से पुरश्चरण कहा जाता है ॥१६॥

नातः परतराविद्याप्यन्या कास्ति महीतले ।
विख्याता तत्त्वविद्येयं प्रभावसहिता कलौ ॥१७॥

इससे अधिक श्रेष्ठ कोई अन्य विद्या (शक्तिमन्त्र), पृथ्वी पर नहीं है । यह तत्त्वविद्या कलियुग में प्रसिद्ध और प्रभावशालिनी भी है ॥१७॥

श्रीदेव्युवाच

क्रीतास्मि भवता शम्भो विद्यायाः कथनेन च ।
धन्यास्मिकृतकृत्यास्मि प्रसादात्तवशङ्कर ॥१८॥

श्रीदेवी बोलीं—हे शम्भो ! आपके द्वारा इस विद्या के कहे जाने से मैं मानों आपके द्वारा क्रीत की गई सी हो गई हूँ । हे शङ्कर ! विद्याश्रवण कराने के रूप में आपने जो मेरे पर कृपा की है, उससे मैं धन्य और कृतकृत्य हो गई हूँ ॥१८॥

श्रीभैरवउवाच

इत्येषः पटलो देवि तत्त्वविद्याप्रकाशकः ।
न देयः कस्यचिद्देवि गोपनीयः प्रयत्नतः ॥१९॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये तत्त्वविद्याप्रकाशनाम चतुर्थोपटलः ॥४॥

श्रीभैरव बोले—हे देवि ! यह तत्त्वविद्याप्रकाशक पटल है । इसे जिस किसी (अयोग्य) को नहीं देना चाहिए । सभी प्रकार के प्रयत्नों से इसकी गोपनीयता बनाए रखनी चाहिए ॥१९॥

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के तत्त्वविद्याप्रकाश नामक चतुर्थपटल की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ।।४।।



पञ्चमपटलः

पूजापटल

श्रीदेव्युवाच

देवदेव महादेव यद्यहं प्रेयसी तव।
पटलं भुवनेश्वर्याः पूजायाः मे प्रकाशय ॥१॥

श्रीदेवी बोलीं—हे देवों के देव ! हे महादेव ! यदि मैं, आपकी प्रेयसी हूँ तो आप मुझे भुवनेश्वरी देवी के पूजापटल को प्रकाशित कीजिये ॥१॥

श्रीभैरवउवाच

अथातः संप्रवक्ष्यामि देवि गुह्यतमोत्तमः।
येन विज्ञानमात्रेण साधको भैरवो भवेत् ॥२॥

श्रीभैरव बोले—हे देवि ! अब अत्यन्तगुप्त और उत्तम उस भुवनेश्वरीपूजा-पटलको कहता हूँ जिसके ज्ञान मात्र से ही साधक साक्षात्भैरव हो जाता है ॥२॥

एकाक्षरी महाविद्या श्रीविद्याभुवनेश्वरी।
चतुर्दशात्मिका देवि तथा च षोडशात्मिका ॥३॥
तत्त्वविद्यात्मिका देवि महारत्नेश्वरी ि च।
विद्येयं भुवनेश्वर्याः प्रभावसहिता कलौ ॥४॥

हे देवि ! भुवनेश्वरी की एकाक्षरी महाविद्या, श्रीविद्या, भुवनेश्वरीविद्या, चतुर्दशात्मिका, षोडशात्मिका, तत्त्वविद्यात्मिका विद्याएँ, कलियुग में विशेष प्रभाव-शालिनी कही गई हैं ॥३-४॥

विद्यासाधनाफलनिरूपण

स्वर्गभोगप्रदाचैव राज्यभोगप्रदा तथा।
सकृदुच्चरिताविद्या ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥५॥

ये विद्याएँ स्वर्ग का भोग तथा राज्यभोग प्रदान करने वाली हैं। यह भुवनेश्वरीविद्या एक बार भी उच्चारण कियेजाने पर ब्रह्महत्या के पाप को नष्ट कर देती है ॥५॥

सर्वसौख्यप्रदादेवि लोके सौभाग्यदायिनी ।
अस्याः स्मरणमात्रेण सिद्धयोऽष्टौ करेस्थिता ॥६॥

हे देवि ! यह लोक में सभीप्रकारका सौख्यएवं सौभाग्य प्रदान करने वाली विद्या है । इसके स्मरणमात्र से ही अणिमादि आठो सिद्धियाँ साधक को हस्तगत हो जाती हैं ॥६॥

दुर्भगा सुभगानूनं दुःखिता सुखिता भवेत् ।
वन्ध्यापि लभते पुत्रं स्ववंशपरिवर्द्धनम् ॥७॥

इसकी साधना से दुर्भाग्यशालिनीस्त्री निश्चित ही सौभाग्यशालिनी, दुःखिता-सुखिता हो जाती है। वन्ध्यास्त्री भी पुत्र प्राप्त कर अपने वंश का विस्तार प्राप्त करती है ॥७॥

निर्धनो धनमाप्नोति मूकोवाचमवाप्नुयात् ।
मूर्खोपियाति चैतन्यं सुविद्यात्वमवाप्नुयात् ॥८॥
यां यां प्रार्थयते सिद्धिं हठात् तां समाप्नुयात् ॥९॥

इसकी आराधना से निर्धन धन प्राप्त करता है। मूक (वाक्शक्तिहीन) पुरुष भी वाणी को प्राप्त कर लेता है । मूर्ख भी चैतन्यता को प्राप्त कर लेता है साथ ही वह सुविद्यात्व को भी प्राप्त कर लेता है । वह जिन-जिन सिद्धियों की प्रार्थना (आकांक्षा) करता है, वह उन्हें हठात् भली-भाँति प्राप्त कर लेता है ॥८-९॥

देवि सिद्धिर्भवेत्पुंसां जरामरणवर्जिता ।
विधानञ्च प्रवक्ष्यामि शृणु देवि यथाक्रमम् ॥१०॥

हे देवि ! इस विद्या के साधकपुरुष को जरामरण से रहित सिद्धि प्राप्त होती है । हे देवि ! अब मैं क्रमशः इसके पूजा के विधान को कहता हूँ, तुम इसे सुनो ॥१०॥

ब्राह्मे मुहूर्तेऽप्युत्थाय साधको भक्तिसंयुतः ।
प्रक्षाल्य पाणिपादौ च स्वासनोपरि संविशेत् ॥११॥

सर्वप्रथम साधक ब्राह्ममुहूर्त्त में उठे, तब भक्तिपूर्वक अपने दोनों हाथ और पैरों को धोए तत्पश्चात् उसी आसन पर (शय्या पर) विराजमान हो जाए ॥११॥

स्वशिरस्थं गुरुं शान्तं ध्यायेत्तन्नामपूर्वकम् ।
सप्रियं तन्मनुं जप्त्वा स्तुत्वा स्तोत्रेण वै तथा ॥१२॥

उससमय वह अपने शिरोभाग में स्थित शान्तचित्त गुरु का उनके नामस्मरण-पूर्वक ध्यान करे। वह उनके प्रियमन्त्र का जप करे तथा स्तोत्रों से उनकी स्तुति करे ॥१२॥

तदाज्ञां शिरसा लब्ध्वा ध्यायेत्कुण्डलिनीं ततः ।
तामारोहावरोहेण क्रमेण परिभाव्य च ॥१३॥

तब उस गुरु की आज्ञा को शिर (मस्तक) नवा कर प्रणामपूर्वक प्राप्त करके साधक कुण्डलिनीशक्ति का ध्यान करे। गुरुआज्ञाप्राप्तिक्रिया मानसिक स्तर पर ही सम्पन्न होगी। उस कुण्डलिनीशक्ति को मूलाधार से क्रमशः ऊपर उठाते हुये आरोहणक्रम से सहस्रार तक ले जाने और उसे लौटाकर सहस्रार से मूलाधारचक्र में अवरोहणक्रम से लाने की भावना करनी चाहिए। आरोहण और अवरोहण दोनों ही क्रियाओं की साधना से कुण्डलिनी की चक्र-यात्रा पूर्ण होती है ॥१३॥

जप्त्वा स्वमन्त्रे च ततो जपांश्चैव वहिस्ततः ।
गच्छेन्मूत्रादिकं कृत्वा दन्तधावनमाचरेत् ॥१४॥

उस समय वह अपने इष्टमन्त्र का जप करता रहे। अर्थात् मन्त्रजपपूर्वक कुण्डलिनीयात्रा की भावना करनी चाहिए। तब इस प्रकार जपसम्पन्न करने के पश्चात् साधक शय्या छोड़कर घर से बाहर जाकर मूत्रादि सम्बन्धी शौच क्रियाएँ सम्पन्न करने के पश्चात् दन्तधावनकर्म का सम्पादन करे ॥१४॥

नदीतीरं ततो गत्वा स्नानसंध्यादिकं चरेत् ।
गृहीत्वा जलकुम्भं वै गृहे यागं समर्चयेत् ॥१५॥

तब वह नदी-तीर जाकर स्नान-संध्यादि कर्म करे। स्नान-संध्या वैदिक एवं तान्त्रिक दोनों विधियों से सम्पन्न होती है जिनका तन्त्र ग्रन्थों में यथास्थान उल्लेख हुआ है, जिज्ञासुजन को उन्हें जानकर अपनी परम्परा के अनुसार इसे सम्पन्न करना चाहिए। तत्पश्चात् जल से भरा घट लेकर घर लौट, गृहयागसम्पन्न करे। प्रातः उत्थान से संध्यावन्दन तक के कर्म प्रातःकृत्य के अङ्ग हैं ॥१५॥

गृहयागवर्णन

द्वारपाल प्रविश्यान्तः स्वासनं साधयेत् सुधीः ।
स्वीकृतं संविदं कृत्वा भूतोपसरणं ततः ॥१६॥

सुधीसाधक द्वारपालों की पूजा के पश्चात् पूजागृह के अन्दर प्रवेश करे तब अपने आसन की शुद्धि करे तत्पश्चात् संविदा को स्वीकार करे तदनन्तर वह भूतोपसारण करे ॥१६॥

प्राणायामत्रिकं कुर्यात् साधको नन्दनं युतः ।
भूतशुद्धिं ततः कुर्यात् प्राणान् प्राणविधिं ततः ॥१७॥

तब साधक आनन्द-युक्त प्राणायामत्रय करे तत्पश्चात् वह भूतशुद्धि करके प्राणों के प्रतिष्ठा की विधि सम्पन्न करे ॥१७॥

ततः ऋष्यादिकं कृत्वा मातृकायासमाचरेत् ॥१८॥
सारस्वतेन मार्गेण दशधा सर्वसिद्धये ।
मन्त्रन्यासं ततः कुर्यद्दिवताभावसिद्धये ॥१९॥

तदनन्तर ऋष्यादिक न्यास करके मातृकान्यास करे तथा सब प्रकार की सिद्धि व देवताभावसिद्धिहेतु सारस्वतमार्ग से दस प्रकार से मन्त्रन्यास सम्पन्न करे ॥१८-१९॥

हल्लेखां मूर्धिन्वदने गगनां हृदयाम्बुजे ।
रक्तां करालिकां गुह्ये महोच्छूष्मां पदद्वये ॥२०॥
ऊर्ध्वं दक्षिणोदीच्यां पश्चिमेषु मुखेषु च ।
सद्यादि ह्रस्वबीजाढ्या न्यस्तव्या भूतसप्रभा ॥२१॥

हल्लेखा का शिर में, गगना का वदन में, हत्कमल में रक्ता का तथा करालिका का गुह्यभाग में, महोच्छुष्मा का दोनों पैरों में क्रमशः हल्लेखायै नमः मूर्ध्नि, गगनायै नमः वदने, रक्तायै नमः हृदयाम्बुजे, करालिकायै नमः गुह्ये, महोच्छूष्मायै नमः पदद्वये कहकर न्यास करे ।

तब इन्हीं मन्त्रों से ऊपर, पूर्व, दक्षिण, उत्तर तथा पश्चिम मुखों में ह्रस्व, बीज से युक्त कर प्रभा सहित सद्योजातादि का मन्त्रन्यास क्रमशः करना चाहिए ॥२०-२१॥

अङ्गानि विन्यसेत्पश्चात् ज्ञातियुक्तादिक्रमात् ।
ब्रह्माणं विन्यसेद्भाले गायत्र्या सह संयुतम् ॥२२॥
सावित्र्यासहितं विष्णुं कपोले दक्षिणे न्यसेत् ।
वागीश्वर्यासमायुक्तं वामागण्डे महेश्वरम् ॥२३॥
श्रियाधनपतिंन्यसेत् वामनासाग्रके पुनः ।
रत्यास्मरं मुखे न्यस्य पुष्ट्या गणपतिं न्यसेत् ॥२४॥
सव्यकर्णे परिनिधी कर्णगण्डान्तरालयोः ।
न्यस्तव्यं वदने मूलं पुनः श्चैतांस्तनौ न्यसेत् ॥२५॥

तत्पश्चात् ज्ञातियों सहित क्रमशः षडङ्गन्यास करे—गायत्री के सहित ब्रह्मा का भाल में, सावित्रीसहित विष्णु का दाहिने कपोल में, वागीश्वरीसहित महेश्वर का वाम गण्डस्थल में, श्रीसहित धनपति का वामनासाग्र में, रतिसहित स्मर (कामदेव) का मुख में, पुष्टिसहित गणपति का दाहिनेकर्ण में तथा निधी का कर्ण और गण्डस्थल के मध्यवर्तीभाग में, गायत्र्यासहित ब्रह्मणे नमः भाले, सावित्र्यासहित विष्णवे नमः दक्षिणकपोले, वागेश्वर्यासहित महेश्वराय नमः वामगण्डे, श्रीसहित धनपतये नमः वामनासाग्रे, रत्यासहित स्मराय नमः मुखे, पुष्ट्यासहित गणपतये नमः दक्षिणकर्णे, निधये नमः कर्ण-गण्डातरालयोः कहता हुआ न्यास करे ॥२२-२५॥

कण्ठमूले स्तनद्वन्दे वामांसे हृदयाम्बुजे।
सव्यांसे पार्श्वयुगले नाभिदेशे च देशिकः ॥२६॥
भालांसपार्श्वजठरे पार्श्वांसपरके हृदि।
ब्रह्माण्याद्यास्तनौ न्यस्या विधिनाप्रोक्तलक्षणाः ॥२७॥

तब कण्ठमूल, स्तनद्वन्द्व, बायें कन्धे, हृदयकमल, दाहिने कंधे, दोनों पार्श्वों, नाभिदेश, ललाट, एवं उदर के पार्श्ववर्त्तीभागों तथा हृदय के ऊपरीभाग में देशिक (विद्वान साधक), कहे हुये लक्षणों से युक्त ब्रह्माणी आदि देवियों का शरीर के विभिन्न भागों में विधिपूर्वक न्यास करे ॥२६-२७॥

मूलेन व्यापकं देहे पीठन्यासं ततश्चरेत्।
पुनश्च व्यापकं देहे न्यस्यदेवीं विचिन्तयेत् ॥२८॥

तब मूलमन्त्र से शरीर में व्यापक (सर्वाङ्ग) न्यास करके पीठन्यास सम्पन्न करे। पीठन्यास के पश्चात् पुनः देह में व्यापक न्यास कर, न्यासक्रिया पूर्ण कर, देवी का चिन्तन, ध्यान करना चाहिए ॥२८॥ ततो ध्यायेद्यथा—

ध्यानम्

उद्यद्दिनद्युतिमिन्दुकिरीटां,
तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम्।
स्मेरमुखीं वरदाङ्कुशपाशां-
भीतिकरां प्रभजे भुवनेशीम् ॥२९॥

तब ध्यान करे—जो भुवनेशी (भुवनेश्वरी देवी) उद्यत्-दिन (प्रभातकालीनसूर्य की) द्युति, आभा से युक्त हैं, जिन्होंने अपने मस्तक पर चन्द्रमा को मुकुट की भाँति धारण किया हुआ है, जिनके स्तन ऊँचे उठे हुये हैं, जो तीनों नेत्रों से युक्त हैं तथा सदैव मुस्कुराते मुखवाली हैं, जिन्होंने अपनी चारो भुजाओं में वरमुद्रा, अंकुश, पाश एवं अभयमुद्रा धारण की है, उनका मैं प्रकृष्टरूप से भजन (चिन्तन) करता हूँ ॥२९॥

सिन्दूरारुणविग्रहां त्रिनयनां माणिक्यमौलिस्फुरत्।
तारानायकशेखरां स्मितमुखीमापीनवक्षोरुहाम् ॥
पाणिभ्यामलिपूर्णरत्नचषकं संविभ्रतीं साश्वतीं।
सौम्यां रत्नघटस्थमध्यचरणां ध्यायेत्परामम्बिकाम् ॥३०॥

उन परा (सर्वोत्कृष्ट शक्ति), अम्बिका, भुवनेश्वरी देवी का जिनका विग्रह (शरीर) सिन्दूर के समान लालिमा लिये है, जो तीननेत्रों से युक्त हैं। जिनका मस्तक माणिक्य जड़े हुये मुकुट से सदैव शोभायमान रहता है। जिन्होंने अपने मस्तक पर तारानायक (चन्द्रमा) को धारण किया हुआ है। जो मुस्कुराते मुख, पूर्णपुष्टवक्षोरूह

(स्तनों) से सम्पन्न हैं, जो निरन्तर अपने हाथों में मधु-पूर्ण रत्नचषक (रत्नों का बना पान-पात्र) भली-भाँति धारण की रहती हैं, जो रत्नजटित घटों के मध्य ही अपने चरणों को स्थापित किये हुये साधकों को सौम्यरूप में दिखाई देती हैं, ध्यान करना चाहिए ॥३०॥

अन्यञ्च

श्यामाङ्गीं शशिशेखरां निजकरैर्नीतञ्चरक्तोत्पलम् ।
रत्नाढ्यं चषकं गुणं भयहरं संविभ्रतीं शाश्वतीम् ॥
मुक्ताहारलसत्पयोधरनतां　नेत्रत्रयोल्लासिनीम् ।
वन्देऽहं सुरपूजितां हरवधूं रक्तारविन्दस्थिताम् ॥३१॥

मैं उन हर (शिव) की वधू (पत्नी), शिवा की वन्दना करता हूँ जो श्यामवर्णीयअङ्गों वाली हैं, अपने मस्तक पर चन्द्रमा को धारण की हुई हैं । जो अपने हाथों में लालकमल, रत्नमयचषक, गुण (डोरी) व भयहर (अभय मुद्रा) धारण की हुई है । वे इन्हें भली-भाँति एवं शाश्वत धारण की हुई हैं । अथवा जो शाश्वतरूपा हैं । जो मोतियों की माला से सुशोभित, नम्र (शालीन) स्तनों वाली हैं। जो अपने तीनों नेत्रों से उल्लासित हैं । साथ ही जो लालकमल के आसन पर विराजमान हैं ॥३१॥

अन्यञ्च

उद्यच्चन्द्रसहस्त्ररश्मिसदृशीं　वह्नीन्दुसूर्येक्षणां,
माद्यासिन्धुविघूर्णितिक्षणयुगां वीणारवत्याकुलाम् ।
मालापुस्तकसिन्धुपात्रकमलं दोर्भिर्वहन्तीं मुदा,
ध्यायेऽहं भुवनेश्वरी शवगतां सर्वादिदेवैः स्तुताम् ॥३२॥

जो उगते हुये हजारों चन्द्रमा की किरणों के समान आभावाली हैं, जिनके सूर्य-चन्द्र और अग्नि तीन नेत्र हैं । जो माद्य (कारण) सिन्धु के प्रभाव से विघूर्णित नेत्रों से युक्त हैं । जो वीणाध्वनि से आकुल (पूरित) हैं, जों अपनी चारो हाथों में माला, पुस्तक, सिन्धुपात्र, तथा कमल को धारण की हुई, प्रसन्नमुद्रा में विराजमान हैं । जो उपर्युक्त अवस्था में ही शव पर विराजित हैं, सभीदेवगण जिनकी स्तुति कर रहे हैं । ऐसी देवी भुवनेश्वरी का मैं ध्यान करता हूँ ॥३२॥

यद्वा

सरोजनयानां चलत्कनककुण्डलां शैशवीं,
धनुजपवटीकरामुदितसूर्यकोटिप्रभाम्　।
शशाङ्ककृतशेखरां शवशरीरसंस्थां शिवाम्,
स्मरामि भुवनेश्वरीं विमुखवाङ्मुखस्तम्भिनीम् ॥३३॥

मैं उन भुवनेश्वरी देवी का स्मरण करता हूँ जो कमल के समान नेत्रवाली, स्वर्ण के बने चञ्चलकुण्डलों से सुशोभित, शिशुस्वभाववाली बालावपु हैं, जिन्होंने अपने हाथों में धनुष और जपमाला धारण की हुई है, जिनके शरीर की प्रभा, करोड़ों उदय- कालिक सूर्य के समान है, जिन्होंने चन्द्रमा को अपने मस्तक पर धारण किया हुआ है तथा जो स्वयं शव के शरीर पर स्थित हैं तथा भक्तों का कल्याण करने वाली हैं ॥३३॥

अपितु

वीणावादनतत्परां त्रिनयनां त्रैलोक्यरक्षापरां,
माध्वीपानपरायणां शवगतां मन्दस्मितां चिन्मयीम्।
मायाबीजविभूषितां शशिकलां चूड़ां लसत्कुण्डलां,
ध्यायेऽहं भुवनेश्वरीं भगवतीं शैव्येन सम्पूजिताम् ॥३४॥

मैं शिवतत्त्व वेत्ताओं से भली-भाँति पूजी गई उन भगवती भुवनेश्वरी का ध्यान करता हूँ जो वीणा बजाने मे तत्पर, तीनों लोकों की रक्षा में परायण, माध्वीपान में निरत रहती हैं। जो तीननेत्रोंवाली, शव पर विराजमान, मन्दमुस्कानवाली तथा चित्शक्ति सम्पन्न हैं। जो मायाबीज ह्रीं से विभूषित हैं। जिन्होंने चन्द्रकला को अपने शीश पर धारण किया हुआ है तथा जिनके कानों में कुण्डल शोभायमान हो रहे हैं ॥३४॥

इतिध्यात्वा हृदम्भोजे देवीं श्रीभुवनेश्वरीम्
मानसै रुपचारैश्च पूजयित्वा यथाविधि।
कृत्वान्तर्यजनं देवि सामान्यार्घं ततश्चरेत् ॥३५॥

इस प्रकार गुरुनिर्दिष्ट या अपने भावानुरूप ध्यान विशिष्ट को अपने हृदयकमल में देवी को सम्पन्न कर विराजित मानकर पूजन करे। तत्पश्चात् अन्तर्यागपद्धति से उन भुवनेश्वरी का पूजन करके सामान्य-अर्घ्य स्थापन की प्रक्रिया सम्पन्न करे ॥३५॥

घटपूजादिकं कृत्वा यन्त्रपूजां समाचरेत्।
यन्त्रं मन्त्रं तथा पूजां गुप्तां गोप्यतमां कुरु ॥३६॥

इस क्रम में वह घटपूजा (पात्रस्थापन) आदि करके, यन्त्रपूजन (आवरणपूजन) करे किन्तु उसे देवी के यन्त्र, मन्त्र, पूजाविधान करे जो स्वत: गुप्त हैं उन्हें अत्यन्त गोपनीयरूप में ही करना चाहिए ॥३६॥

यन्त्रोद्धारं प्रवक्ष्यामि शृणुदेवि फलप्रदम्।
त्रिकं षट्कोणमुद्धृत्य नागपत्रञ्चषोडशम्।
वृत्तं चतुर्द्वारयुतं यन्त्रोद्धारमिदं प्रिये ॥३७॥

हे देवि ! अब मैं भुवनेश्वरी देवी के फलदायक यन्त्रोंद्धार को कहता हूँ तुम उसे सुनो । हे प्रिये ! त्रिकोण, षट्कोण बनाकर, नाग (अष्ट) दल एवं षोडशदल कमल बनाये । तब वृत्त और चार द्वारों से युक्त भूपुर बनाकर यन्त्रनिर्माण सम्पन्न करे । यही भुवनेश्वरी देवी का यन्त्रोद्धार कहा गया है ॥३७॥

अथवान्यप्रकारेण कथयामि सविस्तरम् ।
पद्ममष्टदलं वाह्ये पद्मषोडशभिर्दलैः ।
विलिखेत् कर्णिकामध्ये षट्कोणमतिसुन्दरम् ॥३८॥

अथवा यन्त्रोद्धार का दूसरा प्रकार भी मैं विस्तारसहित कहता हूँ—सर्वप्रथम एक ऐसा अष्टदलकमल बनाए जो बाहर से षोडशदल कमल से घिरा हो तब उसकी कर्णिका के मध्य में अत्यन्त सुन्दर षट्कोण बनाए ॥३८॥

ततः सम्पूजयेत्पीठं नवशक्तिसमन्वितम् ॥
जयाख्या विजयापश्चादजिताह्यपराजिता,
नित्या विलासिनी दोग्ध्री च धीरा मङ्गला नव ॥३९॥

तब जया, विजया, अजिता, अपराजिता, नित्या, विलासिनी, दोग्ध्री, धीरा तथा मङ्गला नामक नौ शक्तियों से युक्त पीठ की पूजा करनी चाहिए ॥३९॥

सर्वशक्तिपदं प्रोच्य ङेतं च कमलासनम् ।
नमः इत्यासनं पूज्य तत् तद्बीजादिकं शिवे ॥४०॥
बीजाद्यमासनं दत्वा मूर्त्तिं तेनैव कल्पयेत् ।
तस्यां सम्पूजयेद्देवीमावाह्यावरणैः क्रमात् ॥४१॥

हे शिवे ! उपर्युक्त सभी नामों में नमः शब्द तथा देवीबीज आदि की योजना करनी चाहिए । नामों का ङेन्त चतुर्थीविभक्ति सहित प्रयोग करें—ॐ ह्रीं जयायै नमः इत्यादि । इसी प्रकार सर्वशक्ति शब्द कहकर नमः पूर्वक चतुर्थ्यन्त कमलासन पद कहता हुआ ह्रीं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः से देवी को आसन देकर, उसी बीजमन्त्र से मूर्त्तिका, देवी का ध्यान करें और उनका आवाहन कर आवरणक्रम से भली-भाँति पूजन करे ॥४०-४१॥

आवरण पूजा

मध्यमात् प्राक् यामसौम्यपश्चिमेषु यथाक्रमम् ।
हृल्लेखाद्याः समभ्यर्च्य पञ्चभूतसमप्रभाः ॥४२॥

तब मध्य में, मध्यम से पूर्व, दक्षिण, उत्तर एवं पश्चिम दिशाओं में हृल्लेखा आदि पञ्चभूतों के समान प्रभावाली देवियों का क्रमशः भलीभाँति पूजन करे । जैसे मध्य

में ॐ हृल्लेखायै नमः हृल्लेखा श्री पादुकां पूजयामि नमः समर्पयामि स्वाहा कहकर पूजनादि करे। इसी प्रकार पूर्व में गगना, दक्षिण में रक्ता, उत्तर में करालिका, पश्चिम में महोच्छुष्मा का पूजन करना चाहिए ॥४२॥

वरपाशाङ्कुशाभीति धारिण्यो शितभूषणाः।
आग्नेयादिषु स्थानेषु पूजयेदङ्गदेवताः ॥४३॥

तब वर-पाश-अङ्कुश, अभीति (अभयमुद्रा) धारण की हुई उज्ज्वल आभूषणों वाली अङ्गदेवताओं का आग्नेयादि स्थानों में पुनः पूजन करे ॥४३॥

त्रिकं सम्पूज्य षट्कोणे यजेन्मिथुन देवताः ॥४४॥

त्रिक् (भुवनेश्वरी सम्बन्धी त्रिशक्ति) का पूजन कर यन्त्र के षट्कोण में मिथुन देवताओं का (निर्देशित) क्रम में पूजन करे ॥४४॥

इन्द्रकोण (पूर्वदिशा)

इन्द्रकोणे लसद्दण्डकुण्डिकाक्षगुणाभयाम्।
गायत्रीं पूजयेन्मन्त्री ब्रह्माणमपि तादृशम् ॥४५॥

इन्द्रकोण (पूर्वदिशा) में हाथों में दण्ड, कुण्डिका, अक्ष (रुद्राक्षमाला) तथा अभय-मुद्रा से सुशोभित गायत्री देवी का तथा उन्हीं के समान ब्रह्मदेव का मन्त्रसाधक पूजन करे ॥४५॥

रक्षकोण (नैर्ऋत्यकोण)

रक्षकोणे चक्रशङ्खगदापङ्कजधारिणीम्।
सावित्रीं पीतवसनां यजेद्विष्णुञ्चतादृशम् ॥४६॥

मन्त्रसाधक रक्षकोण (नैर्ऋत्यकोण) में पीतवस्त्रधारण की, चक्र, शङ्ख, गदा, पङ्कज ली हुई सावित्री देवी का तथा उसी रूप में विष्णु भगवान् का पूजन करे ॥४६॥

वायुकोण (वायव्यकोण)

वायुकोणे परस्वक्षमालाभयवरान्विताम्।
यजेत् सरस्वतीमच्छां रुद्रं तादृशलक्षणम् ॥४७॥

वायव्यकोण में परशु, अक्षमाला, अभय एवं वरमुद्रा से युक्त स्वच्छ सरस्वती का तथा उन्हीं लक्षणों युक्त रुद्रदेव का पूजन करे ॥४७॥

वह्निकोण (अग्निकोण में)

वह्निकोणे यजेद्रत्नकुम्भरत्नकरण्डकम्।
कराभ्यां विभ्रतं पीनं तुन्दिलं धननायकम् ॥४८॥

आलिंग्य सव्यहस्तेन वामेनाम्बुजधारिणीम्।
धनदाङ्कसमारूढ़ां महालक्ष्मीं प्रपूजयेत्॥४९॥

अग्निकोण में धनदकुबेर के गोद में विराजमान उन महालक्ष्मी का उत्कृष्ट पूजनकरना चाहिए जिन्होंने अपनेदाहिने हाथ से अपने दोनों हाथों में रत्नकलश और रत्नमञ्जूषा धारण किया, मोटे तोंदवाले, धन के स्वामी कुबेर का आलिंगन किया हुआ है एवं बायें हाथ में कमल धारण किया हुआ है॥४८-४९॥

वारुण (पश्चिम दिशा)

वारुणे मदनं वाणपाशाङ्कुशशरासनाम्।
धारयन्तं जयारक्तं पूजयेद्रक्तभूषणाम्॥५०॥
सव्येनपतिमाश्लिष्य वामेनाम्बुजधारिणीम्।
पाणिना रमणाङ्कस्थां रतिं सम्यक् समर्चयेत्॥५१॥

वारुण (पश्चिम) दिशा में, रमण (कामदेव) के गोद में स्थित अपनेबायें हाथ में कमल ली हुई रति का, जिन्होंने अपनेदाहिने हाथ से, बाण, पाश, अङ्कुश और धनुषधारी, गुड़हल के पुष्प के समान लालवर्ण वाले लालआभूषणों से भूषित कामदेव का आलिंगन किया हुआ है, भली भांति पूजन करे॥५०-५१॥

ईशानकोण (पूर्वोत्तर दिशा)

ईशाने पूजयेत् सम्यक् विघ्नराजं प्रियान्वितम्।
शृणिपाशधरं कान्तावराङ्गश्रृक्करांगुलिम्॥५२॥
माध्वीपूर्णकपालाद्यां विघ्नराजं दिगम्बरम्।
पुष्करं विगलद्रत्नं स्फुरच्चषकधारिणम्॥५३॥
सिन्दूरसदृशाकारमुद्दाममदविभ्रमम्।
धृतरक्तोत्पलधरामन्यत्पाणिना तद्ध्वजंस्पृशन्॥५४॥
आश्लिष्टकान्तामरुणं पुष्टिमर्चेद्दिगम्बराम्।
कर्णिकायां निधी पूज्यौ षट्कोणस्याथ पार्श्वयोः॥५५॥

ईशानकोण में प्रिया (पत्नी) के सहित, अङ्कुश, पाश धारण किये तथा अपनी पुष्टि के वराङ्ग के ओष्ठ के कोनों पर हाथ की अङ्गुलियों से स्पर्श करते, अपने पुष्कर (सूँड़) में रत्नों से चमकते बूँद-बूँद स्रवते चषक (सुरापात्र) धारण किये, दिगम्बर, विघ्नराज, गणेश तथा माध्वी से परिपूर्ण, सिन्दूर के समान आकृति वाली, उत्कटमद (पान) के प्रभाव से विभ्रम चित्तवाली, एक हाथ में लालकमल तथा अन्य से गणपति के ध्वज का स्पर्श करती हुई अपने पति से आलिङ्गनबद्ध, दिगम्बरा, लालरंग की पुष्टि

देवी का अर्चन करना चाहिए। इन सबका कर्णिका में तथा षट्कोण के पार्श्व में निधियों का पूजन करे ॥५२-५५॥

अङ्गानि केशरेष्वेताः पश्चात्पत्रेषु पूजयेत्।
अनङ्गकुसुमापश्चादनङ्गकुसुमातुरा ॥५६॥
अनङ्गमदनातद्वदनङ्गमदनातुरा।
भुवनपाला गगनवेगा चैव ततः परम् ॥५७॥
शशिरेखा च गगनरेखाचेत्यष्ट शक्तयः।
पाशांकुशवराभीतिधारिण्योऽरुणविग्रहा ॥५८॥

षट्कोण में उपर्युक्त अङ्गदेवताओं का पूजनअष्टदल की कर्णिका में करें तथा शेष अङ्कुश, वर, अभीति (अभय) मुद्रा धारण की, लालरंग की अनङ्गकुसुमा, अनङ्ग-कुसुमातुरा, अनङ्गमदना, अनङ्गमदनातुरा, भुवनपाला, गगनवेगा, शशिरेखा, गगनरेखा, इन आठ शक्तियों का चतुर्थ्यंत नाम में पहले ॐ तथा अन्त में नमः आदि से अष्टदलकमलके आठदलों में क्रमशः पूजन करे ॥५६-५८॥

यथा

ततः षोऽशपत्रेषु कराली विकराल्युमा।
सरस्वतीश्रीदुर्गेशा लक्ष्मीः श्रुतिः धृतिस्मृतिः ॥५९॥
श्रद्धामेधामतिः कान्तिरार्या षोडशशक्तयः।
खड्गखेटकधारिण्यः श्यामापूज्याश्चमातरः ॥६०॥

खड्ग-खेटक धारण करने वाली, श्यामवर्णी कराली, विकराली, उमा, सरस्वती, श्री, दुर्गा, ईशा, लक्ष्मी, श्रुति, स्मृति, धृति श्रद्धा, मेघा, मति, कान्ति, आर्या इन सोलह शक्तियों, मातृकाओं, का यन्त्रांकितषोडशदलकमल के सोलहदलों पूर्ववत् पूजन करे ॥५९-६०॥

पद्माद्बहिः समभ्यर्च्या: शक्तयः परिचारिकाः।
प्रथमानङ्गरूपास्यादनङ्गमदनातुरा ॥६१॥
अनङ्गभुवनावेगाऽनङ्गभुवनपालिका।
स्यात्सर्व मदनाङ्गावेदनानङ्गमेखला ॥६२॥
चषकं तालवृन्तंच ताम्बूलं छत्रमुज्वलम्।
चामरे किशुकं पुष्पं विभ्राणा करपङ्कजैः ॥६३॥

उपर्युक्त षोडशदलकमल के बाहरी भाग में, चषक (पान-पात्र), ताम्बूल, उज्ज्वलछत्र, चामर, किंशुकपुष्प अपने हाथों में धारण की हुई भुवनेश्वरी देवी की परिचारिकाओं का पूजन करना चाहिए ॥६१-६३॥

सर्वाभरणसंदीप्तां गुरुपंक्तित्रयं यजेत् ।
सर्वाभरणसंदीप्तान् लोकपालान् वहिर्यजेत् ।
बज्रादीनपि तद् वाह्ये देवी प्रीत्यर्थमर्चयेत् ।।६४।।

तब सभी आभरणों से सन्दीप्त तीनों (औधों) से सम्बन्धित गुरुपंक्तियों तथा समस्त आभरणों से प्रदीप्त लोकपालों का बाहर यजन करे । सर्वप्रथम गुरुपंक्ति तब लोकपालों की पंक्ति के बाहर वज्रादि आयुधों का भी पूजनकरे । यह पूजनत्रिरेखात्मक भूपुर पर करना चाहिए ।।६४।।

इत्थं सम्पूज्य देवेशीं पुनर्विन्दौ प्रपूजयेत् ।
आसनाद्यैरुपचारैर्नानानैवेद्यसंयुतैः ।।६५।।

इस प्रकार आवरणपूजन सम्पन्न कर पुनः बिन्दु पर आसनादि उपचारों एवं अनेक नैवेद्य सहित देवेशी (भुवनेश्वरीदेवी) का पूजन करे ।।६५।।

ततो होमविधिं कुर्याद् बटुकादींश्च तर्पयेत् ।
ऋष्यादिकं पुनः कृत्वा जपं कुर्याद्यथाविधि ।।६६।।

तत्पश्चात् होमविधि करे और बटुकादि को भी बलिदानादि से सन्तुष्ट करे । तब ऋष्यादिन्यास करके यथाविधि जप करे ।।६६।।

पठित्वा कवचनामसहस्रं स्तोत्रमेव च ।
गुह्येति मन्त्रराजेन फलं समर्पयेत्ततः ।।६७।।

तब कवच, सहस्रनाम, स्तोत्र आदि पढ़कर अन्त में—

गुह्यातिगुह्यगोप्त्रीत्वं गृहाणास्मत्कृतं जपं ।
सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ।।

इस मन्त्रराज से पूजाफल देवी को समर्पित करे ।।६७।।

पात्राण्युत्साद्यविधिवदितःपूर्वं ततः पठेत् ।
गुरुस्तोत्रं पुनर्जप्त्वा पात्रवन्दनमाचरेत् ।।६८।।

तब विधिपूर्वक पात्रों का उत्सादन कर इतः पूर्वस्तोत्र का पाठ कर पुनः गुरुस्तोत्र पाठकर पात्रवन्दना करे ।।६८।।

वहिर्गत्वा समभ्यर्च्य संतर्प्योच्छिष्टभैवरम् ।
पूजागृहे समागत्य शान्तिस्तोत्रं पठेत्ततः ।।६९।।

तदनन्तर बाहर जाकर उच्छिष्टभैरव का भली-भाँति पूजन एवं तर्पण ॐ उच्छिष्ट भैरवं पूजयामि नमः तर्पयामि स्वाहा कह कर करे। तब पूजागृह में लौटकर शान्तिस्तोत्र का पाठ करे ।।६९।।

श्रीवीरवन्दनस्तोत्रं पठित्वा हृदयाम्बुजे ।
देवीमुद्वास्य विहरेद्यथावत्साधकोत्तमः ॥७०॥

तब श्रीवीरवन्दनस्तोत्र को पढ़कर, देवी का अपने हृदयकमल में उद्वासन कर, श्रेष्ठसाधक लोक में यथा-रुचि विहार करे ॥७०॥

इत्येषपटलोदेवि पूजायाः सर्वसाधनः ।
गुह्याद्गुह्यतरोदेवि गोपनीयः स्वयोनिवत् ॥७१॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये पूजापटलनाम पंचम: पटल: ॥५॥

हे देवि ! देवी (भुवनेश्वरी देवी) की पूजासम्बन्धी यह पटल, भक्तों के सभी कार्यों का साधनभूत तथा गुह्य से भी अधिक गुह्य है अत: इसे अपनी योनि ही की भाँति गोपनीय रखकर (अधिकारी) को ही प्रदान करना चाहिए ॥७१॥

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के पूजापटल नामक पाँचवेंपटल
की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ।।५।।



षष्ठपटलः

पूजाविधि

श्रीभैरवउवाच

श्रृणुदेवि प्रवक्ष्यामि पूजापद्धतिमुत्तमाम्।
तत्त्वं श्रीभुवनेश्वर्याः गद्यपद्यस्वरूपिणीम् ॥१॥

श्रीभैरव बोले—हे देवि ! मैं श्रीभुवनेश्वरी की गद्यपद्यमयी उत्तमपूजापद्धति के तत्त्व को कहता हूँ। तुम उसे सुनो ॥१॥

तत्र श्रीमान् साधकेन्द्रः ब्राह्ममुहूर्त्ते शयनतलादुत्थाय करचरणौ प्रक्षाल्य, रात्रि-वाससी त्यक्त्वा, शुद्धवाससी परिधायाचम्य, मनसा शुचिर्भूत्वा, निजासने समुपविश्य, निजशिरसि श्वेतवर्णाधोमुखसहस्त्रदलकमलकर्णिकान्तर्गत चन्द्रमण्डलो-परिस्वगुरुं शुक्लवर्णं शुक्लालङ्कारभूषितम् ज्ञानान्दमुदितमानसं सच्चिदानन्दविग्रहम्, चतुर्भुजं, ज्ञानमुद्रापुस्तकवराभयकरं, त्रिनयनं प्रसन्नवदनेक्षणं, सर्वदेवदेवं वामांगे वामाहस्तधृतकमलया, रक्तवसनाभरणया स्वप्रियया दक्षभुजेनालिङ्गितं परं शिवस्वरूपं ध्यात्वा तच्चरणयुगलकमलविगलदमृतधारया स्वात्मानं प्लुतं विभाव्य मानसोप-चारैराराध्य।

तब श्रीमान् श्रेष्ठसाधक ब्राह्ममुहूर्त में अपने शयनतल से उठे, हाथ पैरों को धोए, रात्रि में धारण किये वस्त्रों को छोड़कर शुद्धवस्त्रों को धारण करे। इस प्रकार वाह्यतः शुद्ध होने के पश्चात् वह मानसिकरूप से भी पवित्र होकर अपने आसन पर विराजमान हो तब वह अपने मस्तक में स्थित श्वेतवर्ण के अधोमुखवर्ती सहस्त्रदल-कमल की कर्णिका के मध्यस्थित चन्द्रमण्डल के ऊपर शुक्लवर्णवाले, शुक्ल (उज्ज्वल) अलंङ्कारों से सुशोभित, ज्ञानानन्द से प्रसन्नचित्त, सच्चिदानन्दरूप, ज्ञानमुद्रा, पुस्तक, वर और अभय मुद्राओं को धारण किये चार भुजाओं वाले अपने गुरु का ध्यान करे, जो तीन नेत्रों से युक्त प्रसन्न-मुख व प्रसन्नदृष्टि वाले हैं, जो सभी देवों के देव हैं। जिन्होंने अपने वामभाग में अपने वामहाथ में कमल धारणकी हुई लालवस्त्राभरणों से अपने को विभूषित किये तथा दाहिने भुजा से गुरु का आलिंगन की हुई शक्ति को विराजमान किया है, ऐसे परमशिवस्वरूप का ध्यान करे। तत्पश्चात्

वह अपनेको उनके दोनों चरणकमल से निसृत, अमृत में डूबा हुआ-मानकर मानसोपचारों से उनका पूजन करे।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसक्षमलवरयूँ सहखफ्रें सहक्षमलवरयीं हसौं स्हौः श्रीमच्छ्री अमुकानन्दनाथ श्रीपादुकां श्रीअमुकाम्बाश्रीपादुकां च पूजयामि नमः इति दशधा विमृश्य दण्डवत प्रणामं मनसा कुर्यात्।

तब ॐ ऐं ह्रीं श्रीं...........पूजयामि नमः पर्यन्त मन्त्र का दश बार विमर्श (मानसिकजप) कर मानसिकरूप से ही दण्डवत् प्रणाम करे।

प्रणाम करने का मन्त्र

ॐ नमामि सद्गुरुं शान्तं प्रत्यक्षं शिवरूपिणम्।
शिरसायोगपीठस्थं मुक्तिकामार्थसिद्धये ॥२॥

मैं उन सद्गुरु को प्रणाम करता हूँ, जो शान्तचित्त, प्रत्यक्षशिवस्वरूप और योगपीठरूप हैं, मुक्ति, काम और अर्थ की सिद्धि हेतु सिर नवा कर प्रणाम करता हूँ ॥२॥

श्रीगुरुंपरमानन्दं वन्दे स्वानन्दविग्रहम्।
यस्य सान्निध्यमात्रेण चिदानन्दायते परम् ॥३॥

मैं उस परमानन्दरूप गुरु की वन्दना करता हूँ जो स्वयं के आनन्द (आत्मानन्द) के मूर्तरूप हैं। जिनके सानिध्यमात्र से परमचिदानन्द की अनुभूति होती है ॥३॥

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥४॥

जिनके द्वारा अज्ञान के अन्धकार से अन्धेनेत्र, ज्ञानरूपी अञ्जनशलाका से उन्मीलित किये जाते हैं, उन श्रीगुरुदेव को नमस्कार है ॥४॥

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥५॥

अखण्डमण्डलाकार यह चराचर जगत् जिस परमपद (परासत्ता) से व्याप्त है उस परमतत्त्व का जिन्होंने हमें दर्शन कराया है, उन गुरुदेव को नमस्कार है ॥५॥

गुरुर्ब्रह्मागुरुर्विष्णुः गुरुः साक्षान्महेश्वरः।
गुरुरेव जगत्सर्वं तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥६॥

गुरु ब्रह्मा हैं, वे ही विष्णु हैं तथा साक्षात् महेश्वर भी वही हैं। गुरु ही समस्त जगत्स्वरूप भी हैं, उन श्रीगुरु को नमस्कार है ॥६॥

नमस्ते नाथ भगवन् शिवाय गुरुरूपिणे ।
विद्यावतारसंसिद्ध्यै स्वीकृतानेकविग्रहः ।।७।।

विद्या के अवतरणहेतु अनेक विग्रहों को धारण करने वाले गुरुस्वरूप आदिनाथ शिव, आपको नमस्कार है ।।७।।

नवाय नवरूपाय परमार्थैकरूपिणे ।
सर्वज्ञानतमोभेद भानवे चिद्घनायते ।।८।।

व्यवहारत: नवनाथों के नये-नये (भिन्न-भिन्न) रूप किन्तु परमार्थत: एक ही रूप में विद्यमान हो, अज्ञान के सबप्रकार के अन्धकार को नष्ट करनेवाले सूर्यस्वरूप, चित्-तत्त्व के घनीभूतरूप गुरु को नमस्कार है ।।८।।

स्वतन्त्राय दयाक्लृप्तविग्रहाय परात्मने ।
परतन्त्राय भक्तानां भव्यानां भव्यरूपिणे ।।९।।

जो मूलत: स्वतन्त्र परात्मा हैं । किन्तु (भक्तों के प्रति) दयावश शरीर धारण करते हैं । जो स्वतन्त्र होते हुये भी भक्तों के लिए परतन्त्र हैं । जो भव्य (सुन्दर) पदार्थों में सुन्दर हैं अर्थात् सुन्दरतम हैं । ऐसे गुरुदेव को नमस्कार है ।।९।।

ज्ञानिनांज्ञानरूपाय प्रकाशायप्रकाशिनाम् ।
विवेकिनां विवेकाय विमर्शायविमर्शिनाम् ।।१०।।

जो ज्ञानियों के ज्ञान, प्रकाशमानों के प्रकाश, विवेकियों के विवेक तथा विमर्शियों के विमर्श हैं, ऐसे गुरुदेव को नमस्कार है ।।१०।।

पुरस्तत्पार्श्वयोः पृष्ठे नमस्कुर्यामुपर्यधः ।
सदासच्चितरूपेण विधेहि भावनाश्रयम् ।।११।।

हे गुरुदेव ! मैं आपको सामने, पीछे, ऊपर, नीचे सब ओर से नमस्कार करता हूँ, आप सदैव सत, चित् रूप से मुझे भावनात्मकदृष्टि से आश्रय प्रदान करें ।।११।।

(ये दश श्लोक गुरुवन्दना के हैं जिनका साधक को अर्थबोधपूर्वक एक साथ ही पाठ करना चाहिए ।)

इति गुरुंप्रणम्य । इस प्रकार अपने गुरु को प्रणाम करे ।

सुप्रसन्नं विभाव्य मनसा तदाज्ञां गृहीत्वा, मूलाधारे स्वर्णवर्णचतुर्दल-कर्णिकान्तर्गत त्रिकोण चक्रान्तर शृङ्गाटकोपरिपरांशक्तिं कुण्डलिनीं उद्यद् दिनकर सहस्त्र भास्करां विद्युत्कोटिसान्निभां सकलमन्त्रमातरं पञ्चाशदवर्णविग्रहामष्टात्रिंशत्कलारूपिणीं सर्वप्राणिजीवानां त्रिधामधामानाम् सर्पाकारामूर्ध्वमुखीं सार्धत्रिवलयां विसतन्तुतनीयसीं विभाव्य गुरूपदिष्टनिजसहजानन्देन प्रबोधयित्वा ।

तब उन्हें भलीभाँति प्रसन्न अनुभव करता हुआ मानसिकरूप से ही उनसे आज्ञा लेकर मूलाधार में चतुर्दलकमल के अन्तर्गत त्रिकोणचक्र के शृङ्गाटक पर स्थित स्वर्णवर्ण की, पराशक्तिरूपा, सहस्त्रों उदीयमान सूर्यों के समान आभावाली, करोड़ों विद्युत के समान प्रकाशित, पचासवर्णों के स्वरूपवाली, अड़तीसकलारूपी, सभी प्राणियों की जीवनभूता, तीनों स्थानों को प्रकाशित करने वाली, साढ़ेतीन फेरों में स्थित, विसतन्तु (कमलनाल) के समान पतली, सोयी हुई, ऊपर की ओर मुख की हुई, सर्पिणी की भाँति, कुण्डलिनीशक्ति की भावना करे। तब उसे गुरु के द्वारा उपदेशित सहजानन्द से प्रबोधित करे।

तत्र वं नमः, शं नमः, षं नमः सं नमः इति पत्रेषु मध्ये मूलेन च प्राग्दक्षिणेन सम्पूज्य।

वहाँ (उस समय) वं नमः, शं नमः, षं नमः, सं नमः इनसे चतुर्दलकमल के चारोदलों में तथा मूल-मन्त्र से मध्य में, प्रदक्षिणाक्रम से पूजन करे।

हंसः इति मन्त्रेण सर्वतोत्थाप्य ततः स्वाधिष्ठाने लिङ्गमूले विद्रुमवर्णे षट्दलकमले तां नीत्वा, तत्र बं नमः भं नमः मं नमः यं नमः रं नमः लं नमः इति पत्रेषु मध्ये मूलेनचार्भ्यच्य।

हंसः इस मन्त्र से उसे सब ओर से ऊपर उठाए। तत्पश्चात् लिङ्गमूल में स्थित मूंगे के रङ्ग के स्वाधिष्ठानचक्र के षट्दलकमल में उसे लेजाकर वहीं बं नमः, भं नमः, मं नमः, यं नमः, रं नमः, लं नमः से पत्रों में तथा मध्य में मूलमन्त्र से पूजन करे।

ततो मणिपूरे नाभौ नीलवर्णे दशदलकमले तां नीत्वा तत्र डं नमः ढं नमः णं नमः तं नमः थं नमः दं नमः धं नमः नं नमः पं नमः फं नमः इति पत्रेषु मध्ये मूलेन प्रपूज्य।

तब नाभि में स्थित मणिपूरचक्र में, नीलेरंग के दशदलकमल में उस कुण्डलिनी शक्ति को ले जाकर वहीं पत्रों में प्रदक्षिणाक्रम से क्रमशः डं नमः, ढं नमः, णं नमः, तं नमः, थं नमः, दं नमः, धं नमः, नं नमः, पं नमः, फं नमः इन दश मन्त्रों से तथा मध्य में मूलमन्त्र से भलीभाँति पूजन करे।

ततो वक्षस्यनाहते पिंगलवर्णे द्वादशदलकमले तां नीत्वा, तत्र-कं नमः खं नमः गं नमः घं नमः ङं नमः चं नमः छं नमः जं नमः झं नमः ञं नमः टं नमः ठं नमः इति पत्रेषु मध्ये मूलेन च समभ्यर्च्य।

तत्पश्चात् वक्षस्थल में स्थित अनाहतचक्र के पिङ्गलवर्णीद्वादशकमल के बारहपत्रों में क्रमशः कं नमः, खं नमः, गं नमः, घं नमः, ङं नमः, चं नमः, छं नमः,

जं नमः, झं नमः, ञं नमः, टं नमः, ठं नमः इन बारह मन्त्रों से तथा मध्य में मूलमन्त्र से पूजन करे।

ततो विशुद्धौ कण्ठे धूम्रवर्णे षोडशदलकमले तां नीत्वा, तत्र अं नमः आं नमः इं नमः ईं नमः उं नमः ऊं नमः ऋं नमः ॠं नमः ऌं नमः ॡं नमः एं नमः ऐं नमः ओं नमः औं नमः अं नमः अः नमः इति पत्रेषु मध्ये मूलेन च प्रपूज्य।

तब कण्ठ में स्थित विशुद्धिचक्र के धूम्रवर्णवाले सोलहदलोंवाले कमल में उसे ले जाकर उसके पत्रों में अं नमः,आं नमः, इं नमः ईं नमः, उं नमः, ऊं नमः, ऋं नमः, ॠं नमः, ऌं नमः, ॡं नमः, एं नमः, ऐं नमः, ओं नमः, औं नमः, अं नमः, आं नमः इन सोलहमन्त्रों से तथा मध्य में मूलमन्त्र से उत्तमरूप से पूजन करे।

ततो भ्रूमध्ये आज्ञाचक्रे, विद्युद्वर्णे द्विदलकमले तां नीत्वा तत्र हं नमः, क्षं नमः इति पत्रयोर्मध्ये मूलेन च प्रपूज्य।

तब भ्रूमध्य में स्थित आज्ञाचक्र के विद्युत् के समान वर्णवाले, द्विदलकमल में उस कुण्डलिनी शक्ति को ले आये और वहीं हं नमः, क्षं नमः इन दोनों मन्त्रों से कमलदलों में तथा मूलमन्त्र से मध्य में पूजन करे।

ततः सहस्रदलकमलकर्णिकान्तर्गतबिन्दुरूपपरतेजोमयपरमं शिवेन सहैकतां नीत्वा। तेनामृतेन ततः स्रवतां तां कुण्डलिनीं सन्तर्प्य, तत्र नादश्रवणतत्परो मुहूर्तं लयं विभाव्य।

तब सहस्रार में स्थित सहस्रदलकर्णिका के अन्तर्गत परतेजमय, बिन्दुरूप परमशिव एवं कुण्डलनी की एकता स्थापित करे। तब उस सहस्रार से स्रावित अमृत द्वारा मूलाधार से क्रमशः ऊपर उठाकर लाई हुई कुण्डलिनी को भली-भांति तृप्त करे। वहाँ नाद (ब्रह्मनाद) श्रवण में तत्पर हो, नाद में मुहूर्तमात्र लय की भावना करे। मूलाधार से सहस्रार तक कुण्डलिनी की आरोहयात्रा का यह वर्णन सम्पन्न हुआ। अब उसकी अवरोह यात्रा का वर्णन करते हैं।

पुनरपि सोहमिति मन्त्रेण तां कुण्डलिनीमाज्ञाचक्रे विद्युद्वर्णे द्विदलकमले समानीय। तत्र-हं नमः क्षं नमः इति पत्रयोर्मध्ये मूलेन च सम्पूज्य।

पुनः (पूर्वोक्त लयानुभूति के पश्चात्) उस कुण्डलिनी को सोऽहं इस मन्त्र से आज्ञाचक्र के द्विदलकमल में लौटाकर ले आये और वहीं कमल के पत्रों में हं नमः, क्षं नमः इन दो मन्त्रों से तथा मध्य में मूलमन्त्र से पूजन करे।

ततो विशुद्धौ कण्ठे धूम्रवर्णे षोडशदलकमले तां समानीय। तत्र अं नमः आं नमः इं नमः ई नमः उं नमः ऊं नमः ऋं नमः ॠं नमः ऌं नमः ॡं नमः एं नमः ऐं नमः ओं नमः औं नमः अं नमः अः नमः इति पत्रेषु मध्ये मूलेन च प्रपूज्य।

तब कण्ठस्थितविशुद्धिचक्र के धूम्रवर्णीषोडशदलकमल में उसे लाकर वहीं कमल के पत्रों में क्रमशः अं नमः, आं नमः, इं नमः, ईं नमः, उं नमः, ऊं नमः, ऋं नमः, ॠं नमः, ऌं नमः, ॡं नमः, एं नमः, ऐं नमः, ओं नमः, औं नमः, अं नमः, अः नमः, इन सोलह मन्त्रों से तथा मध्य में मूलमन्त्र से पूजन करे।

ततो वक्षस्यनाहते पिंगलवर्णे द्वादशदलकमले तां समानीय। तत्र कं नमः खं नमः गं नमः घं नमः ङं नमः चं नमः छं नमः जं नमः झं नमः ञं नमः टं नमः ठं नमः इति पत्रेषु मध्ये मूलेनाभ्यर्च्य।

तब वक्ष में स्थित अनाहतचक्र के पिंगलवर्णवाले द्वादशदलकमल में उसे ले आकर कमल की पंखुड़ियों में कं नमः, खं नमः, गं नमः, घं नमः, ङं नमः, चं नमः, छं नमः, जं नमः, झं नमः, ञं नमः, टं नमः, ठं नमः, इन बारह मन्त्रों से क्रमशः पत्रों में तथा मध्य में मूलमन्त्र से पूजन करे।

ततो मणिपूरे नाभौ नीलवर्णे दशदलकमले तां समानीय। तत्र डं नमः ढं नमः णं नमः तं नमः थं नमः दं नमः धं नमः नं नमः पं नमः फं नमः इति पत्रेषु मध्ये मूलेन च सम्पूज्य।

तब नाभि में स्थित मणिपूरचक्र के नीलवर्णी दशदलीयकमल में उसे ले आये ए॰ .हीं डं नमः, ढं नमः, णं नमः, तं नमः, थं नमः, दं नमः, धं नमः, नं नमः, पं नमः, फं नमः इन दश मन्त्रों से कमल के दश पत्रों में तथा मूलमन्त्र से मध्य में पूजन करे।

ततः स्वाधिष्ठाने लिङ्गमूले विद्रुमवर्णे षट्दलकमले तां समानीय। तत्र 'बं नमः भं नमः मं नमः यं नमः रं नमः लं नमः' इति पत्रेषु मध्ये मूलेन च प्रपूज्य।

तत्पश्चात् लिङ्गमूल में स्थित स्वाधिष्ठान्चक्र के विद्रुमवर्णवाले षट्दलकमल में उसे ले आये और वहीं पत्रों में बं नमः, भं नमः, मं नमः, यं नमः रं नमः, लं नमः इन मन्त्रों से तथा मध्य में मूलमन्त्र से पूजन करे।

ततो मूलाधारे स्वर्णवर्णे चतुर्दलकमले तां समानीय। तत्र 'वं नमः शं नमः षं नमः सं नमः' इति अभ्यर्च्य मध्ये मूलेन च तां समर्चयेत्।

तब उसे मूलाधारस्थित स्वर्णवर्ण के चतुर्दलकमल में लाकर वहीं वं नमः, शं नमः, षं नमः, सं नमः इन चार मन्त्रों से क्रमशः पत्रों में तथा मध्य में मूलमन्त्र से पूजन करे। यह सहस्रार से मूलाधार तक वापसी की कुण्डलिनी की अवरोहक्रमयात्रा का वर्णन सम्पन्न हुआ।

इत्यारोहावरोहक्रमेण परमां परां शक्तिं कुण्डलिनीमुत्थाप्य।

इस प्रकार आरोह और अवरोहक्रम से परम से भी श्रेष्ठ पराशक्ति कुण्डलिनी

के उत्थान या जागरण की क्रिया सम्पन्न करे। यह मानसिक एवं भावनात्मकस्तर पर ही होती है।

प्राणायामं कुर्यात्। तत्र प्रणवं षोडशवारमुच्चरन् दक्षांगुष्ठेन दक्षनासापुटं निरुध्य वामेन पवनं पूरयेत्। ततस्तमेव चतुःषष्टिवारमुच्चरन् दक्षानामा कनिष्ठिकाभ्यां वामं पुटं च निरुध्य द्वाभ्यां पवनं कुम्भयेत्। ततस्तमेव द्वात्रिंशद्वारमुच्चरन् वामं पुटं तथैव निरुध्य दक्षेण पवनं रेचयेत्।

तब (कुण्डलिनी जागरण के पश्चात्) प्राणायाम करना चाहिए। उस समय सर्वप्रथम १६ बार प्रणव का उच्चारण करते हुए दाहिने अंगूठे से दाहिने नासापुट (नासिका द्वार) को बन्द करके बाएं से वायु को पूरित करे। तत्पश्चात् उसी (प्रणव को ही) ६४ बार उच्चारण करता हुआ दाहिने हाथ की अनामिका एवं कनिष्ठिका से बाएँ नासापुट को भी बन्द कर दोनों से पवन का कुम्भक करे। तदनन्तर उसी का बत्तीस बार उच्चारण करता हुआ, उसी प्रकार बाएँ नासापुट को बन्द रखते हुए ही दाहिने से वायु का रेचन करे।

इति प्राणायामं कृत्वा ऋष्यादिस्मरणं विदधीत। यथा—

इस प्रकार प्राणायाम करके ऋषि आदि के स्मरण के रूप में विनियोग करे—

ॐ अस्य श्रीभुवनेश्वरीमन्त्रराजस्य श्रीशक्तिऋषिः गायत्रीछन्दः श्रीभुवनेश्वरीदेवता हंबीजं ईंशक्तिः रंकीलकं श्रीचतुर्विधपुरुषार्थसाधने जपे विनियोगः। इति ऋष्यादिकं कृत्वाऽञ्जलिः स्मृत्वा न्यसेद्। यथा—

इस प्रकार अञ्जलि में जल लेकर ऋष्यादि के स्मरणपूर्वक अञ्जलिगत जल गिरा कर, ॐ अस्य श्री भुवनेश्वरी—विनियोगः कहकर विनियोग की क्रिया करे। तब न्यास सम्पन्न करे।

ऋष्यादिन्यास—श्रीशक्तिऋषये नमः शिरसि गायत्रीछन्दसे नमः मुखे श्रीभुवनेश्वरीदेवतायै नमः हृदि हं बीजाय नमः गुह्ये ईं शक्तये नमः पादयोः रं कीलकाय नमः नाभौ श्रीचतुर्विधपुरुषार्थसाधने जपे विनियोगाय नमः सर्वांगेषु।

उपर्युक्त मन्त्रों को बोलता हुआ सम्बन्धित अङ्गों में ऋष्यादि उल्लेखपूर्वक अङ्ग-न्यास सम्पन्न करे।

करन्यास—ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः, ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, ह्रूं मध्यमाभ्यां वषट, ह्रैं अनामिकाभ्यां हुं, ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्, ह्रः—करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः–ह्रः करतल कर पृष्ठाभ्यां फट् कहते हुए करन्यास करे।

षडङ्गन्यासः—ह्रां हृदयाय नमः, ह्रीं शिरसे स्वाहा, ह्रूं शिखायै वषट्, ह्रैं कवचाय हुं, ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ह्रः अस्त्राय फट्।

इस प्रकार कहता हुआ षडङ्ग, न्यास करे।

ध्यानम्

उद्यद्दिनद्युतिमिन्दुकिरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्तां।
स्मेरमुखीं वरदाङ्कुशपाशाभीतिकरां प्रभजेत् भुवनेशीम् ॥१२॥

तब ध्यान करे—उदयकालीन सूर्य के समान आभा वाली, चन्द्रमा को अपने किरीट में धारण की, ऊँचेस्तनोंवाली, तीन नेत्रों से युक्त, मुस्कानयुक्त मुखवाली, अपनी चारो भुजाओं में वरद, अङ्कुश, पाश और अभीति (अभयमुद्रा) वाली भुवनेशी देवी का मैं भजन करता हूँ ॥१२॥

इति ध्यात्वा यथाशक्ति जपं विधाय पुनरपि प्राणायामादिकं कृत्वा—

गुह्यातिगुह्यगोप्त्रीत्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ॥

इति देव्या वामहस्ते तेजोरूपं जपफलं समर्प्य निजकृत्यं समर्पयेत्।

इस प्रकार ध्यान करके साधक को विधिपूर्वक यथाशक्ति जप करना चाहिए। जप के पश्चात् वह पुनः प्राणायाम आदि अर्थात् प्राणायाम और न्यास सम्पन्न करे तब गुह्याति—महेश्वरी इस मन्त्र को बोलता हुआ दाहिने हाथ में जल लेकर उस तेजोरूप जपफल को देवी के बाएँ हाथ में समर्पित करे।

मन्त्रार्थ—हे देवि ! हे महेश्वरि आप गुप्त से गुप्त तत्त्व की रक्षा करने वाली हैं आप हमारे किए जप को ग्रहण कीजिए। आप की कृपा से मुझे सिद्धि प्राप्त हो।

तत्पश्चात् नीचे लिखे मन्त्र से अपने कृत्य को देवी को समर्पण करे।

कृत्यसमर्पणमन्त्र

प्रकाशमानां प्रथमे प्रयाणे, प्रतिप्रयाणेऽप्यमृतायमानाम्।
अन्तः पदव्यामनुसञ्चरन्तीमानन्दरूपामबलां प्रपद्ये ॥

प्रथम प्रयाण में प्रकाश देती हुई, प्रत्येक प्रयाण में अमृतायमान, अन्तःकरण में सञ्चरण करती, आनन्दरूपिणी उस अबला (स्त्री रूपा देवी) की शरण में मैं जाता हूँ।

अहं देवी न चान्योऽस्मि ब्रह्मैवाहं न शोकभाक्।
सच्चिदानन्दरूपोऽहं स्वात्मानमिति चिन्तयेत् ॥

मैं देवी हूँ अन्य नहीं हूँ। मेरे और देवी में कोई भेद नहीं है। मैं स्वयं ब्रह्म हूँ अत: मैं शोक का भोक्ता नहीं हूँ। सत् चित् और आनन्दरूप हूँ। ऐसा अपनी आत्मा में चिन्तन करना चाहिए।

प्रातः प्रभृति सायांतं सायांदिप्रातरन्ततः।
यत्करोमि जगद्योने तदस्तु तव पूजनम्॥

इति समर्प्यस्वकार्यानुष्ठानाय देव्याज्ञां प्रार्थयेत्।

प्रात: से सायं तक, सायं से आरम्भ कर पुन: प्रात: तक मैं जो कुछ करता हूँ। हे संसार को उत्पन्न करनेवाली माता! वह सब आपका पूजन ही है। उपर्युक्त विधि से कृत्यसमर्पित कर अपनेकार्यसम्पादन हेतु देवी की आज्ञा प्राप्त्यर्थ प्रार्थना करनी चाहिए।

त्रैलोक्यचैतन्यमयी सुरेशि भुवनेश्वरि त्वच्चरणाज्ञयैव।
प्रातः समुत्थाय तव प्रियार्थं संसारयात्रामनुवर्तयिष्ये॥

हे तीनों लोकों को चैतन्यमय करनेवाली, हे सुरेश्वरी! हे भुवनेश्वरी! आपके चरणों की आज्ञा से ही आपका प्रिय करने के लिए ही मैं प्रात:काल उठकर संसार-यात्रा में प्रवृत्त हो रहा हूँ।

संसारयात्रामनुवर्तमानं त्वदाज्ञया श्रीभुवनेश्वरीशि।
स्पर्धातिरस्कारकलिप्रमाद भयानि मां माऽभिभवन्तु मातः॥

हे माता! हे भुवनेश्वरि! हे ईश्वरि! आपकी आज्ञा से संसारयात्रा में अनुवर्तमान (लगे हुए) मुझको स्पर्धा, तिरस्कार, कलि (कलह), प्रमाद, भय आदि दोष प्रभावित न करे।

जानामि धर्मं नच मे प्रवृत्तिः,
जानाम्यधर्मं नच मे निवृत्तिः।
त्वया हृषीकेशि हृदिस्थितेन
यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि॥

हे हृषीकेशि! मैं धर्म जानता हूँ किन्तु उसमें मेरी प्रवृत्ति नहीं है। मैं अधर्म को भी जानता हूँ किन्तु उससे मेरी निवृत्ति नहीं है। मैं तो आप, जो मेरे हृदय में स्थित हैं, उसी से जैसा नियुक्त होता हूँ वैसा करता हूँ। (यहाँ साधक की समर्पण की भावना व्यञ्जित है।)

अजपाजपं सहजसिद्धं तत्तद् देवेभ्य: संकल्प्य तत्समर्पयेद्।

अजपा जप जो सहज सिद्ध है उसे उन-उन (विभिन्न) देवों को संकल्पपूर्वक अर्पित करे।

ॐ अद्य पूर्वेद्युरहोरात्राचरितमुच्छ्वासनिःश्वासात्मकं षट्शताधिकमेकविंशतिसहस्रसंख्यकमजपाजपं मूलाधारस्वाधिष्ठानमणिपूरानाहतविशुद्धाज्ञाब्रह्मरन्ध्रेषु चतुर्दलषट्दलदशदलद्वादशदलषोडशदलद्विदलसहस्रदलेषु स्वर्णविद्रुमनीलपिंगलधूम्रविद्युत्कर्पूरवर्णेषु, स्थिताभ्योगणपतिब्रह्मविष्णुरुद्रजीवात्मपरमात्मगुरुपादुकाभ्यां यथाभागशः समर्पयामि नमः ॥ इति संकल्पं कृत्वा समर्पयेत् ।

ॐ अद्य........समर्पयामि नमः पर्यन्त संकल्पपूर्वक अजपा-जप समर्पित करे ।

मैं आज पहले दिन, दिन-रात उच्छवास-निश्वास रूप में २१६०० किये अजपाजप को मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा, ब्रह्मरन्ध्र आदि स्थानों में स्थित चतुर्दश, षट्दल, दशदल, द्वादशदल, षोडशदल, द्विदल, सहस्रदल चक्रों में जिनके वर्ण क्रमशः स्वर्ण, विद्रुम, नील, पिङ्गल धूम्र, विद्युत्, कर्पूर हैं, उनमें विराजमान गणपति, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, जीवात्मा, परमात्मा, गुरुपादुका आदि को यथाभाग समर्पित करता हूँ ।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मूलाधारचक्रस्थाय गणपतये अजपाजपानां षट्शतं समर्पयामि नमः ॥ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्वाधिष्ठानचक्रस्थाय ब्रह्मणे अजपाजपानां षट्सहस्राणि समर्पयामि नमः ॥ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मणिपूरचक्रस्थाय विष्णवेऽजपाजपानां षट्सहस्राणि समर्पयामि नमः ॥ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अनाहतचक्रस्थाय रुद्राय अजपाजपानां षट्सहस्राणि समर्पयामि नमः ॥ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं विशुद्धचक्रस्थाय जीवात्मने अजपाजपानामेकसहस्रं समर्पयामि नमः ॥ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं आज्ञाचक्रस्थाय परमात्मने अजपाजपानाम् एकसहस्रं समर्पयामि नमः ॥ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सहस्रदलकमलकर्णिकामध्यस्थायै श्रीगुरुपादुकायै अजपाजपानामेकसहस्रं समर्पयामि नमः ॥

इत्यजपाजपं समर्प्याजपामन्त्रेण प्राणायामं कृत्वा सङ्कल्पं कुर्याद् । यथा—

उपर्युक्त रीति से अजपाजपमन्त्र का समर्पण करके, अजपामन्त्र (सोऽहं) से ही प्राणायाम सम्पन्न कर संकल्पपूर्वक विनियोग करे ।

ॐ अस्य श्री अजपागायत्रीमन्त्रस्य श्रीहंसऋषिः, अव्यक्तगायत्रीछन्दः, परमहंसो देवता, हं बीजं, सः शक्तिः, सोऽहं कीलकं, ॐकारस्तत्त्वं, उदात्तः स्वरः, हैमो वर्णः मम मोक्षार्थे अजपाजपे विनियोगः ॥

इति कृताञ्जलि ऋष्यादिकं स्मृत्वा न्यसेत्—

तब अञ्जलि बनाकर ऋषि आदि का स्मरण कर न्यास करे ।

अथ ऋष्यादिन्यासः—ॐ हंसात्मनेऋषये नमः शिरसि, अव्यक्तगायत्रीछन्दसे नमः मुखे, परमहंसाय देवतायै नमः हृदये, हं बीजाय नमः मूलाधारे, सः

शक्तये नमः पादयोः, सोऽहं कीलकाय नमः नाभौ, ॐकारतत्त्वाय नमः हृदये, उदात्तस्वराय नमः कण्ठे, हैमवर्णाय नमः सर्वांगे।

इति विन्यस्य मम मोक्षार्थे जपे विनियोगः इति कृताञ्जलिर्वदेत्। इति ऋष्यादिन्यासः।

कहते हुये अञ्जलि बनाकर ऋष्यादिन्यास सम्पन्न करे। यह ऋष्यादिन्यास सम्पन्न हुआ।

अथ करन्यासः—हंसां सूर्यात्मने स्वाहा अंगुष्ठाभ्यां नमः, हंसीं सोमात्मने स्वाहा, तर्जनीभ्यां स्वाहा, हंसूं निरंजनात्मने स्वाहा मध्यमाभ्यां वषट्, हंसैं निराभासात्मने स्वाहा अनामिकाभ्यां हुं, हंसौं अनंगतनुः सूक्ष्मादेवी प्रचोदयात् स्वाहा कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्, हंसः अव्यक्तबोधात्मने स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

कहते हुये करन्यास सम्पन्न करे।

अथ षडङ्गन्यासः—हंसां सूर्यात्मने स्वाहा हृदयाय नमः, हंसीं सोमात्मने स्वाहा शिरसे स्वाहा, हंसूं निरंजनात्मने स्वाहा शिखायै वषट्, हंसैं निराभासात्मने स्वाहा कवचाय हुं, हंसौं अनंगतनुः सूक्ष्मा देवी प्रचोदयात् स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट्, हंसः अव्यक्तबोधात्मने स्वाहा अस्त्राय फट्।

कहकर षडङ्गन्यास सम्पन्न करे।

ध्यानम्

द्यौ मूर्धानं यस्य विप्रा वदन्ति।
खं वै नाभिं चन्द्रसूर्यौ च नेत्रे।
दिग्भिः श्रोत्रो यस्य पादौ क्षितिश्च।
ध्यातव्योऽसौ सर्वभूतान्तरात्मा॥

तब ध्यान करे—सर्वभूतों की अन्तरात्मा में स्थित वह परमतत्त्व ही ध्यानकरने योग्य है, विप्रगण जिसकी मूर्धा द्युलोक, नाभि आकाश, नेत्र चन्द्र-सूर्य, कान दिशाएँ, पैर पृथ्वी को (तत्त्वदर्शी विद्वान्) बताते है।

इति विराट् स्वरूपं स्वात्मानं ध्यात्वा सन्धायी प्राणवायोर्निर्गमे प्रवेशात्मकमजपामन्त्रं हंस इति पञ्चविंशतिवारं जप्त्वा समर्प्य गुरूपदिष्टमार्गेण नादानुसन्धानपूर्वकतदनुसन्धानपूर्वकनिरस्तसमस्तोपाधिना केनापि चिद्विलासेन प्रवर्तमानोऽसीति विभाव्य स्वकार्यानुष्ठानाय।

इस प्रकार विराटरूप में अपनी आत्मा का ध्यानकरता हुआ, प्राणवायु के निर्गम और प्रवेश के अवसर पर उच्छवास-निःश्वास क्रियारूप में अनुसन्धानपूर्वक हंस इस

अजपामन्त्र का पच्चीस बार जप कर परमात्मा को अर्पण करे। तब गुरूपदिष्टमार्ग से नादानुसन्धानसहित उस मन्त्र के अनुसन्धानपूर्वक समस्त उपाधियों का नाश कर मैं किसी चिद्विलास से प्रवृत्त हूँ ऐसी भावना कर अपने कार्यानुष्ठान् में प्रवृत्त हो। यहाँ तक की क्रियाएँ, अन्तर्याग के अन्तर्गत आती हैं और वे शय्यापर ही सम्पन्न होती हैं।

समुद्रमेखले देवि पर्वतस्तनमण्डले।
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे॥

इति भूमिं प्रार्थ्य श्वासानुसारेण तस्यां पादं निधाय बहिर्गत्वा मलमूत्रोत्सर्गाचमनं विधाय, दन्तधावनं कुर्यात्।

'समुद्र......क्षमस्व मे' इस मन्त्र से भूमि की प्रार्थना कर अपने तत्कालीन श्वास के अनुसार पैर को पहले पृथ्वी पर धरे। तत्पश्चात् बाहर जाकर मलमूत्रोत्सर्ग आचमनादि करके दन्त-धावन सम्पन्न करे।

मन्त्रार्थ—हे देवि ! हे विष्णुपत्नी पृथ्वी, आपने समुद्र को मेखला की भाँति धारण किया है, पर्वत आपके स्तनमण्डल हैं। मैं आपको नमस्कार करता हूँ। आप मेरे पादस्पर्श को क्षमा करे।

'क्लीं कामदेवाय सर्वजनप्रियाय नम:'—इति दन्तधावनं कृत्वा नद्यादौ गत्वा, तत्र वैदिकस्नानं निवर्त्य तान्त्रिकमारभेत्।

इस मन्त्र से दन्तधावन करके नदी आदि को जाकर वहाँ पहले वैदिकस्नान सम्पन्न करे तत्पश्चात् तान्त्रिकस्नान करे।

तत्रादौ करचरणमुखानि मूलेन प्रक्षाल्यमणिधरिणि वज्रिणि महाप्रतिसरे रक्ष हुं फट् स्वाहा-इति शिखां बध्वाऽऽचमनत्रयं कुर्यात्।

इस क्रम में सर्वप्रथम मूलमन्त्र से हाथ और पैर धोये तब मणिधरिणि वज्रिणि महाप्रतिसरे रक्ष हुँ फट् स्वाहा मन्त्र पढ़ता हुआ शिखाबन्धन करे तत्पश्चात् नीचे लिखे अनुसार तीन आचमन करे।

मूलं आत्मतत्त्वं शोधयामि स्वाहा। मूलं विद्यातत्त्वं शोधयामि स्वाहा। मूलं शिवतत्त्वं शोधयामि स्वाहा इत्याचम्य मलापकर्षणस्नानं विधाय पुनराचम्य।

उपर्युक्त आचमन कर मलापकर्षणस्नान करे तत्पश्चात् पुन: आचमन करे।

ॐ अद्यामुकमासस्येत्यादि श्रीभुवनेश्वरीप्रीत्यर्थं तान्त्रिकस्नानमहं करिष्ये इति सङ्कल्प्य प्राणायामं कृत्वा, स्वमूलऋष्यादिकरषडङ्गन्यासांश्च कृत्वा, स्वपुरतो जले हस्तमात्रं चतुरस्रं तीर्थं परिकल्प्य।

तब सर्वप्रथम ॐ अद्य.....करिष्ये से देशकालादिकथनपुरस्सर संकल्प करे। तब प्राणायाम तत्पश्चात् मूलमन्त्र से ऋष्यादिन्यास एवं षडङ्गन्यास सम्पन्न करके अपने सम्मुख एक हाथ चौकोरक्षेत्र में जल के भीतर तीर्थ की परिकल्पना करे।

ॐ ब्रह्माण्डोत्तरतीर्थानि करैः स्पृष्टानि ते रवे।
तेन सत्येन देवेश! तीर्थान् देहि दिवाकर॥

इति सूर्यात् तीर्थान् प्रार्थ्य क्रों इत्यंकुशमुद्रया मण्डलंभित्वा—

'ॐ ब्रह्माण्डोत्तर........दिवाकर' मन्त्र से सूर्य से तीर्थों के लिए प्रार्थना कर क्रों कहकर अङ्कुशमुद्रा से मण्डल को भेदकर तीर्थों का आवाहन करे।

मन्त्रार्थ—हे देवताओं के स्वामी ! हे दिवाकर ! ब्रह्माण्ड में स्थित जो भी तीर्थ तुम्हारी किरणों से स्पर्श किये गये हैं। उन तीर्थों को सत्य (यथार्थ) रूप में हमें (इस मण्डल में) प्रदान कीजिये।

ॐ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति !
नर्मदेसिन्धुकावेरि! जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥

इति सूर्यमण्डलात् तीर्थमावाह्य पुरःकल्पिततीर्थं सम्पूज्य, पुनः सूर्यमण्डलादेवं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः सर्वानन्दमये तीर्थमण्डले तां ध्यायेद्।

'ॐ गङ्गे च.......सन्निधिं कुरु' मन्त्र से सूर्यमण्डल से तीर्थों का आवाहन कर सामने कल्पिततीर्थ में उनका पूजन कर सूर्यमण्डल में ही ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः कहता हुआ सर्वानन्दमयतीर्थमण्डल में ध्यान करे।

मन्त्रार्थ—हे गङ्गा, यमुना, गोदावरी, सरस्वती, नर्मदा, सिन्धु, कावेरी आदि नदियों, आप इस जल में सन्निधि करें।

सर्वानन्दमयीमशेषदुरितध्वंसां मृगाङ्कप्रभां त्र्यक्षां
चोर्ध्वकरद्वयेन दधतीं पाशं सृणिं च क्रमात्।
दोर्भ्यां चामृतपूर्णहिमकलशं शुक्लाक्षमालां वराम्
गंगासिन्धुसरिद्द्वयादिसहितां श्रीतीर्थशक्तिं भजे॥

इति ध्यात्वा ॐ नमो भगवति अम्बे, अम्बिके, महामालिनि ! एह्येहि भगवति ! अशेषतीर्थालवाले ! शिवजटाधिरूढे गंगे, गंगाम्बिके! स्वाहा इति मन्त्रेण सप्तधा अभिमन्त्र्य, ह्रीं इत्यालोड्य, वं इत्यमृतेशमुद्रयाऽमृतीकृत्य।

मन्त्रार्थ—मैं सभी प्रकार की आनन्दमयी, सम्पूर्ण दुरितों को ध्वंस करने वाली, मृगाङ्क, चन्द्रमा के समान आभावाली, तीन नेत्रों वाली, अपने ऊपरी हाथों में पाश,

सृणि (कृपाण) और दो हाथों में अमृतपूर्णस्वर्णकलश, श्वेतवर्ण की उत्तम अक्षमाला धारण की हुई, गंगा, सिन्धु दो नदियों सहित श्री तीर्थशक्ति का ध्यान करता हूँ।

'ॐ नमो भगवति.......स्वाहा' इस मन्त्र से सातबार अभिमंत्रित कर ह्रीं से उसका आलोडन तथा वं मन्त्र से अमृतेशमुद्रा द्वारा अमृतीकरण करना चाहिए।

ॐ आत्मतत्त्वात्मने नमः ॐ विद्यातत्त्वात्मने नमः ॐ शिवतत्त्वात्मने नमः इति तत्त्वत्रयं जले विन्यस्य तत्र स्वचक्रं विभाव्य, तत्र हृदयकमले देवीमावाह्य षडंगेन सकलीकृत्य ताम्रवर्णां तर्पयित्वा योनिमुद्रया मूलेन तज्जलमष्टधाभिमन्त्र्य तत्र मूलमन्त्रस्मरणपूर्वकं त्रिर्निमज्ज्योन्मज्जयेत्। ततः कुम्भमुद्रया मूलं पठन् स्वशिरसि त्रिरभिषिच्य मूलेन देवीं त्रिः सन्तर्प्य देवीं स्वहृदि समानीय।

तब ॐआत्मतत्त्वात्मने नमः, ॐविद्यातत्त्वात्मने नमः, ॐशिवतत्त्वात्मने नमः से तत्त्वत्रय का जल में विन्यास करे। तत्पश्चात् अपने चक्र (भुवनेश्वरीयन्त्र) की भावना करता हुआ अपने हृदय में देवी का आवाहन, षडंग से सकलीकरण कर, उनका तर्पण करे तब योनिमुद्रा से आठ बार मूलमन्त्र पढ़ता हुआ उस जलको अभिमन्त्रित करे। तदन्तर मूलमन्त्र पढ़ता हुआ उस अभिमन्त्रितजल में तीन बार डुबकी लगाये तथा मूलमन्त्र से ही तीन बार कुम्भमुद्रा से अभिषेक करे और मूलमन्त्र से ही देवी का तीन बार तर्पण करता हुआ, उन्हें अपने हृदय में ले आये।

मूलं आत्मतत्त्वं शोधयामि स्वाहा, मूलं विद्यातत्त्वं शोधयामि स्वाहा, मूलं शिवतत्त्वं शोधयामि स्वाहा। इति त्रिराचम्य तीरमारूह्य धौतवाससी परिधाय त्रिपुण्ड्रकमूर्ध्वपुण्ड्रकं वा तिलकं विधाय वैदिकसंध्यां समाप्य, तान्त्रिकसंध्या-मारभेत्। इति स्नानविधिः।

पुनः मूल आत्मतत्त्वं शोधयामि स्वाहा, मूलविद्यातत्त्वं शोधयामि स्वाहा, मूलं शिवतत्त्वं शोधयामि स्वाहा मन्त्रों से तीनबार आचमन कर, किनारे पर आकर धौतवस्त्र पहने औरत्रिपुण्ड्र या ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक लगाकर वैदिकसंध्यासम्पन्न करके तान्त्रिक-संध्या आरम्भ करे। इस प्रकार स्नानविधि सम्पन्न होती है।

अथ संध्या। तत्र पूर्ववदाचमनम्, मूलेनत्रिखण्डां बध्वा, प्राणायामऋष्यादि-करषडंगन्यासान् विधाय स्वपुरतो धेनुमुद्रया तथैव विरचितं तीर्थजलममृतीकृत्य मूलेनाष्टधाऽभिमन्त्र्य, तेन जलेन—

अं नमः आं नमः इं नमः ईं नमः उं नमः ऊं नमः ऋं नमः ॠं नमः लृं नमः लॄं नमः एं नमः ऐं नमः ओं नमः औं नमः अं नमः अः नमः कं नमः खं नमः गं नमः घं नमः ङं नमः चं नमः छं नमः जं नमः झं नमः ञं नमः टं नमः ठं नमः डं नमः

ढं नमः णं नमः तं नमः थं नमः दं नमः धं नमः नं नमः पं नमः फं नमः बं नमः भं नमः मं नमः यं नमः रं नमः लं नमः वं नमः शं नमः षं नमः सं नमः हं नमः ळं नमः क्षं नमः इति मातृकाक्षरैः स्वशिरः प्रोक्ष्य मूलेन च त्रिः सम्प्रोक्ष्य, दक्षहस्ते जलमादाय वामेनाच्छाद्य लं वं रं यं हं इति पाञ्चभौतिकमन्त्रैः सप्तवारमभिमन्त्र्य, मूलेन च त्रिरभिमन्त्र्य तज्जलं बिन्दुभिर्वामहस्तकृततत्त्वमुद्रया मूलेन स्वशिरसि त्रिः प्रोक्ष्य अवशिष्टं जलं वामहस्ते निधाय, तेजोरूपं तज्जलमिडयाकृष्य, स्वदेहान्तसकलकलुषं प्रक्षाल्य, तज्जलं कृष्णवर्णं पिङ्गलया बहिर्निर्गतं मत्वा पुनर्दक्षहस्ते कृत्वा स्ववामभागे ज्वलद्वज्रशिलां ध्यात्वा ।

इस क्रम में पहले की भाँति आचमन करके त्रिखण्डामुद्रा बनाकर प्राणायाम, ऋष्यादिन्यास, करन्यास, षडङ्गन्यास करके पूर्व की भाँति ही धेनुमुद्रा से विरचित तीर्थजल का अमृतीकरण करके आठ बार अभिमन्त्रित कर उसी जल से अं नमः आं नमः......इत्यादि मातृका अक्षरों से अपने सिर पर साधक प्रोक्षण करे । तत्पश्चात् पुनः मूलमन्त्र से तीन बार भलीभाँति प्रोक्षण कर, दाहिने हाथ में जल लेकर उसे बायें हाथ से ढंक कर लं वं रं यं हं इत्यादि पाञ्चभौतिकमन्त्रों से सात बार अभिमन्त्रित करे और उसे तीन बार मूलमन्त्र से अभिमन्त्रित करके उस अभिमन्त्रित जल को बाएँ हाथ में लेकर तत्त्वमुद्रासे मूलमन्त्र पढ़ता हुआ अपने सिर पर तीन बार छिड़के । बचे हुये जल को पुनः बायें हाँथ में लेकर इडा-नाडी से उसे खींचकर अपने देह में स्थित सकल कलुष का प्रक्षालन करे । इसके कारण कृष्णवर्ण हुए उस जल को पिङ्गलानाडी से बाहर निकला हुआ मानकर पुनः दाहिनेहाथ में लेकर अपने बायें भाग में जलती हुई वज्रशिला की भावना करते हुए ।

ॐ श्लीं पशुं पशुं हुं फट् इति पाशुपतास्त्रमन्त्रेण तस्यां शिलायामास्फाल्य हस्तौ प्रक्षाल्य मूलेन जलमादाय प्रवहन्नाड्या सहस्रदलपरमामृतेनैकीभूतं विभाव्य निर्गमय्य तेन जलेन ॐ अमृतमालिनं ! स्वाहा, इति कुशैः स्वःशिरः त्रिः सम्प्रोक्ष्य ।

ॐ श्लीं पशुं हुं फट् इस पाशुपतास्त्रमन्त्र से उस शिला पर पटककर हाथों को धो लें । पुनः मूलमन्त्र से जल लेकर प्रवहनाडि द्वारा सहस्रदलस्थित परमामृत-एकीभूत होने की भावना करे। तब उस अमृतायमान जल से ॐ अमृतमालिनि स्वाहा कहकर कुशा से तीन बार प्रोक्षण करे ।

ॐ आत्मतत्त्वं शोधयामि स्वाहा, ॐ विद्यातत्त्वं शोधयामि स्वाहा, ॐ शिवतत्त्वं शोधयामि स्वाहा, ॐ शिवतत्त्वं स्वाहा, ॐ विद्यातत्त्वं स्वाहा, ॐ आत्मतत्त्वं स्वाहा, ॐ आत्मतत्त्वं स्वाहा, ॐ विद्यातत्त्वं स्वाहा, ॐ शिवतत्त्वं स्वाहा इति जलेन नवधाऽऽचम्य, मूलं ॐ सर्वतत्त्वं शोधयामि स्वाहा इति त्रिराचम्य ।

ॐ आत्मतत्त्वं शोधयामि स्वाहा आदि नौ मन्त्रों से नौ बार तथा मूलमन्त्र सहित ॐ सर्वतत्त्वं शोधयामि स्वाहा से तीन बार आचमन करे।

जलमञ्जलिनाऽऽदायोत्थाय। ॐ ह्रां ह्रीं हंस: श्रीमार्तण्डभैरवाय प्रकाश-शक्तिसहिताय इदमर्घ्यं परिकल्पयामि स्वाहा इति त्रिरर्घ्यं कुलसूर्याय दत्वा, हृत्पद्मात् सूर्यमण्डले मूलदेवीं नीत्वा, तत्र विधिवद्ध्यात्वा धं धनदायै विद्महे श्रीरतिप्रियायै धीमहि ह्रीं स्वाहा शक्ति: प्रचोदयात् इति गायत्र्या अथवा ऐं हृल्लेखायै विद्महे ह्रीं भुवनायै धीमहि श्रीं तन्न: शक्ति: प्रचोदयात् अनया मूलविद्याया: च गायत्र्या चतसृषु संध्यासु देव्यै अर्घ्यं सूर्यबिम्बे दत्वा।

तब अञ्जलि में जल लेकर ॐ ह्रां ह्रीं हंस: श्री मार्त्तण्डभैरवाय प्रकाशशक्ति सहिताय इदमर्घ्यं परिकल्पयामि स्वाहा कहकर कुलसूर्य को तीन अर्घ्य प्रदान करे। तत्पश्चात् हृत्कमल से सूर्यमण्डल में देवी को ले आकर वहाँ विधिवत् ध्यान करके धं धनदायै विद्महे रति प्रियायै धीमहि ह्रीं स्वाहा शक्ति: प्रचोदयात् इति गायत्र्या अथवा ऐं हृल्लेखायै विद्महे ह्रीं भुवनायै धीमहि श्रीं तन्न: शक्ति: प्रचोदयात् इस मूलविद्या की गायत्री से चारो संध्याओं में देवी को सूर्यमण्डल में (स्थित मानकर) अर्घ्यप्रदान करे।

ततश्चतसृषु संध्यासु क्रमश: मूलाधारहृदादिब्रह्मरन्ध्रेभ्यो देवीतेज: समाकृष्य, कल्पितवह्निसूर्यचन्द्रतारामण्डलेषु निक्षिप्य तत्र बालयौवनप्रौढ़चिद्रूपां देवीं ध्यात्वा।

तब चारों संध्याओं में क्रमश: मूलाधार हृदय ब्रह्मरन्ध्रादि से देवी के तेज को भलीभांति आकृष्ट कर कल्पित अग्नि, सूर्य, चन्द्र, तारामण्डलों में स्थापित कर वहीं बाल व प्रौढ़ रूपों में चिद्रूपिणी देवी का ध्यान करे।

ऐं हृल्लेखायै विद्महे भुवनायै धीमहि तन्न: शक्ति: प्रचोदयात् इति प्रात:।
ह्रीं हृल्लेखायै विद्महे भुवनायै धीमहि तन्न: शक्ति: प्रचोदयात् इति मध्याह्ने।
श्रीं हृल्लेखायै विद्महे भुवनायै धीमहि तन्न: शक्ति: प्रचोदयात् इति सायम्।
ऐं हृल्लेखायै विद्महे ह्रीं भुवनायै धीमहि तन्न: शक्ति: प्रचोदयात् इत्यर्धरात्रे।

इति स्वस्वगायत्र्याऽर्घ्यं दत्वा, यथाशक्तिजप्त्वा, प्राणायामऋष्यादि-करषडङ्गन्यासान् विधाय, यथाशक्ति मूलं संजप्य, स्वस्वगायत्रीमपि जप्त्वा मूलगायत्रीं च जप्त्वा, पुनरपि प्राणायामऋष्यादिकरषडंगादिना जपं समर्प्य मण्डलेभ्यो देवीतेज: स्वस्वस्थाने देवीं च हृदि समानीय ध्यायेत्। इति संध्याविधि:॥

ऐं हृल्लेखायै विद्महे.......इत्यादि मन्त्रों से अपनी गायत्री के द्वारा अर्घ्य दे यथा-शक्ति जप करे तब मूलमन्त्र और अपने गायत्रीमन्त्र और मूलविद्या के गायत्रीमन्त्र का जप कर प्राणायाम ऋषि, करन्यास, षडङ्गन्यास करके यथाशक्ति मूलमन्त्र और अपनी-अपनी गायत्री अर्थात् सम्बन्धकालिक गायत्री का तत्पश्चात् मूलविद्या की गायत्री का

जप कर, पुनः प्राणायाम, ऋषि षडङ्ग न्यासादि करके जप समर्पित करे। मण्डलों से देवी के तेज को अपने-अपने स्थानों पर और देवी को हृदय में स्थापित कर ध्यान करे। इस प्रकार संध्याविधि सम्पन्न होती है।

अथ तर्पणम्। तत्र पूर्ववदाचम्य प्राणायामऋष्यादिकरषडङ्गन्यासादि कृत्वा तीर्थं पूर्ववदावाह्य, मूलेन जलं सप्तधाऽमृतमुद्रयाऽमृतीकृत्य, तत्र जले यन्त्रं ध्यात्वा, तत्र देवीं हृदयात् सपरिवारामानीय, षडङ्गयोगेन सकलीकृत्य, कुण्डलिन्याः प्रयोगेनामृतेनाभिषिच्य, विधिवत् प्रपूज्य।

उसी समय पहले की भाँति आचमन, प्राणायाम, ऋष्यादिन्यास, करन्यास, षडङ्गन्यास आदि करके तीर्थ का पहले की भाँति आवाहन करे तब मूलमन्त्र से जल का सात बार अमृतमुद्रा से अमृतीकरण करे, तत्पश्चात् उस जल में यन्त्र का ध्यान करके वहीं देवी को सापरिवार हृदय से लाकर षडङ्गयोग से सकलीकरण करके कुण्डलिनीशक्ति के प्रयोग-अमृत से अभिषिञ्चित कर विधिवत् पूजन करे।

ऐशान्यां-ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अमुकानन्दनाथभैरवस्तृप्यतां। वह्नौ-परमगुरु०। नैर्ऋत्यां-परमेष्ठीगुरु०। वायव्ये-परमाचार्य०। त्रिः सकृद् वा सन्तर्प्य विन्दौ-मूलं श्रीभुवनेश्वरी भगवती सेश्वरा सवाहना सपरिकरा तृप्यतां इति त्रिःसन्तर्प्य परिवारदेवताः सन्तर्पयेद्।

ईशान कोण में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अमुकानन्दनाथभैरवस्तृप्यताम् कहकर भैरव का, वह्निकोण में भैरव के स्थान पर परमगुरु, नैर्ऋत्य कोण में परमेष्ठी गुरु, वायव्यकोण में परमाचार्य का तीन बार या एक बार भली-भाँति तर्पण करके बिन्दु पर मूलमन्त्र श्री भुवनेश्वरी भगवती सेश्वरा सवाहना सपरिकरा तृप्यतां कहकर तीन बार भुवनेश्वरी देवी का तर्पण कर, परिवार, देवताओं का तर्पण करे।

ह्रां ह्रदयं तृप्यतां, ह्रीं शिरस्तृप्यतां, ह्रूं शिखा तृप्यतां, ह्रैं कवचं तृप्यतां, ह्रौं नेत्रत्रयं तृप्यतां, ह्रः अस्त्रं तृप्यतां। ह्रीं हल्लेखा तृप्यतां, ऐं गगना तृप्यतां, उं रक्ता तृप्यतां, इं करालिका तृप्यतां, औं महौच्छुष्मा तृप्यतां, गं गंगा तृप्यतां, यं यमुना तृप्यतां, सं सरस्वती तृप्यतां, गायत्रीसहितब्रह्मा तृप्यतां, सावित्रीसहितविष्णुस्तृप्यतां, सरस्वतीसहितरुद्रस्तृप्यतां, लक्ष्मीसहितकुबेरस्तृप्यतां, रतिसहितमदनस्तृप्यतां, पुष्टिसहितविघ्नराजस्तृप्यतां, शङ्खनिधिस्तृप्यतां, पद्मनिधिस्तृप्यतां, अनङ्गकुसुमातृप्यतां, अनंगकुसुमातुरा तृप्यतां, अनंगमदना तृप्यतां, अनंगमदनातुरा तृप्यतां, अनंगमेखला तृप्यतां, भुवनपालास्तृप्यतां, गगनवेगास्तृप्यतां, शशिरेखा तृप्यतां, कराली तृप्यतां, विकराली तृप्यतां, उमा तृप्यतां, सरस्वती तृप्यतां, श्रीस्तृप्यतां, दुर्गा तृप्यतां, उषास्तृप्यतां, लक्ष्मीस्तृप्यतां, श्रुतिस्तृप्यतां, स्मृतिस्तृप्यतां, धृतिस्तृप्यतां,

श्रद्धा तृप्यतां, मेधा तृप्यतां, मतिस्तृप्यतां, कीर्तिस्तृप्यतां, आर्या तृप्यतां, ब्राह्मी तृप्यतां, माहेश्वरी तृप्यतां, कौमारी तृप्यतां, वैष्णवी तृप्यतां, वाराही तृप्यतां, ऐन्द्री तृप्यतां, चामुण्डा तृप्यतां, महालक्ष्मीस्तृप्यतां, अनंगरूपा तृप्यतां, अनंगमदना-तृप्यतां, अनंगमदनातुरा तृप्यतां, भुवनवेगा तृप्यतां, भुवनपालिका तृप्यतां, सर्वशिशिरा तृप्यतां, अनंगवेदना तृप्यतां, अनंगमेखला तृप्यतां, इन्द्रस्तृप्यतां, अग्निस्तृप्यतां, यमस्तृप्यतां, नैर्ऋतिस्तृप्यतां, वरुणस्तृप्यतां, वायुस्तृप्यतां, कुबेर-स्तृप्यतां, ईशानस्तृप्यतां, ब्रह्मा तृप्यतां, अनन्तस्तृप्यतां, वज्रस्तृप्यतां, शक्तिस्तृप्यतां, दण्डस्तृप्यतां, खड्गस्तृप्यतां, पाशस्तृप्यतां, ध्वजस्तृप्यतां, गदा तृप्यतां, त्रिशूलस्तृप्यतां, पद्मस्तृप्यतां, चक्रं तृप्यताम् ।

इति परिवारदेवताः सन्तर्प्य, पुनः प्राणायामादि विधाय, देवीं स्वहृदि विसृज्य तीर्थं स्वस्थाने विसृजेत् । इति तर्पणम् ॥

ह्रां हृदयं तृप्यतां आदि कहते हुये परिवार देवताओं का तर्पण करके अन्त में पुनः प्राणायाम और न्यासादि करकें देवी का अपने हृदय में तथा तीर्थ का अपने-अपने स्थानों पर विसर्जन करे ।

ततः ॐ वज्रोदके हूँ फट् स्वाहा इत्यनेन जलकुम्भं गृहीत्वा, मूलं स्मरन् यागगेहमागत्य—

तब ॐ वज्रोदके हूँ फट् स्वाहा इस मन्त्र से जलभरा घड़ा लेकर मूलमन्त्र का स्मरण करता हुआ याग गेह (पूजा) स्थान में आना चाहिए ।

ॐ ह्रीं विशुद्धसर्वपापानि शमयाशेषं विकल्पमपनय हूं इत्यनेन हस्तपादौ प्रक्षाल्य, पूर्ववदाचम्य, द्वाराग्रे स्थित्त्वा, स्वदक्षे वक्ष्यमाणक्रमेण सामान्यार्घ्यं कृत्वा, तेन जलेन द्वारदेवताः सम्पूजयेत् । यथा—

'ॐ ह्रीं विशुद्ध सर्वपापानि शमयाशेषं विकल्पमपनय हूँ' इस मन्त्र से हाथ पैरों को धोकर पहले की भाँति आचमन करे, तब द्वार के आगे स्थित हो अपने दाहिने बताये क्रम से सामान्यार्घ्य करके उसके जल से द्वारदेवता का पूजन करे । जैसे—

द्वारोर्ध्वे-गं गणपतये नमः, दक्षे-वां वटुकाय नमः, वामे-क्षं क्षेत्रपालाय नमः, अधः-यां योगिनीभ्यो नमः, दक्षे-गं गङ्गायै नमः, वामे-यं यमुनायै नमः, पुनर्दक्षे-श्रीं श्रियै नमः, वामे-सं सरस्वत्यै नमः ।

इति सम्पूज्य वामाङ्गसङ्कोचनेन मण्डपान्तर्गत्वा ।

निर्दिष्टभाग में गं गणपतये नमः इत्यादि मन्त्रों से पूजन करे और बायें अङ्गों का सङ्कोचन करता हुआ पूजामण्डप में प्रवेश करे ।

नैर्ऋत्ये-ब्रह्मणे नमः वास्तुपुरुषाय नमः ।

इति सम्पूज्य, भूमौ चतुष्कोणमण्डलं विधाय तत्रासनमास्तीर्य चतुष्कोणे ह्रीं आधारशक्तिकमलासनाय नमः । इति सम्पूज्य ।

नैर्ऋत्यकोण में ब्रह्मणे नमः, वास्तुपुरुषाय नमः कहकर पूजन करके पृथ्वी पर एक चौकोर मण्डल बनाये । वहाँ आसन बिछाकर ह्रीं आधारशक्तिकमलासनाय नमः कहकर पूजन करे ।

तदुपरि कुशविष्टरं दत्वा, कृताञ्जलिः पठेत् । यथा—

ॐ अस्य श्री आसनमन्त्रस्य मेरुपृष्ठऋषिः, सुतलं छन्दः, कूर्मो देवता आसनारोपणे विनियोगः ।

उस पर कुशा का विष्टर बिछाकर अञ्जलि बनाकर ॐ अस्य श्रीआसनमन्त्रस्य मेरुपृष्ठऋषिः सुतलं छन्दः कूर्मो देवता आसनारोपणे विनियोगः इस मन्त्र को पढ़े ।

इति स्मृत्वा न्यासं कुर्यात् ।

इस प्रकार स्मरण (विनियोग) करके न्यास करे ।

मेरुपृष्ठऋषये नमः शिरसि सुतलछन्दसे नमः मुखे कूर्मदेवतायै नमः हृदि आसनारोपणे विनियोगाय नमः सर्वांगेषु इति विन्यस्यासनं पूजयेत् ।

इस प्रकार विन्यासकरके आसन की पूजा करे । यथा—जैसे—

ॐ मण्डूकाय नमः । कालाग्निरुद्राय नमः । आधारशक्तये नमः । मूलप्रकृत्यै नमः । कूर्माय नमः । अनन्ताय नमः । पृथिव्यै नमः । सुधासमुद्राय नमः । मणिद्वीपाय नमः । चिन्तामणिगृहाय नमः । पारिजाताय नमः । रत्नवेदिकायै नमः ।

इति गन्धादिना कुशविष्टरं सम्पूज्य । तदुपरि वीराद्यासनेनोपविश्य ।

उपर्युक्त ॐ मण्डूकाय नमः इत्यादि मन्त्रों से गन्धादि द्वारा उस कुश-विष्टर की पूजा कर उस पर वीरासनादि आसन में बैठे ।

यथा—

ॐ पृथ्वित्वयाधृता लोका देवि! त्वं विष्णुनाधृता ।
त्वञ्चधारय मां नित्यं पवित्रं कुरुचासनम् ॥

इति पठित्वा सम्विदं यथा मन्त्रं स्वीकुर्यात् ।

'ॐ पृथ्वी त्वया धृता लोका देवित्वं विष्णुना धृता । त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम्' इसे पढ़े तथा मन्त्रानुसार संविदाग्रहण को प्रवृत्त हो ।

मन्त्रार्थ—हे पृथ्वी देवि ! तुम्हारे द्वारा समस्तलोक धारण किये गये हैं, तुम विष्णु द्वारा धारण की गई हो, ऐसी तुम, मुझे धारण करो और मेरे इस आसन को पवित्र करो ।

ॐ संविदे ब्रह्मसंभूते ब्रह्मपुत्रि सदानघे ।
ब्राह्मणानां च तृप्त्यर्थं पवित्राभव सर्वदा ॥
ॐ ब्राह्मण्यै नमः स्वाहा ॥
ॐ सिद्धिमूलाक्षये देवि! हीनबोधप्रबोधिनि ! ।
राजप्रजावशङ्करि! शत्रुपक्षनिषूदिनि ॥
ऐं क्षत्रियायै नमः स्वाहा ॥
ॐ प्रज्ञानेन्धनदीप्ताग्ने ज्ञानाग्निब्रह्मरूपिणि ।
आनन्दास्याहुतिं प्रींतिं सम्यग् ज्ञानं प्रयच्छ मे ॥
ह्रीं वैश्यायै नमः स्वाहा ॥
ॐ नमस्यामि नमस्यामि योगमार्गप्रदर्शिनि ।
त्रैलोक्यविजये मातः! समाधिफलदा भव ॥
क्लीं शूद्रायै नमः स्वाहा ॥

ॐ संविदे ब्रह्मसंभूते से क्लीं शूद्रायै नमः स्वाहा मन्त्रचतुष्टय को पढ़कर विजया का संशोधन करे ।

हे ब्रह्म से उत्पन्न, ब्रह्म पुत्री संविदा देवि ! आप सदैव अध (पाप) रहित हैं, आप ब्राह्मणों की तृप्ति हेतु सदैव पवित्र होओ ।

हे सिद्धिभूता नामक कभी क्षय न होने वाले देवी ! आप हीनों (दुर्बलों) का प्रबोधन करने वाली हैं । आप राजा एवं प्रजा दोनों को ही वश में करने वाली हैं । आप शत्रुपक्ष को भी नष्ट करने वाली है ।

प्रज्ञान के इन्धन से दीप्त अग्नि वाली, ज्ञानाग्नि के रूप में ब्रह्म स्वरूपिणी । आप आनन्द की आहुति स्वरूप सम्यक् ज्ञान मुझे प्रदान करें ।

हे योग मार्ग प्रदर्शित करने तथा तीनों लोकों का विजय प्रदान करने वाली माता ! आपको बारम्बार नमस्कार है । आप समाधि का फल देने वाली होइये ।

ॐ अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि अमृतमाकर्षय आकर्षय सिद्धिं देहि देहि श्रीभुवनेश्वरीपदं मे वशमानय स्वाहा ।

इति तदुपरि मूलमन्त्रं सप्तधा प्रजप्य ।

इस प्रकार संशोधन कर ॐ अमृते अमृतोद्भवे.......श्रीभुवनेश्वरीपदं मे

वशमानयम स्वाहा इस मन्त्र को पढ़कर संशोधित करके उस पर सात बार मूलमन्त्र पढ़कर विजया को संशोधित करे।

ततो मूलं आगच्छ आगच्छ, मूलं सन्तिष्ठ सन्तिष्ठ मूलं सन्निधत्स्व सन्निधत्स्व, मूलं सन्निधेहि सन्निधेहि।

इति मुद्राः प्रदर्श्य। छोटिकाभिर्दशदिग्बन्धं विधाय। तालत्रयपुरस्सरं दिव्यदृष्ट्या पार्ष्णिघातत्रयेण विघ्नान् निवार्य। सहस्रारपद्मे तत्त्वमुद्रया श्रीगुरुपादुकां त्रिधा सन्तर्प्य। स्वहृदि सप्तधा देवीं सन्तर्प्य।

तब मूलं आगच्छ....सन्निधेहि तक पढ़ते हुए आवाहनादि (आवाहन, स्थापन, सन्निधान) मुद्राओं के प्रदर्शनसहित मन्त्रपाठ करके। छोटिका आदि से दिग्बन्धन करे। इस दिग्बन्धनक्रम में तालत्रय (तीन बार ताली बजा), दिव्य-दृष्टि से तीन बार देखकर, पार्ष्णि (एड़ी) के आघात आदि क्रियाओं से भौम, दिव्य, आन्तरिक्षादि विघ्नों का अपसारण करे तत्पश्चात् सहस्रारकमल में तत्त्वमुद्रा से विजया से तीन बार गुरुपादुका का तर्पण करे और अपने हृदय में देवी का सातबार तर्पण करे।

ऐं वद वद वाग्वादिनि ! मम जिह्वाग्रे स्थिरा भव। सर्वतत्त्ववशङ्करि स्वाहा।

इत्यनेन मुखे संविदं तत्त्वमुद्रया जुहुयात्। इति संविद् विधिः ।।

ऐं वद वद वाग्वादिनी मम जिह्वाग्रे स्थिरा भव सर्वतत्त्व वशंकरि स्वाहा कहते हुए तत्त्वमुद्रासे मुख में छोड़े। यह संविदविधि सम्पन्न हुई।

तत आनन्दमयो भूत्वा वामकर्णोर्ध्वे श्रीमच्छ्रीअमुकानन्दनाथपादुकाभ्यां नमः। दक्षे गं गणपतये नमः। मध्ये श्रीभुवनेश्वर्यै नमः। इति नत्वा।

संविदाग्रहण के पश्चात् साधक आनन्दमय हो वामकर्ण के ऊर्ध्वभाग में श्रीमच्छ्रीअमुकानन्दनाथगुरुपादुकाभ्यांनमः कहकर स्वगुरु पादुका को, दाहिनी ओर गं गणपतये नमः, मध्य में श्री भुवनेश्वर्यै नमः कहकर श्री भुवनेश्वरी माता को नमस्कार करे।

मूलेन पूजोपकरणमभिमन्त्र्य। स्वदक्षे गन्धपुष्पादिकं निधाय। वामे सुगन्धजलकुम्भं निधाय। देवतायाः पश्चिमे कुलद्रव्याणि निधाय। पुष्पादिकं शोधयेद्।

तब मूलमन्त्र से पूजा के उपकरणों को अभिमन्त्रित करे। अपने दाहिने भाग में गन्धपुष्पादि, बाएँभाग में सुगन्धितजल का कलश, देवता के पश्चिमभाग में कुलद्रव्य की स्थापना करे। तत्पश्चात् पुष्पशोधन की क्रिया करे।

ॐ शताभिषेके हूं फट् स्वाहा। ॐ पुष्पकेतुराजार्हा शताय सम्यक् सम्बद्धाय हुं। पुष्पे पुष्पे महापुष्पे सुपुष्पे पुष्पसम्भवे। पुष्पप्रचयावकीर्णे हूं फट् स्वाहा।

इति पुष्पाभिमन्त्रणम् । अन्यगन्धादिकं मूलेनाभिमन्त्रयेत् ।

ॐ शताभिषेके.......पुष्प चयावकीर्णे हूँ फट् स्वाहा पर्यन्त तीन मन्त्रों से पूजा के फूलों को अभिमन्त्रित करे तथा अन्य गन्धादि पदार्थों को मूलमन्त्र से अभिमन्त्रित करना चाहिए ।

अपसर्पन्तु ते भूता, ये भूता भूमिसंस्थिताः ।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥
पाखण्डकारिणो भूता, भूता भूम्यन्तरिक्षगाः ।
दिवि लोके स्थिता ये च, ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥

इति तर्जनीमध्यमाभ्यामूर्ध्वोर्ध्वं तालत्रयदानेन, वामपार्ष्णिघातत्रयेण दिव्यदृष्ट्या च विविधविघ्नानुत्सार्य । छोटिकाभिर्दशदिग्बन्धं विधाय । चतुर्दिक्षु वह्निप्राकारं संचिन्त्य प्राणायामत्रयं कुर्यात् ।

तव अपसर्पन्तु........शिवाज्ञया इन दो मन्त्रों से तर्जनी और मध्यमा से ऊर्ध्व में तीन तालियाँ बजाकर बाएँ पैर की एंड़ी से तीन घात कर, दिव्यदृष्टि से अनेक प्रकार के विघ्नों का उत्सारण कर, चुटकी आदि से दशों दिशाओं में दिग्बन्धन करे और चारो दिशाओं में अग्नि की चहारदीवारी का चिन्तन करे । तब तीन प्राणायाम करे ।

इडया पिव षोडशभिः पवनं, कुरु षष्टिचतुष्टयमन्तरगम् । त्यज पिङ्गलया शनकैः शनकैर्दशभिर्दशभिर्ह्यधिकैर्द्वादशैः ॥ इत्युक्तरीत्या प्रणवं षोडशवारमुच्चरन् दक्षांगुष्ठेन दक्षनासापुटं निरुध्य, वामेन पवनं पूरयेत् । ततस्तमेव चतुषष्टिवारमुच्चरन् दक्षनासां कनिष्ठिकाऽनामिकाभ्यां वामं पुटं च निरुध्य, द्वाभ्यां पवनं कुम्भयेत् । ततस्तमेव द्वात्रिंशद्वारमुच्चरन् वामं पुटं तथैव निरुध्य, दक्षेण पवनं रेचयेत् । इत्येकः प्राणायामः । एष एव विपर्ययेण कृते द्वितीयः । प्रथमवत् तृतीयः ।

इत्थं प्राणायामत्रयेण निरस्तसकलकलुषं देवताराधनयोग्यं स्वदेहं विभाव्य भूतशुद्धिं कुर्यात् ।

प्राणायामत्रय विधान

इडा से १६ बार वायु को पीये, ६४ बार अन्तर्गम (भीतर धारण) करे तब पिङ्गला से धीरे-धीरे उसे ३२ बार में छोड़े, इस रीति से १६ बार प्रणव (ह्रीं) का उच्चारण करता हुआ दाहिने अंगूठे से दाहिने नासापुट को बन्द कर बाएँ से वायुपूरित करे। तब उसी प्रकार चौसठ बार उच्चारण कर दाएँ और बाएँ दोनों ही नासिकाछिद्र को कनिष्ठा और अनामिका से बन्द कर दोनों से वायु को रोक कर कुम्भक करे । तत्पश्चात् उसीका बत्तीस बार उच्चारण करता हुआ बाईं नासिका को उसी प्रकार बन्द

कर दाहिने से वायु को छोड़े। ऐसा करने से एक प्राणायाम् सम्पन्न होता है। इसी को उलटे (बायें से पूरक और दाहिने से रेचक) करने पर दूसरा और पहले की ही भाँति तीसरा प्राणायाम सम्पन्न होता है। इस प्रकार तीन प्राणायाम से समस्त दोषों को निरस्त कर साधक, पहले अपने शरीर को देवता के आराधन के योग्य बनाये तदुपरांत भूतशुद्धि करे।

भूत शुद्धि

पादादिजानुपर्यन्तं पृथ्वीस्थानं चतुरस्रं वज्रलांछितं पीतवर्णं। ब्रह्मदैवतं निवृत्तिकलाऽधिष्ठितं 'लं' बीजयुतं ध्यात्वा। जान्वादिनाभिपर्यन्तमपां स्थानं शुक्लवर्णमर्धचन्द्राकारं शृङ्गद्वयेऽपि पद्मलांछितं विष्णुदैवतं प्रतिष्ठाकलाऽधिष्ठितं 'वं' बीजयुक्तं ध्यात्वा। नाभ्यादिकण्ठपर्यन्तं वह्निमण्डलं स्वस्तिकोपेतं त्रिकोणाकारं रक्तवर्णं रुद्रदैवतं विद्याकलाऽधिष्ठितं 'रं' बीजयुतं ध्यात्वा। कण्ठादिभ्रूमध्यपर्यन्तं वायुमण्डलं षट्कोणाकारं षडविन्दुलांछितं वृत्तोपेतं कृष्णवर्णमीश्वरदैवतं शान्तिकलाऽधिष्ठितं 'यं' बीजयुतं ध्यात्वा। भ्रूमध्यादिब्रह्मरन्ध्रान्तमाकाशस्थानं वृत्ताकारं ध्वजलांछितं धूम्रवर्णं सदाशिवदैवतं शान्त्यतीताकलाऽधिष्ठितं 'हं' बीजयुतं ध्यात्वा। तत्र पञ्चभूतमये देहे धर्मकन्दसमुद्भूतं ज्ञाननालकमैश्वर्याष्टदलोपेतं वैराग्यकर्णिकं स्वहृदयारविन्दं ध्यात्वा। तत्कर्णिकायां जीवात्मानमग्रमात्रं प्रदीपकलिकाभास्वरमानादित्वासंछिन्नपरचिद्रूपं संञ्चिन्त्य। प्रागुक्तरूपेण मूलाधारात् कुण्डलिनीमुत्थाप्य सुषुम्णावर्त्मना मूलाधाराद्यनाहतान्तःस्थवर्णादिदेवतां ग्रसन्तीं हृदयकमलमानीय। तया कवलीकृतं जीवात्मानं ध्यायन्। सुषुम्णावर्त्मना विशुद्धादिचक्रस्थवर्णादिदेवतां ग्रसन्तीं ब्रह्मरन्ध्रं नीत्वा। तत्र स्थितसहस्त्रदलकमलकर्णिकामध्यवर्तिनि परमात्माज्योतिषि। समस्तवर्णदेवताकदम्बकं जीवात्मानं 'हंस' इति मन्त्रेण संयोज्य। कुण्डलिनीं स्वस्थानमानीय तत्त्वसंहारं कुर्यात्।

भूतशुद्धिक्रम में पैर से घुटने तक पृथ्वीस्थान जो वज्रचिन्हयुक्त, पीतवर्ण, चौकोरआकृति का है। जो देवता ब्रह्मा, निवृत्तिकला और लं बीज युक्त है, का ध्यान करना चाहिए। घुटने से नाभि तक जलतत्त्व का जो शुक्लवर्ण, अर्धचन्द्राकार, दोनों श्रृंगों पर पद्मचिन्हयुक्त विष्णुदेवता, प्रतिष्ठाकला तथा वं बीजयुक्त है का ध्यान करे। नाभि से कण्ठपर्यन्त स्वास्तिक चिह्नमय, त्रिकोण, वह्निमण्डल, का जो रक्त- वर्ण, रुद्रदेवता, विद्याकला अधिष्ठित, रं बीज युक्त हैं, ध्यान करे। कण्ठ से भ्रूमध्यपर्यन्त वायुमण्डल का जो षट्कोणआकृति, षड्विन्दु से चिह्नित, वृत्तयुक्त काले रंग, ईश्वरदेवता, शान्तिकला और यं बीज से विभूषित है, ध्यान करे। भ्रूमध्य से ब्रह्मरन्ध्र तक ध्वजचिह्नयुक्त वृत्ताकार, आकाशतत्त्व के स्थान का जो धूम्रवर्ण, सदाशिवदेवता,

शान्त्यातीतकला अधिष्ठित, हं बीजयुक्त है, ध्यान करे। यहाँ तक साधक के शरीर में स्थित पञ्चभूतों के स्थान, आकृति, देवता, कला, वर्ण और बीज का ध्यान बताया गया। इनका अलग-अलग ध्यान कर लेने के बाद पञ्चभूतमय शरीर में धर्मकन्द से उत्पन्न ज्ञानानल युक्त ऐश्वर्याष्टदल, वैराग्यकर्णिकायुक्त अपने हृदय- कमल की भावना करनी चाहिए। तत्पश्चात् उस पद्म की कर्णिका में नोकमात्र, दीपक की ज्वाला के अग्रभाग के समान, प्रकाशित, अनादिपूर्ण पर चिद्रूप जीवात्मा का ध्यान करना चाहिए। इस प्रकार तत्त्वस्थान और जीवात्मा की भावना करने के पश्चात् पहले बताई गई विधि से कुण्डलिनीशक्ति को मूलाधार से उठाकर अनाहदचक्र तक विविधवर्ण देवता आदि को ग्रसती हुई, सुषुम्णा के मार्ग से हृदयकमल तक लाना चाहिए। पूर्ववर्णित जीवात्मा का कुण्डलिनीग्रसित अवस्था में ध्यान करे तथा जीवात्मायुक्त कुण्डलिनी को अग्रिम विशुद्धादि चक्रों से होते हुए उनके वर्णादि देवतादि को ग्रसते हुए ब्रह्मरन्ध्र तक ले जाने की भावना करे। वहाँ ब्रह्मरन्ध्रस्थित सहस्रदलकमल के कर्णिका के मध्यवर्ती परमात्मज्योतिरूप समस्त वर्णदेवताओं के समूह जीवात्मा को 'हंस' इस मन्त्र से समन्वित करे। पुनः वहाँ से वापस कुण्डलिनी को, उसके अपने स्थान (मूलाधार) में लाकर साधक तत्त्वसंहार की क्रिया सम्पन्न करे।

तत्र पृथिवीस्थाने पादेन्द्रियगमनक्रियागन्तव्यगन्धघ्राणपृथिवीब्रह्मनिवृत्ति-समानवायुं संस्मृत्य। ॐ ह्रां ब्रह्मणे पृथिव्यधिपतये निवृत्तिकलात्मने हुँ फट् स्वाहा। इति मन्त्रेण तान् कुण्डलिनीद्वारा अपां मध्ये संहरेत्।

तत्त्वसंहारक्रम में सर्वप्रथम पृथिवीस्थान में पादइन्द्रिय, गमनक्रिया, गन्तव्य, गन्धगुण, घ्राणज्ञानेन्द्रिय, पृथिवीतत्त्व, ब्रह्मादेवता, निवृत्तिकला, समानवायु, आदि का स्मरण करता हुआ 'ॐ ह्राँ ब्रह्मणे पृथिव्याधिपतये निवृत्तिकलात्मने हुँ फट् स्वाहा' इस मन्त्र से उनका कुण्डलिनी के माध्यम से जलतत्त्व में संहार करे।

ततोऽपां स्थानं हस्तदानदातव्यरसरसनाविष्णुप्रतिष्ठोदानान् संचिन्त्य—ॐ ह्रीं विष्णवे जलाधिपतये प्रतिष्ठाकलात्मने हुँ फट् स्वाहा। इति तान् सर्वान् कुण्डलिनीद्वारा वह्नितत्त्वे संहरेत्।

तब जलस्थान में स्थित हस्त, दान, दातव्य, रस, रसनाइन्द्रिय विष्णुदेवता प्रतिष्ठाकला, उदानवायु का चिन्तन करता हुआ 'ॐ ह्रीं विष्णवे जलाधिपतये प्रतिष्ठाकलात्मने हुँ फट् स्वाहा' कहकर उन सबका कुण्डलिनी के माध्यम से अग्नि-तत्त्व में संहार करे।

ततो वह्निस्थाने पायुविसर्गविसर्जनीयरूपतत्त्ववह्निरुद्रविद्याव्यानान् संस्मृत्य-ॐ ह्रूं रुद्राय तेजोऽधिपतये विद्याकलात्मने हुं फट् स्वाहा। इति मन्त्रेण तान् सर्वान् वायुमण्डले संहरेत्।

तब वह्निस्थान में वायु, विसर्ग, विसर्जनीय, रूपतत्त्व, वह्निभूत, रुद्रदेवता, विद्याकला, व्यानवायु का संस्मरण करता हुआ 'ॐ ह्रूँ रुद्राय तेजोऽधिपतये विद्याकलात्मने हुँ फट् स्वाहा' इस मन्त्र से उन सभी का वायुमण्डल में संहार करे।

ततो वायुस्थाने उपस्थानन्दतद्विषयस्पर्शस्पृष्टव्यवाय्वीश्वरशान्त्यपानान् संस्मृत्य- ॐ ह्रैं ईश्वराय वाय्वधिपतये शान्तिकलात्मने हुँ फट् स्वाहा। इति तान् सर्वानाकाशस्थाने संहरेत्।

तब वायुस्थान में उपस्थ, आनन्द और उसके विषय स्पर्श, स्पृष्टव्य, वायुतत्त्व, ईश्वरदेवता, शान्तिकला, अपानवायु का स्मरण करता हुआ 'ॐ ह्रैं ईश्वराय वाय्वधिपतये विद्याकलात्मने हुँ फट् स्वाहा' कहकर उन सबका आकाशस्थान में संहार करे।

तत आकाशस्थाने वाग्वचवक्तव्यशब्दसदाशिवशान्त्यतीताप्राणान् संस्मृत्य— ॐ ह्रौं सदाशिवायाकाशाधिपतये शान्त्यतीता कलात्मने हुँ फट् स्वाहा। इति तान् सर्वान् कुण्डलिन्यां संहृत्य।

तब आकाशस्थान में वाक्, वचन, वक्तव्य, शब्दगुण, सदाशिवदेवता, शान्त्यातीताकला, प्राणवायु का स्मरण करता हुआ 'ॐ ह्रौं सदाशिवायाकाशाधिपतये शान्त्यातीताकलात्मने हुँ फट् स्वाहा' कहकर उन सबका कुण्डलिनी में ही संहार करे।

तां विन्दुशक्तौ विन्दुशक्तिं, नादशक्तौ नादशक्तिं, परमशक्तौ प्रणवेन संहृत्य— ॐ ह्रीं ह्रूं फट् स्वाहा इति तां परमशक्तिं पूर्वोक्तपरमात्मनि संयोज्य।

अपने में सभी तत्त्वों की संहरण, की उस कुण्डलिनी का विन्दुशक्ति में विदुशक्ति का नादशक्ति में नादशक्ति का परमशक्ति में परमशक्ति का प्रणव में संहार कर 'ॐ ह्रीं हुँ फट स्वाहा' से उस प्रणवयुक्त परमशक्ति का पूर्वोक्त परमात्मा में संयोजन करना चाहिए।

केवलशरीरे वामकुक्षौ पापपुरुषं चिन्तयेत्। तद् यथा—

वामकुक्षिस्थितं पापपुरुषं कज्जलप्रभम्।
ब्रह्महत्याशिरस्कं च स्वर्णस्तेयभुजद्वयम्॥
सुरापानहृदायुक्तं गुरुतल्पकटिद्वयम्।
तत्संसर्गपदद्वन्द्वसङ्गप्रत्यङ्गपातकम्॥
उपपातकरोमाणं रक्तश्मश्रुविलोचनम्।
खड्गचर्मधरं क्रुद्धं पापं कुक्षौ विचिन्तयेत्॥

इति पापपुरुषं विचिन्त्य ।

अब तत्त्वसंहरण के पश्चात् केवल शरीर के वामकुक्षि में पापपुरुष का चिन्तन करे—

शरीर के वामकुक्षि में स्थित पापपुरुष जो काजल के समान प्रभावाले हैं । ब्रह्महत्या जिनका सिर और स्वर्ण की चोरी जिनकी दोनों भुजाएँ हैं । जो सुरापान हृदय से युक्त हैं, गुरु की शय्या उनकी दोनों कटि है । उनका संसर्ग दोनों पैर एवं अङ्ग-प्रत्यङ्ग पातक हैं । उपपातक उसके रोम, दाढ़ी-मूँछ और नेत्र रक्तवर्ण हैं । वे खड्ग-चर्म धारण किये हुए हैं । ऐसे क्रोधित पापपुरुष का कुक्षि में विशेष रूप से चिन्तन करना चाहिए। इस प्रकार पापपुरुष का चिन्तन सम्पन्न करे ।

वामनासारन्ध्रेण यं बीजेन सह वायुमापूर्य नाभिस्थषट्कोणाकारे वायुमण्डले संयोज्य। तत्र यं इति वायुबीजं कृष्णवर्णां संचिन्त्य। कुम्भकेन यं इति वायुबीजमावर्तयन् तदुत्थितेन महावायुना स्वपापपुरुषं स्वशरीरस्थं संशोष्य वायुं दक्षिणनासया विरेच्य । पुनर्दक्षिणनासया 'रं' बीजेन सह वायुमापूर्य। मूलाधारे संयोज्य । तत्रस्थ वह्निमण्डले रं इति बीजं रक्तवर्णं विचिन्त्य कुम्भकेन रं इति बीजमावर्तयन् तदुत्थितमहावह्निना स्वपापपुरुषं स्वदेहस्थं सन्दह्य । पापपुरुषभस्मना सहितं वायुं वामनासया विरेच्य। पुनर्वामनासया विरेच्य । पुनर्वामनासया वं बीजेन सह वायुमापूर्य च ब्रह्मरन्ध्रे संयोज्य । तत्र स्थितचिच्चन्द्रमण्डले वं इत्यमृतबीजं शुक्लवर्णं विचिन्त्य कुम्भकेन वं बीजमावर्तयन् तत्र स्थितामृतधारया स्वदेहभस्मकृतं विचिन्त्य तं वायुं दक्षिणनासया विरेच्य। पुनर्दक्षिणनासया लं बीजेन वायुमापूर्य। मूलाधारस्थं पार्थिवमण्डले संयोज्य। तत्र लं इति पृथ्वीबीजं पीतवर्णं संचिन्त्य कुम्भकेन लं बीजमावर्तयन् तदुद्भूतेन तेजसा अमृतप्लावितभस्म, घनीकृत्य तं वायुं वामनासया विरेच्य। पुनर्वामनासया मायाबीजेन वायुमापूर्य मूलाधारस्थविन्दुमध्ये मायाबीजं स्फुरद्बालार्कवर्णं संचिन्त्य कुम्भकेनमायाबीजमावर्तयन् तेन करचरणाद्यवयवसमेतं स्वदेहं निष्पन्नं विभाव्य तं वायुं दक्षिणनासया विरेचयेत् ।

बाएँनासिकाछिद्र से 'यं' बीज के साथ वायुपूरित कर नाभिस्थषट्कोण ओंकार वायुमण्डल में संयोजित करे । वहाँ 'यं' इस वायुबीज का कृष्णवर्णात्मक चिन्तन करे । कुम्भक के द्वारा 'वं' इस वायु बीज का आवर्तन करते हुए उससे उठे महावायु से अपने शरीर में स्थित पापपुरुष का भली-भाँति शोषण कर वायु को दक्षिणनासिका से बाहर निकाले । पुनः दांई नासिका से 'रं' बीज के साथ वायु को पूरित कर मूलाधार में संयोजित करे । वहाँ स्थित वह्निमण्डल में 'रं' इस रक्तवर्णबीज का चिन्तन करते हुए कुम्भक से 'रं' इस बीजमन्त्र का आवर्तन करते हुए उससे उत्थित महाअग्नि से

अपने देह में स्थित अपने पापपुरुष को भली-भाँति जलाए एवं पापपुरुष के भस्मसहित वायु को वामनासिका से विरेचित करे। पुनः बाई नाक से 'वं' बीज के साथ वायु खींचे एवं उसे ब्रह्मरन्ध्र में संयोजित करे। वहाँ स्थित चित् चन्द्रमण्डल में वं इस शुक्लवर्ण के अमृत- बीज का चिन्तन करे तथा कुम्भकविधि से 'वं' बीज का आवर्तन करता हुआ वहाँ स्थित अमृतधारा से अपने शरीर को भस्म किया मानते हुए उस वायु को दाहिनीनाक से बाहर निकाले।

पुनः दाहिनीनाक से लं बीज से वायु को पूरित करे तथा मूलाधार में स्थित पार्थिवमण्डल से संयोजित करे। वहाँ लं इस पृथ्वीबीज का जो पीतवर्ण का है चिन्तन करता हुआ कुम्भक से लं बीज का आवर्तन करते हुए उससे उठे तेज से अमृत-प्लावितभस्म को घनीकृत कर उस वायु को वामनासिका से विरेचित करे। पुनः बाईं-नासिका से मायाबीज से वायुआपूरित कर मूलाधार में स्थित बिन्दु में बालसूर्य के समान स्फुरत प्रकाशमान मायाबीज का चिन्तन करते हुये कुम्भक से मायाबीज का आवर्तन कर उससे हाथ पैर आदि अवयवों सहित अपने शरीर को उत्पन्न मानकर उस वायु का दाहिनी नासिका से विरेचन करे।

इति स्थूलशरीरं निष्पाद्य सूक्ष्मशरीरं निष्पादयेत्। तद् यथा—

तत्र पूर्वोक्तसहस्त्रारकमलस्थपरमात्मनः सकाशात् सकलजगत्सिसृक्षाविजृम्भितपरब्रह्मस्वरूपिणीं शक्तिं 'ॐ ह्रीं नमः' इति परमात्मनः सकाशात् स्वस्थानमानीय। ततो नादशक्तिं ततो विन्दुशक्तिं प्रणवेन सृष्ट्यां विन्दुशक्तेः सकाशात् सकलजगत्सृष्टिहेतुभूतां कुण्डलिनीं प्रणवेन निःसार्य।

इस प्रकार स्थूलशरीर का निष्पादन कर सूक्ष्मशरीर का निष्पादन करे। जैसे—

पहले वर्णित सहस्रकमल में स्थित परमात्मा के समीप से सम्पूर्ण जगत की सृष्टि की इच्छा से विजृम्भित, परब्रह्मरूपिणीशक्ति को 'ॐह्रीं नमः' इस मन्त्र से परमात्मा के समीप से अपने स्थान पर ले आए तब नादशक्ति को तत्पश्चात् बिन्दुशक्ति को प्रणव से ले आए। सृष्टिक्रम में विन्दुशक्ति के समीप से सकल जगत की सृष्टिभूत, हेतुभूत कुण्डलिनी को प्रणव के माध्यम से बहिर्भूत करे।

ततः ॐ ह्रां सदाशिवायाकाशाधिपतये शान्त्यतीताकलात्मने नमः। इति प्राणान् शान्त्यतीतासदाशिवाकाशं श्रोत्रशब्दवक्तव्यवचनवाच आकाशस्थाने स्थापयेत्।

तब 'ॐ ह्रौं सदाशिवायाकाशाधिपतये नमः' इस मन्त्र से प्राणों को शान्त्यतीत-कला, सदाशिवदेवता, आकाशतत्त्व, श्रोत्रेन्द्रिय, शब्दगुण, वक्तव्य-वचन, वाक् आदि को आकाशस्थान में स्थापित करना चाहिए।

तत आकाशमण्डलात्—ॐ ह्रैं ईश्वराय वायव्याधिपतये शान्तिकलात्मने नमः । इति मन्त्रेणापानशान्तीश्वरवायुस्पृष्टव्यस्पर्शतद्विषयानन्दोपस्थान् वायुस्थाने स्थापयेत् ।

तब आकाशस्थान से ॐ ह्रैं ईश्वराय वायव्याधिपतये शान्तिकलात्मने नमः इस मन्त्र से अपानवायु, शान्तिकला, ईश्वरदेवता, वायुतत्त्व, स्पृष्टव्य, स्पर्श, तद्विषयक आनन्द उपस्थान को वायुस्थान में स्थापित करना चाहिए ।

ततः—ॐ ह्रूं रुद्राय तेजोऽधिपतये विद्याकलात्मने नमः । इति मन्त्रेण व्यानविद्यारुद्रतेजश्चक्षुरूपविसर्जनीयविसर्गपायून् अग्निस्थाने स्थापयेत् ।

तब ॐ ह्रूँ रुद्राय तेजोऽधिपतये विद्याकलात्मने नमः इस मन्त्र से व्यानवायु, विद्याकला, रुद्रदेवता, तेजतत्त्व, चक्षुइन्द्रिय, रूपतन्मात्रा, विसर्जनीयपदार्थ, विसर्गक्रिया सहित पायु को अग्निस्थान में स्थापित करना चाहिए ।

ततः ॐ ह्रीं विष्णवे जलाधिपतये प्रतिष्ठाकलात्मने नमः । इति मन्त्रेणोदानप्रतिष्ठाविष्णुजलरसनारसदातव्यादानहस्तानपां स्थापयेत् ।

तत्पश्चात् 'ॐ ह्रीं विष्णवे जलाधिपतये प्रतिष्ठाकलात्मने नमः' इस मन्त्र से उदानवायु, प्रतिष्ठाकला, विष्णुदेवता, जलतत्त्व, रसनेन्द्रिय, रसतन्मात्रा, दातव्य, आदान, हस्तकर्मेन्द्रिय को जलस्थान में स्थापित करना चाहिए ।

ततः ॐ ह्रां ब्रह्मणे पृथिव्याधिपतये निवृत्तिकलात्मने नमः । इति मन्त्रेण समाननिवृत्तिब्रह्मपृथिवीघ्राणगन्तव्यगमनक्रियापादेन्द्रियाणि पृथिवीस्थाने स्थापयेत् ।

तब 'ह्रां ब्रह्मणे पृथिव्याधिपतये निवृत्तिकलात्मने नमः' इस मन्त्र से समानवायु, निवृत्तिकला, ब्रह्मादेवता, पृथिवीतत्त्व, घ्राणेन्द्रिय, गन्तव्य, गमनक्रिया, पाद कर्मेन्द्रिय की पृथ्वीस्थान में स्थापना करनी चाहिए ।

ततः प्रणवेन कुण्डलिनीं स्वस्थाने स्थापयित्वा । नादशक्तिबिन्दुशक्तिपरमशक्तीनां प्रणवेन स्वदेहव्याप्तिं विभाव्य 'सोऽहं' इति मन्त्रेण ब्रह्मरन्ध्रस्थपरमात्मनः सकाशात् कुण्डलिनीं जीवात्मानं च संहृतवर्णवर्णादिदेवतासहितमाज्ञादिचक्रेषु तत्तद्वर्णवर्णादिदेवताः स्थापयन् हृदयकमलमानीय ।

तब प्रणव से कुण्डिलनी को उसके अपने स्थान में स्थापित करे । तत्पश्चात् प्रणव के माध्यम से नादशक्ति, बिन्दुशक्ति की स्वदेह में व्याप्ति की भावना करते हुए सोऽहं इस मन्त्र से ब्रह्मरन्ध्रस्थित परमात्मा के समीप से कुण्डलिनी और जीवात्मा को पकड़कर वर्ण, वर्णादि देवता, आज्ञा आदि चक्रों में उन-उन वर्ण एवं वर्णदेवताओं के सहित स्थापित करते हुए हृदय-कमल में ही ले आए ।

हृदयकमले जीवात्मानं स्थापयित्वा। कुण्डलिनीं सुषुम्णामार्गेण मणिपूरकादिचक्रेषु तत्तद्वर्णादिदेवताः स्थापयन् मूलाधारं नीत्वा तत्र स्थापयेत्। ततः स्वशरीरं निरस्तसमस्तकलुषं तेजोरूपं देवताराधनयोग्यं विभाव्य प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात्।

अब हृदयकमल में जीवात्मा को स्थापित करे। तब कुण्डलिनीशक्ति को सुषुम्णामार्ग से मणिपूरकादि चक्रों में सम्बद्ध वर्णदेवताओं की स्थापना करते हुए मूलाधार में लाकर स्थापना करे। अन्त में अपने शरीर के सभी कलुष को समाप्त कर तेजोरूप देवाराधनयोग्य मानते हुए प्राणप्रतिष्ठा करे।

इति भूतशुद्धि—इस प्रकार भूतशुद्धि की क्रिया सम्पन्न होती है।

प्राणप्रतिष्ठाविधि

तद्यथा—वह प्राणप्रतिष्ठा इस प्रकार होती है।

ॐ अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुशिवाः ऋषयः, ऋग्यजुःसामानि छन्दांसि, पराप्राणशक्तिर्देवता, आंबीजं, ह्रींशक्तिः, क्रोंकीलकं, मम श्रीभुवनेश्वर्यङ्गत्वेन प्राणप्रतिष्ठार्थे विनियोगः॥

इस क्रम में सर्वप्रथम ॐ अस्य.....विनियोगः पर्यन्त उच्चारण करता हुआ विनियोग करना चाहिए।

इति कृताञ्जलिः स्मृत्वा, न्यसेत्—

शिरसि ब्रह्मविष्णुशिवेभ्यः ऋषिभ्यो नमः। मुखे ऋग्यजुःसामेभ्यश्छन्दोभ्यो नमः। हृदि पराप्राणशक्तिदेवतायै नमः। गुह्ये आं बीजाय नमः। पादयोः ह्रीं शक्तये नमः। नाभौ क्रों कीलकाय नमः।

इति विन्यस्य 'मम प्राणप्रतिष्ठार्थे विनियोगः' इति कृताञ्जलिर्वदेत्। इति ऋष्यादिन्यासः।

शिरसि ब्रह्मविष्णुशिवेभ्य.....आदि मन्त्रों से ऋष्यादिन्यास सम्पन्न करे।

अथ करन्यासः—ॐ आं ह्रीं क्रों अं कं कं कं कं आकाशवाय्वग्निसलिलपृथिव्यात्मने आं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ आं ह्रीं क्रों इं चं चं चं चं शब्दस्पर्शरूपरसगन्धात्मने ईं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ आं ह्रीं क्रों उं टं टं टं टं श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वाघ्राणात्मने ऊं मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ आं ह्रीं क्रों एं तं तं तं तं वाक्पाणिपादपायूपस्थात्मने ऐं अनामिकाभ्यां हुं। ॐ आं ह्रीं क्रों ओं पं पं पं पं वचनादानविसर्गगमनानन्दात्मने ओं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ॐ आं ह्रीं क्रों अं यं यं यं यं मनोबुद्ध्यहङ्कारचित्तात्मने अः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। इति करन्यासः।

उपर्युक्त मन्त्रोच्चारपूर्वक करन्यास करे।

अथ षडङ्गन्यासः—ॐ आं ह्रीं क्रों अं कं कं कं कं आकाशवाय्वग्निसलिलपृथिव्यात्मने आं हृदयाय नमः। ॐ आं ह्रीं क्रों इं चं चं चं चं शब्दस्पर्शरूपरसगन्धात्मने ईं शिरसे स्वाहा। ॐ आं ह्रीं क्रों उं टं टं टं टं श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वाघ्राणात्मने ॐ शिखायै वषट्। ॐ आं ह्रीं क्रों एं तं तं तं तं वाक्पाणिपादपायूपस्थात्मने ऐं कवचाय हुं। ॐ आं ह्रीं क्रों ओं पं पं पं पं वचनादानविसर्गगमनानन्दात्मने औं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ आं ह्रीं क्रों अं यं यं यं यं मनोबुद्ध्यहङ्कारचित्तात्मने अः अस्त्राय फट्। इति षडङ्गः।

उपर्युक्त मन्त्रों से निर्दिष्टाङ्गस्पर्शपूर्वक षडङ्गन्यास सम्पन्न करे।

ततो नाभ्यादिपादद्वयान्तं आं नमः। हृदयादिनाभ्यन्तं ह्रीं नमः। मूर्धादिहृदयान्तं क्रों नमः। हृदयादिकमलमध्ये यं त्वगात्मने नमः। पूर्वदले रं असृगात्मने नमः। पश्चिमदले लं मांसात्मने नमः। आग्नेयदले वं मेदसात्मने नमः। वायव्यदले शं अस्थ्यात्मने नमः। ईशानदले षं मज्जात्मने नमः। नैर्ऋत्यदले सं शुक्रात्मने नमः। उत्तरदले हं प्राणात्मने नमः। दक्षिणदले लं जीवात्मने नमः। पुनः कर्णिकायां क्षं परमात्मने नमः। इति न्यसेत्।

तत्पश्चात् उपर्युक्त मन्त्रोच्चारपूर्वक न्यास कर अधोलिखितमन्त्र से ध्यान करे।

ध्यानम्

रक्ताब्धिपीतारुणपद्मसंस्थां पाशांकुशाविक्षुशरासबाणान्।
शूलं कपालं दधतीं कराब्जैः रक्तां त्रिनेत्रां प्रणमामि देवीम्॥

रक्तसमुद्र में पीले एवं लालमिश्रित कमल पर स्थित अपने कर-कमलों में बाणयुक्त, इक्षुधनुष, शूल, कपाल, धारण की हुई, लाल, तीननेत्रों वाली देवी को मैं प्रणाम करता हूँ।

इति ध्यात्वा, हृदि हस्तं निधाय, प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात्—

ऐसा ध्यान कर हृदय पर हाथ रखकर अपनी प्राणप्रतिष्ठा करे।

प्राणप्रतिष्ठामन्त्र

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं हौं हंसः सोऽहं मम प्राणा इह प्राणाः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं हौं हंसः सोऽहं मम जीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं हौं हंसः सोऽहं मम सर्वेन्द्रियाणि इह स्थितानि। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं हौं हंसः सोऽहं मम वाङ्मनस्त्वक्चक्षुः

श्रोत्रघ्राणप्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा ॥ इति प्राणप्रतिष्ठां त्रिर्जप्त्वा निजवपुर्ज्योतिर्मयं ध्यात्वा स्वमूलऋष्यादिस्मरणं कुर्यात् ।

इस प्रकार प्राणप्रतिष्ठामन्त्र का तीन बार जप कर साधक अपने शरीर को ज्योतिर्मय अनुभव करता हुआ अपने मूलमन्त्र के देवता, ऋषि आदि का स्मरण करे।

यथा—ॐ अस्य श्रीभुवनेश्वरीमन्त्रराजस्य श्रीशक्तिऋषिः, गायत्रीछन्दः, श्रीभुवनेश्वरीदेवता, हं बीजं, इं शक्तिः, रकारः कीलकं, धर्मार्थकाममोक्षार्थे न्यासे विनियोगः ॥ इति कृताञ्जलिः स्मृत्वा न्यसेत् ।

ऊपर लिखे विनियोग को अञ्जलि बनाकर पढ़े तब तत्सम्बन्धी अधोलिखित न्यास सम्पन्न करे—

श्रीशक्तिऋषये नमः शिरसि। गायत्रीछन्दसे नमः मुखे । श्रीभुवनेश्वरीदेवतायै नमः हृदि । हं बीजाय नमः गुह्ये । इं शक्तये नमः पादयोः । रं कीलकाय नमः नाभौ । धर्मार्थकाममोक्षार्थे न्यासे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गेषु । इति ऋष्यादिन्यासः ।

इस प्रकार ऋष्यादिन्यास सम्पन्न हुआ ।

ॐ अस्य श्रीभुवनेश्वरीत्र्यक्षरादिमन्त्रराजस्य श्रीदक्षिणामूर्ति ऋषिः पंक्तिश्छन्दः श्रीभुवनेश्वरीदेवता, ह्रीं बीजं, श्रीं शक्तिः, क्लीं कीलकं चतुर्विधपुरुषार्थसाधने जपे विनियोगः ॥ इति कृताञ्जलिः स्मृत्वा, न्यसेत् ।

इस प्रकार अञ्जलिनिर्माण कर विनियोग करने के पश्चात् अधोलिखितमन्त्रों से न्यास करे ।

अथ ऋष्यादिन्यासः—श्री दक्षिणामूर्तिऋषये नमः शिरसि । पंक्तिश्छन्दसे नमः मुखे । श्रीभुवनेश्वरीदेवतायै नमः हृदि । ह्रीं बीजाय नमः गुह्ये । श्रीं शक्तये नमः पादयोः । क्लीं कीलकाय नमः नाभौ । चतुर्विधपुरुषार्थसाधने जपे विनियोगाय नमः सर्वांगेषु । इति ऋष्यादिन्यासः ।

इस प्रकार ऋष्यादिन्यास सम्पन्न हुआ ।

अथ करन्यासः—ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः । ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा । ह्रूँ मध्यामाभ्यां वषट् । ह्रैं अनामिकाभ्यां हुं । ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट् । ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् । इति करन्यासः ।

ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः इत्यादि मन्त्रों से करन्यास सम्पन्न करे ।

अथ षडङ्गः । ह्रां हृदयाय नमः । ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रूं शिखायै वषट् । ह्रैं कवचाय हुं । ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् । ह्रः अस्त्राय फट् । इति स्वमूलषडङ्गं कृत्वाऽन्तर्मातृकान्यासं कुर्यात् ।

इस प्रकार अपने मूलमन्त्र से षडङ्गन्यास करके अन्तर्मातृकान्यास करे।

यथा तत्रादौ मातृकाप्राणायामो, यथा—

इस क्रम में सर्वप्रथम मातृकाप्राणायाम करे। जैसे—

अं आं इं ईं...........अं अः इति पूरकं। कं खं........भं मं-इति कुम्भकं। यं-हं लं क्षं-इति रेचकं विरचय्यान्तर्मातृकाऋष्यादिस्मरणं विदधीत, यथा—

अं आं.........अं अः से पूरक, कं खं........भं मं पर्यन्त वर्णों से कुम्भक तथा यं रं....क्षं से रेचक, पूर्वक मातृकाप्राणायाम सम्पन्न कर मातृकाऋष्यादि का स्मरण करना चाहिए। जैसे—

ॐ अस्य श्री अन्तर्मातृकान्यासस्य ब्रह्माऋषिः गायत्रीछन्दः श्रीअन्तर्मातृका-सरस्वतीदेवता हलोबीजानि स्वराःशक्तयः अव्यक्तंकीलकं मम श्रीभुवनेश्वर्यङ्गत्वेनान्त-र्मातृकान्यासे विनियोगः। इति कृताञ्जलिः स्मृत्वा न्यसेत्।

ॐ अस्य...........विनियोगः इस मन्त्र से अञ्जलि करके स्मरण करे तत्पश्चात् न्यास करे।

अथ ऋष्यादिन्यासः—ॐ ब्रह्मा ऋषये नमः शिरसि। अव्यक्तगायत्रीछन्दसे नमः मुखे। श्रीअन्तर्मातृकासरस्वतीदेवतायै नमः हृदि। हलोबीजेभ्यो नमः गुह्ये। स्वरशक्तिभ्यो नमः पादयोः। अव्यक्तकीलकाय नमः नाभौ। मम श्रीभुवनेश्वरी-पूजाङ्गत्वेनान्तर्मातृकान्यासे विनियोगाय नमः सर्वांगेषु। इति ऋष्यादिन्यासः।

ॐ ब्रह्मा ..... नमः सर्वाङ्गेषु मन्त्रों से ऋष्यादिन्यास सम्पन्न करे।

अथ करन्यासः—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं कं कं कं कं आं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं श्रीं इं चं चं चं चं ईं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ ह्रीं श्रीं उं टं टं टं टं ऊं मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ ह्रीं श्रीं एं तं तं तं तं ऐं अनामिकाभ्यां हुम्। ॐ ह्रीं श्रीं ओं पं पं पं पं औं कनिष्ठकाभ्यां वौषट्। ॐ ह्रीं श्रीं अं यं यं यं यं अः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। इति करन्यासः।

उपर्युक्त मन्त्रों को बोलते हुये करन्यास करे।

अथ षडङ्गन्यासः—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं कं कं कं कं आं हृदयाय नमः। ॐ ह्रीं श्रीं इं चं चं चं चं ईं शिरसे स्वाहा। ॐ ह्रीं श्रीं उं टं टं टं टं ॐ शिखायै वषट्। ॐ ह्रीं श्रीं एं तं तं तं तं ऐं कवचाय हुं। ॐ ह्रीं श्रीं ओं पं पं पं पं औं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ ह्रीं श्रीं अं यं यं यं यं अः अस्त्राय फट्। इति षडङ्गः।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं...........आदि मन्त्रों से षडङ्गन्यास सम्पन्न करे।

व्योमेन्द्वौ रसनार्णकर्णिकमचां द्वन्द्वैः स्फुरत्केशरम्।
पत्रान्तर्गतपञ्चवर्गयशलार्णादित्रिवर्गक्रमात् ॥
आशास्वस्त्रिषु लान्तलांगलियुजा क्षौणीपुरेणावृतम्।
पद्मं कल्पितमत्र पूजयतु तां वर्णात्मिकां देवताम्॥

व्योम (ह) इन्दु (स), औ, रसनार्ण (:) से निर्मित हसौ: से युक्त अचादि द्वन्द्वों स्वरवर्णों के जोड़ों के केशर से विभूषित कर्णिका वाली अर्थात् जिसके कर्णिकाओं में अ-आ, इ-ई आदि स्वरयुगल सुशोभित हैं ऐसी, जिसके दलों में क्रमशः च ट त प य श ल इन आठ वर्गों के, क से क्ष तक वर्ण अंकित हैं। दिशाओं में लान्त (व) और लागङ्गलि (ठ) वर्णों से युक्त तीन भूपुरों से घिरा हुआ पद्म (कमल) का चिन्तन करता हुआ उसमें वर्णात्मिकादेवता का पूजन करे।

इति वर्णकमलं शिरसि ध्यात्वा मूलाधारध्वनिं श्रुत्वा, प्रबुध्य कुण्डलिनीं ज्वलत्पावकसङ्काशां सूक्ष्मतेज स्वरूपिणीं मूलाधाराच्छिर:पद्मं स्पृशन्तीं विद्युदाकृतिं। तथा स्पृष्टशिर: पद्मादमृतौघस्वरूपिण: निर्गतान् मातृकावर्णान् सुषुम्णावर्त्मना तनुं व्यापयित्वा स्थितान् सर्वानिवं ध्यात्वा प्रविन्यसेत्।

उपर्युक्त वर्णकमल का अपने सिर में ध्यान कर, मूलाधार में ध्वनि सुन, जागृत हो, जलती हुई अग्नि के समान सूक्ष्मतेजस्वरूपवाली कुण्डलिनी का जो मूलाधार से उठकर इस सिर में स्थित कमल का स्पर्श करती हो तथा जो बिजली की आकृति वाली हो, उस कुण्डलिनी के स्पर्श से मातृकापद्म से निसृत, अमृतसमूहस्वरूप मातृकावर्णों से सुषुम्नामार्ग से अपने समस्त शरीर को व्याप्त किया हुआ ध्यान करे।

इत्यन्तर्मातृकां ध्यात्वा न्यसेद्। यथा-अं नम: आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अ: नम: इति कण्ठे षोडशदले ध्यानेन न्यसेत्।

इस प्रकार अन्तर्मातृका का ध्यान कर न्यासकर्म सम्पन्न करे। जैसे—अं नम: की भाँति अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अ: इन सोलह वर्णों का कण्ठ में स्थित षोडशदलकमल में ध्यानपूर्वक मानसिकरूप से न्यास करे।

कं नम: खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं नम: इत्यनाहते हृदये द्वादशदले।

इसी प्रकार क से ठ पर्यन्त अनुस्वार युक्त बारहमातृकाओं का नम: के योग से हृदयस्थ अनाहतचक्र के द्वादशदलों में क्रमशः न्यास करे।

डं नम: ढं णं तं थं दं धं नं पं फं नम: इति नाभौ दशदले।

ड से फ अनुस्वार पर्यन्तयुक्त दशवर्णों का नम: पुरस्सर नाभि के दशदलपद्म में न्यास करे।

बं नमः भं मं यं रं लं नमः इति लिङ्गमूलेषड्दले।

ब से ल पर्यन्त अनुस्वार युक्त छः वर्णों का लिङ्गमूलस्थित षट्दलकमल में न्यास करे।

वं नमः शं षं सं नमः इति मूलाधारे चतुर्दले।

व, श, ष, स, इन चार अनुस्वार युक्त वर्णों का मूलाधारस्थितचतुर्दलकमल में न्यास करे।

हं नमः क्षं नमः इति भ्रूमध्ये द्विदले। इति मूलान्तर्मातृकान्यासः।

हं नमः, क्षं नमः इन दो मन्त्रों से हं क्षं वर्णद्वय का भ्रूमध्य के द्विदलपद्म में न्यास करे। इस प्रकार मूलान्तर्मातृकान्यास की प्रक्रिया सम्पन्न हुई।

अथ सृष्टिक्रमः

उपरोक्त प्रकार से ही अब सृष्टिक्रम के अनुसार अन्तर्मातृकान्यास करे जैसे—

वँ नमः शँ षँ सँ नमः इति मूलाधारे चतुर्दले।

बँ नमः भँ मँ यँ रँ लँ नमः इति स्वाधिष्ठाने षट्दले।

डँ नमः ढँ णँ तँ थँ धँ नँ पँ फँ नमः इति मणिपूरे दशदले।

कँ नमः खँ गँ घँ ङँ चँ छँ जँ झँ ञँ टँ ठँ नमः इत्यनाहते द्वादशदले।

अँ नमः आँ इँ ईं उँ ऊँ ऋँ ॠँ ऌँ ॡँ एँ ऐं ओं औं अँ अँः नमः विशुद्धौ कण्ठे षोडशदले।

हँ नमः क्षँ नमः, इत्याज्ञाचक्रे द्विदले।

इति सृष्टिक्रमेणान्तर्मातृकान्यासः।

इस प्रकार सृष्टिक्रम से अन्तर्मातृका न्यास की प्रक्रिया पूर्ण हुई।

अथ स्थितिक्रमः

अब स्थिति क्रम से अन्तर्मातृकान्यास करे—

डँ नमः ढँ णँ तँ थँ दँ धँ नँ पँ फँ नमः इति मणिपूरे नाभौ।

बँ नमः भँ मँ यँ रँ लँ नमः इति स्वाधिष्ठाने लिङ्गमूले।

वँ नमः शँ षँ सँ नमः इति मूलाधारे।

हँ नमः क्षँ नमः, इत्याज्ञाचक्रे भ्रमूध्ये।

अँ नमः आँ इँ ईं उँ ऊँ ऋँ ॠँ ऌँ ॡँ एँ ऐं ओं औं अँ अँः नमः विशुद्धौ कण्ठे।

कँ नमः खँ गँ घँ ङँ चँ छँ जँ झँ ञँ टँ ठँ नमः इत्यनाहते वक्षसि। इति स्थितिक्रमेणान्तर्मातृकान्यासः।

इस प्रकार स्थितिक्रम से अन्तर्मातृकान्यास की प्रक्रिया पूर्ण हुई।

अथ संहारक्रमः

अब संहारक्रम से अन्तर्मातृका न्यास करे—

हँ नमः क्षँ नमः, इत्याज्ञाचक्रे द्विदले।

वँ नमः शँ षँ सँ नमः इति मूलाधारे चतुर्दले।

बँ नमः भँ मँ यँ रँ लँ नमः इति स्वाधिष्ठाने षट्दले।

डँ नमः ढँ णँ तँ थँ दँ धँ नँ पँ फँ नमः इति मणिपूरे दशदले।

कँ नमः आँ इँ ईं उँ ऊँ ऋँ ॠँ लृँ लॄँ एँ ऐं ओं औं अँ अँः नमः इति विशुद्धौ कण्ठे षोडशदले।

इति संहारक्रमेणान्तर्मातृकान्यासः।

इत्यन्तर्मातृकान्यासः।

इस प्रकारसंहारक्रम से अन्तर्मातृकान्यास पूर्ण हुआ। अन्तर्मातृकान्यास की प्रक्रिया पूर्ण हुई।

इत्यन्तर्मातृकान्यास तक निर्दिष्टक्रम से न्यास कर सृष्टि-स्थिति-संहारक्रम सहित अन्तर्मातृकान्यास सम्पन्न करना चाहिए।

अथ बहिर्मातृकान्यासः

तत्र ऋष्यादिकमन्तर्मातृकावद् ध्यानं कुर्याद्। यथा—

ॐ पञ्चाशद्वर्णभेदैर्विहितवदनदोःपादहृत्कुक्षिवक्षोदेशाम्।
भास्वतर्कपदा कलितशशिकलामिन्दुकुन्दावदाताम्॥
अक्षस्त्रक्कुम्भचितां अभयवरकरां त्रीक्षणां पद्मसंस्थां।
अच्छाकल्पामतुच्छस्तनजघनभरां भारतीं तां नमामि॥

तब अन्तर्मातृका में किये गये ऋष्यादि न्यास की भाँति यहाँ भी करके बहिर्मातृकाध्यान करना चाहिए।

पचासवर्णों से सुशोभित मुख, हाथ, पैर, हृदय, कुक्षि एवं वक्षवाली, मस्तक पर प्रकाशित, चमकते हुए सूर्य के समान सुन्दरचन्द्रकला से युक्त, कुन्द-पुष्प तथा

चन्द्रमा की भाँति कान्तिमती, हाथों में रुद्राक्षमाला, कलश, अभय, वर मुद्राएँ धारण की। तीन नेत्रों वाली, पद्म पर स्थित, स्फटिक के समान श्रेष्ठ स्तन एवं जघनस्थल से युक्त जो भारती देवी हैं, उनको मैं नमस्कार करता हूँ।

इति ध्यात्वा मनसा सम्पूज्य 'अं आं.....अं अ: कं.....ङं.....चं.....ञं..... टं.....णं.....तं.....नं पं.....मं यं.....हं लं क्षं ह्रीं इत्युच्चार्य स्वदेहे व्यापकं कृत्वा बहिर्मातृकान्यासं कुर्यात्।

उपर्युक्त रीति से ध्यान कर मानसिकपूजन करे। तब अं आं.....क्षं ह्रीं पर्यन्त वर्णों का उच्चारण करते हुये अपने शरीर में व्यापकन्यास करके बहिर्मातृकान्यास करना चाहिए।

यथा—तत्रादौ सारस्वतेनमार्गेण इत्युक्तरीत्यादौ संहारक्रमेण बहिर्मातृकान्यास:। यथा—

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षं: परमात्मने नम: नाभ्यादिमूर्द्धान्तं। लं जीवात्मने नम: पादादिनाभ्यन्तं। हँ प्राणात्मने नम: हृदादिवामपादान्तं। सँ शुक्रात्मने नम: हृदादिदक्षपादान्तं। षं मज्जात्मने नम: हृदादिवामकरान्तं। शं अस्थ्यात्मने नम: हृदादिदक्षकरान्तं। वँ मेदसात्मने नम: वामांसे। लँ माँसात्मने नम: ककुदि। रं असृगात्मने नम: दक्षांसे। यँ त्वगात्मने नम: वक्षसि। मँ नम: उदरे। भँ नम: नाभौ। बँ नम: पृष्ठे। फँ नम: वामपार्श्वे। पँ नम: दक्षपार्श्वे। नँ नम: वामपादांगुल्यग्रेषु। धँ नम: वामपादांगुलिमूलेषु। दँ नम: वामगुल्फे। थँ नम: वामजानुनि। तँ नम: वामपादकक्षे। णँ नम: दक्षपादांगुल्यग्रेषु। ढँ नम: दक्षपादांगुलिमूलेषु। डँ नम: दक्षगुल्फे। ठं नम: दक्षजानुनि। टँ नम: दक्षपादकक्षे। ञँ नम: वामपाण्यंगुल्यग्रेषु। झं नम:थम पाण्यंगुलिमूलेषु। जं नम: वाममणिबन्धे। छं नम: वामकूपरि। चं नम: वामपाणिकक्षे। ङं नम: दक्षपाण्यंगुल्यग्रेषु। घँ नम: दक्षपाण्यंगुलिमूलेषु। गं नम: दक्षमणिबन्धे। खं नम: दक्षकूपरि। कँ नम: दक्षपाणिकक्षे। अ: नम: मुखाभ्यन्तरे। अं नम: ललाटे। औं नम: अधोदन्तपंक्तौ। ओं नम: ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ। ऐं नम: अधरे। एं नम: ऊर्ध्वोष्ठे। लृं नम: वामगण्डे। ऌं नम: दक्षगण्डे। ॠं नम: वामनासिकायाम्। ऋँ नम: दक्षनासिके। ऊँ नम: वामकर्णे। ईं नम: दक्षकर्णे। ई नम: वामनेत्रे। इं नम: दक्षनेत्रे। आं नम: मुखवृत्ते। अं नम: शिरसि।

इति संहारक्रमेण मातृकान्यास:।

इस क्रम में प्रारम्भ में सारस्वतमार्ग के द्वारा पूर्वकथितरीति से संहारक्रम में बहिर्मातृका न्यास करे। जैसे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षं परमात्मने नम: नाभ्यादिमूर्धान्तम् की भाँति उपर्युक्त प्रत्येक मन्त्र में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सहित मातृकाकथनपूर्वक सम्बन्धित अङ्गों

का स्पर्श करते हुए संहारक्रम से बहिर्मातृकान्यास सम्पन्न करना चाहिए। यह संहार क्रम का बहिर्मातृकान्यास हुआ।

तब सृष्टिक्रम से बहिर्मातृकान्यास करे। जैसे—अं नमः शिरसि। आँ नमः मुखवृत्ते। इं नमः दक्षनेत्रे। ईं नमः वामनेत्रे। उं नमः दक्षकर्णे। ऊँ नमः वामकर्णे। ऋं नमः दक्षनासिके। ॠं नमः वामनासिके। ऌं नमः दक्षगण्डे। ॡं नमः वामगण्डे। एं नमः ऊर्ध्वोष्ठे। ऐं नमः अधरे। ओं नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ। औं नमः अधोदन्तपंक्तौ। अं नमः ललाटे। अः नमः मुखाभ्यन्तरे। कं नमः दक्षपाणिकक्षे। खं नमः दक्षकूर्परे। गं नमः दक्षमणिबन्धे। घं नमः दक्षपाण्यंगुलिमूलेषु। ङं नमः दक्षपाण्यंगुल्यग्रेषु। चं नमः वामपाणिकक्षे। छं नमः वामकूर्परे। जं नमः वाममणिबन्धे। झं नमः वामपाण्यंगुलिमूलेषु। ञं नमः वामपाण्यंगुल्मे। टं नमः दक्षपादकक्षे। ठं नमः दक्षजानुनि। डं नमः दक्षगुल्फे। ढं नमः दक्षपादांगुलिमूलेषु। णं नमः दक्षपादांगुल्यग्रेषु। तं नमः वामपादकक्षे। थं नमः वामजानुनि। दं नमः वामगुल्फे। धं नमः वामपादांगुलिमूलेषु। नं नमः वामपादांगुल्यग्रेषु। पं नमः दक्षपार्श्वे। फं नमः वामपार्श्वे। बं नमः पृष्ठे। भं नमः नाभौ। मं नमः उदरे। यं त्वगात्मने नमः हृदि। रं असृगात्मने नमः दक्षांसे। लं मांसात्मने नमः ककुदि। वं मेदमात्मने नमः वामांसे। शं अस्थ्यात्मने नमः हृदादिदक्षपाण्यन्तं। षं मज्जात्मने नमः हृदादिवाम-पाण्यन्तं। सं शुक्रात्मने नमः हृदादिदक्षपादान्तम्। हं प्राणात्मने नमः हृदादिवाम-पादान्तम्। ळं जीवात्मने नमः पादादिनाभ्यन्तं। क्षं परमात्मने नमः नाभ्यादिमूर्द्धान्तं। इति सृष्टिक्रमेण मातृकान्यासः।

इस प्रकार संहारक्रम मे निर्दिष्ट रीति से ही अं नमः शिरसि.....से क्षं नमः तक मातृकाओं का न्यास करे। ऐसा करने से सृष्टिक्रम से बहिर्मातृकान्यास सम्पन्न होता है।

अथ स्थितिक्रमेणमातृकान्यासः—डं नमः दक्षगुल्फे। ढं नमः दक्षपादं गुलिमूले। णं नमः दक्षपादंगुल्यग्रे। तं नमः वाम वामोरौ। थं नमः वम जानुनि। दं नमः गुल्फे। धं नमः वामपादगुलिमूले। नं नमः वामपादंगुल्यग्रे। पं नमः दक्षपार्श्वे। फं नमः वामपार्श्वे। बं नमः पृष्ठे। भं नमः नाभौ। मं नमः उदरे। यं त्वगात्मने नमः हृदि। रं असृगात्मने नमः दक्षांसे। लं मांसात्मने नमः ककुदि कायाम् वं मेदसात्मने नमः वामांसे। शं अस्थ्यात्मने नमः हृदादि दक्षपाण्यन्तं। षं मज्जात्मने नमः हृदादि वामपाण्यन्तं। सं शुक्रात्मने नमः हृदादिदक्षपादान्तं। हं प्राणात्मने नमः हृदादिवामपादान्तं। ळं जीवात्मने नमः पादादिनाभ्यन्तं। क्षं परमात्मने नमः नाभ्यादिमूर्द्धान्तं। अं नमः शिरसि। आं नमः मुखवृत्ते। इं नमः दक्षनेत्रे ईं नमः वामनेत्रे

लं नमः दक्षकर्णे अंवामकर्ण ॠ नमः दक्ष ॠं नमः वामनासिकायाम्। ॡं नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ। औं नमः अधोदन्तपंक्तौ। अं नमः ललाटे। अः नमः मुखाभ्यन्तरे। कं नमः दक्षपाणिकक्षे। खं नमः दक्ष कूर्परे। गं नमः मणिबन्धे। घं नमः दक्ष अंगुलिमूले। ङं नमः दक्षं अंगुल्यग्रे। चं नमः वामपाणिकक्षे। छं नमः कूर्परे। जं नमः वाममणिबन्धे। झं नमः वाम वामांगुलिमूले। ञं नमः वामांगुल्यग्रे। टं नमः दक्षोरौ। ढं नमः जानुनि।

इति स्थितिक्रमेणमातृकान्यासः।

पहले के न्यासों की ही भाँति वर्णोच्चारसहित निर्दिष्ट अङ्गन्यासपूर्वक डं नमः से ढं नमः तक विपरीतक्रम में स्थितिबहिर्मातृकान्यास सम्पन्न करे।

ततः समस्तमातृकां स्वमूलं चोच्चार्य त्रिर्व्यापकं कुर्यात्। एष एव मातृकान्यासः एष्वेव स्थानेषु न्यसेत्। इति व्यापकमातृकान्यासः।

व्यापक मातृका न्यास

तब अं से क्षं तक सभी मातृकाओं का मूलमन्त्र के उच्चारण सहित तीनबार व्यापक मातृकान्यास करे। यह भी निर्दिष्ट मातृकाओं के उच्चारणपूर्वक निर्दिष्टस्थानों पर ,। करना चाहिए। ऐसा करने से व्यापक मातृकान्यास सम्पन्न होता है।

हृल्लेखादिमातृकान्यासः—ह्रीं अं ह्रीं नमः शिरसि इत्यादि ह्रीं क्षं ह्रीं परमात्मने नमः इत्यन्तं शुद्धमातृकास्थानेषु न्यसेत्।

इस क्रम में साधक सृष्टिक्रम के मातृकान्यास की भांति ही सभी वर्णो का दोनों ओर हृल्लेखा ह्रीं बीज लगाकर न्यासप्रक्रिया सम्पन्न करे। जैसे ह्रीं अं ह्रीं शिरसे.....ह्रीं क्षं ह्रीं परमात्मने नमः तक कहे।

श्रीबीजादिमातृकान्यासः—श्रीं अं श्रीं नमः शिरसि इत्यादि क्षान्तं न्यसेत्

हृल्लेखादि मातृकान्यास की ही भाँति मातृकाओं को क्रमशः श्रीं, क्लीं, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः ऐं, ह्रीं, श्रीं, ॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं, ऐं क्लीं सौः, सौः और ॐ युक्त मूलं विद्या से सम्पुटित करें। क्ष पर्यन्त मातृकाओं के न्यास से श्रीबीजादि कामबीजादि हंस, वाग्भवपुटित, मायापुटित, श्रीबीजपुटित, तार (ॐकार), चतुस्तार (ॐ ऐं ह्रीं श्रीं), बाला (ऐं क्ली सौः), परा (सौः), मूलविद्यापुटित मातृका न्यासों को सम्पन्न करना चाहिए। तत्पश्चात् प्रणवोत्थ कलामातृकान्यास के विनियोग, ऋषिन्यास, करन्यास, अङ्गन्यास तथा ध्यान, नीचे लिखे अनुसार करे।

ॐ अस्य श्रीप्रणवोत्थकलामातृकान्यासस्य प्रजापतिःऋषिः। गायत्रीछन्दः

प्रणवोत्थकलामयी मातृकासरस्वती देवता। मम श्रीभुवनेश्वरीपूजाङ्गत्वेन न्यासे विनियोगः ।

इति कृताञ्जलिः स्मृत्वा ऋष्यादिन्यासान् कुर्यात्। प्रजापतये ऋषये नमः शिरसि। गायत्रीछन्दसे नमः मुखे। प्रणवोत्थकलामयीमातृकासरस्वतीदेवतायै नमः हृदि। मम श्रीभुवनेश्वरी पूजाङ्गत्वेन न्यासे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गेषु। इति ऋष्यादिन्यासः ।

अथ करन्यासः—ॐ ऐं ह्रीं अं ॐ आं अंगुष्ठाभ्यां नमः । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इं ॐ ईं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उं ॐ ऊं मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं एं ॐ ऐं अनामिकाभ्यां हुम्। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ओं ॐ औं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं ॐ अः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

अथ षडङ्गन्यासः—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं ॐ आं हृदयाय नमः । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इं ॐ ईं शिरसे स्वाहा। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उं ॐ ऊं शिखायै वषट्। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं एं ॐ ऐं कवचाय हुम्। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ओं ॐ औं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं ॐ अः अस्त्राय फट्।

ध्यानम्

हस्तैः पद्मं रथाङ्गं गुणमथ हरिणं पुस्तकं वर्णमालाम्।
टङ्कं शुभ्रं कपालं दरममृतसद्धेमकुम्भं वहन्तीम्।
मुक्ताविद्युत्पयोदस्फटिकनवजवाबन्धुरैः पञ्चवक्त्रैः ।
त्र्यक्षैर्वक्षोजनम्रां सकलशशिनिभां शारदां तां नमामि ॥

अपने हाथों में पद्म, रथाङ्ग (चक्र), गुण (पाश), हरिण, पुस्तक, वर्ण (अक्ष) माला, टङ्क (परशु), कपाल, दर (शंख), अमृत से परिपूर्ण स्वर्णकलश, धारण की हुई, मोती, बिजली, पयोद (बादल), स्फटिक, नवीन जवापुष्प, बन्धूक के वर्ण के पाँचमुखों, तीननेत्रों, उन्नतवक्षस्थलों के भार से नम्र, पूर्णचन्द्रमा के समान आभा-वाली शारदादेवी को नमस्कार करता हूँ।

इति ध्यात्वा न्यसेद् यथा—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं निवृत्त्यै नमः शिरसि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं आं प्रतिष्ठायै नमः मुखवृत्ते। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इं विद्यायै नमः दक्षनेत्रे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ईं शान्त्यै नमः वामनेत्रे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उं इन्धिकायै नमः दक्षकर्णे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऊं दीपिकायै नमः वामकर्णे। ॐ ऐं ह्री श्रीं ऋं रेचिकायै नमः दक्षनसि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॠं मोचिकायै नमः वामनसि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऌं परायै नमः दक्षगण्डे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॡं सूक्ष्मायै नमः वामगण्डे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं एं सूक्ष्मामृतायै नमः ऊर्ध्वोष्ठे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं

ऐं ज्ञानामृतायै नमः अधरे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ओं आप्यायन्यै नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं औं व्यापिन्यै नमः अधोदन्तपंक्तौ । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं व्योमरूपिण्यै नमः ललाटे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अः अनन्तायै नमः मुखाभ्यन्तरे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कं सृष्टयै नमः दक्षपाणिकक्षे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं खं ऋद्धयै नमः दक्षकूपरि । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं स्मृत्यै नमः दक्षमणिबन्धे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं घं मेधायै नमः दक्षअंगुलिमूले । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ङं कान्त्यै नमः दक्षअंगुल्यग्रे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चं लक्ष्म्यै नमः वामपाणिकक्षे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं छं द्युत्यै नमः वाम कूपरि । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं जं स्थिरायै नमः वाममणिबन्धे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं झं स्थित्यै नमः वामअंगुलिमूले । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ञं सिद्धयै नमः वामअंगुल्यग्रे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं टं जरायै नमः दक्षोरौ । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ठं पालिन्यै नमः दक्षजानुनि । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं डं शान्त्यै नमः दक्षगुल्फे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ढं ऐश्वर्यै नमः दक्षपाद अंगुलिमूले । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं णं रत्यै नमः दक्षपाद अंगुल्यग्रे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं तं कामिकायै नमः वामोरौ । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं थं वरदायै नमः वामजानुनि । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दं ह्लादिन्यै नमः वामगुल्फे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं धं प्रीत्यै नम; वामअंगुलिमूले । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं नं दीर्घायै नमः वामअंगुल्यग्रे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पं तीक्ष्णायै नमः दक्षपार्श्वे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं फं रौद्र्यै नमः वामपार्श्वे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं बं भयायै नमः पृष्ठे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं भं निद्रायै नमः नाभौ । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मं तन्द्रायै नम. जठरे । ॐ ऐं ह्रीं श्री लं क्रियायै नमः ककुदि । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वं उल्कायै नमः वामासे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शं मृत्युरूपायै नमः हृदादि दक्षपाण्यन्तं । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं षं पीतायै नमः हृदादिवाम-पाण्यन्तं । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सं श्वेतायै नमः हृदादि दक्षपादान्तम् । ॐ ऐं ह्रीं अरूनायै नमः हृदादिवामपादान्तं । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ळं असितायै नमः पादादिनाभ्यन्तं । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षं अनन्तायै नमः नाभ्यादिमूर्धान्तिम् । इति तारोत्थकलामातृकान्यासः ।

ॐ ऐं ह्रीं श्री चतुस्तार युक्त अं से क्षं पर्यन्त समस्त मातृकाओं के नामोल्लेख सहित कलाओं के नामोल्लेख पूर्वक निर्दिष्ट अङ्गों में न्यास करे । जैसे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं निवृत्यै नमः शिरसे........इत्यादि ।

अथाष्टात्रिंशत्कलामातृकान्यासः ।

अष्टात्रिंशत् कलामातृक्रान्यासक्रम विनियोग ऋष्यादि न्यास, कर, षडङ्गन्यास, ध्यानन्यासादि सम्पन्न करे ।

ॐ अस्य श्री अष्टात्रिंशत्कलामातृकान्यासस्य सोमसूर्याग्नयः ऋषयः अनुष्टुप्त्रिष्टुप्छन्दांसि अष्टात्रिंशत्कलारूपिणिमातृकादेवता श्रीभुवनेश्वरीपूजाङ्गत्वेन न्यासे विनियोगः । इति कृताञ्जलिः स्मृत्वा न्यासं कुर्यात् ।

ॐ अस्य से विनियोग: तक मन्त्रों को अञ्जलि बनाकर पढ़ते हुए विनियोग करने के पश्चात्।

सोमसूर्याग्निऋषिभ्योनमः शिरसि। अनुष्टुप्त्रिष्टुप्छन्येभ्यो नमः मुखे। अष्टात्रिंशत्कलारूपिणीमातृकादेवतायै नमः हृदि। श्रीभुवनेश्वरीपूजांगत्वेन न्यासे विनियोगाय नमः सर्वांगेषु। इति ऋष्यादिकं कृत्वा शुद्धमातृकादेव करषडङ्गन्यासध्यानं विधाय न्यासं कुर्यात्।

उपर्युक्त सोम सूर्याग्नि.....सर्वांगेषु पर्यन्त ऋष्यादि न्यास करके शुद्ध मातृका न्यास की ही भाँति करन्यास और षडङ्गन्यास करें।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं अमृतायै नमः शिरसि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं आं मानदायै नमः मुखवृत्ते। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इं पूषायै नमः दक्षनेत्रे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ईं सृष्ट्यै नमः वामनेत्रे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उं पुष्ट्यै नमः दक्षकर्णे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऊं रत्यै नमः वामकर्णे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऋं धृत्यै नमः दक्षनसि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॠं शशिन्यै नमः वामनसि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऌं चन्द्रिकायै नमः दक्षगण्डे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॡं कान्त्यै नमः वामगण्डे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं एं ज्योत्स्नायै नमः ऊर्ध्वोष्ठे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं श्रियै नमः अधरे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ओं प्रीत्यै नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अङ्गदायै नमः अधोदन्तपंक्तौ। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं पूर्णामृतायै नमः मुखाभ्यन्तरे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कं भं तपिन्यै नमः दक्षपाणिकक्षे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं खं बं तापिन्यै नमः दक्ष कूर्परे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं फं धूम्रायै नमः दक्ष मणिबन्धे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं घं पं मरीच्यै नमः दक्ष अंगुलिमूले। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ङं नं ज्वलिन्यै नमः दक्ष अंगुल्यग्रे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चं धं रुच्यै नमः वामपाणिकक्षे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं छं दं सुषुम्णायै नमः वाम कूर्परे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं जं थं भोगदायै नमः वाममणिबन्धे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं झं तं विश्वायै नमः वामअङ्गुलिमूले। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ञं णं बोधिन्यै नमः वाम अंगुल्यग्रे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं टं ढं धारिण्यै नमः दक्षोरौ। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ठं डं क्षमायै नमः दक्षजानुनि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यं धूम्रार्चिषे नमः दक्षगुल्फे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं रं ऊष्मायै नमः दक्षपाद-अंगुलिमूले। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लं ज्वलिन्यै नमः दक्षपाद-अंगुल्यग्रे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वं ज्वालिन्यै नमः वामोरौ। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शं विस्फुल्लिङ्गिन्यै नमः वाम जानुनि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं षं सुश्रिमैनभावाम गुल्फे। ॐ ऐं ह्रीं क्रीं सं सुरुपायै नया वामपाद अंगलिमूले ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हं कपिलायै नमः वामपाद-अंगुल्यग्रे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ळं हव्यवाहायै नमः मूर्ध्नि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षं कव्यवाहायै नमः सर्वाङ्गेषु। इत्यष्टात्रिंशत्कलामातृकान्यासः।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अमृतायै नाम से ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कव्यवाहायै नमः पर्यन्त अड़तीस कलामातृकाओं का न्यास करे।

अथ मूर्तिमातृकान्यासः।

अब मूर्तिमातृकान्यास के अन्तर्गत केशवादिमातृकान्यास एवं श्रीकण्ठादिन्यासविधान कहा जाता है ।

तत्रादौ केशवादिमातृकान्यासः ।

इसमें भी पहले केशवादिमातृकान्यास, विनियोग, ऋष्यादिन्यास, करन्यास, षडङ्गन्यास ध्यानपूर्वक करे । इस क्रम में—

ॐ अस्य श्रीकेशवादिमूर्तिमातृकान्यासस्य साध्यनारायणः ऋषिर्गायत्रीछन्दः, श्रीलक्ष्मीनारायणदेवता मम श्रीभुवनेश्वरीपूजाङ्गत्वेन न्यासे विनियोगः । इति कृताञ्जलिः स्मृत्वा न्यसेत्—साध्यनारायणऋषये नमः शिरसि गायत्रीछन्दसे नमः मुखे श्रीलक्ष्मीनारायणदेवतायै नमः हृदि । मम श्रीभुवनेश्वरीपूजाङ्गत्वेन न्यासे विनियोगाय नमः सर्वांगेषु। इति ऋष्यादिन्यासः ।

अथ करन्यासः—ॐ श्रीं ॐ नमो नारायणाय हंसः सोऽहं अं कं खं गं घं ङं आं ह्रीं हंसः सोऽहं ॐ नमो नारायणाय क्रुद्धोल्काय स्वाहा श्रंदिव्यै अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।

ॐ श्रीं ॐ नमो नारायणाय हंसः सोऽहं इं चं छं जं झं ञं ईं ह्रीं हंसः सोऽहं ॐ नमो नारायणाय महोल्काय स्वाहा श्रीं पद्मिन्यै तर्जनीभ्यां स्वाहा ।

ॐश्रीं ॐ नमो नारायणाय हंसः सोऽहं उं टं ठं डं ढं णं ऊँ ह्रीं हंसः सोऽहं ॐ नमो नारायणाय वीरोल्काय स्वाहा श्रूं विष्णुपत्न्यै मध्यमाभ्यां वषट् ।

ॐ श्रीं ॐ नमो नारायणाय हंसः सोऽहं एं तं थं दं धं नं ऐं ह्रीं हंसः सोऽहं ॐ नमो नारायणाय विध्याद्युल्काय स्वाहा श्रौं वरदायै अनामिकाभ्यां हुं ।

ॐ श्रीं ॐ नमो नारायणाय हंसः सोऽहं ओं पं फं बं भं मं औं ह्रीं हंसः सोऽहं ॐनमो नारायणाय सहस्रोल्काय स्वाहा श्रीकमलरूपायै नमः कनिष्ठिकाभ्यां वौषट् ।

ॐ श्रीं ॐ नमो नारायणाय हंसः सोऽहं अं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं अः ह्रीं हंसः सोऽहं ॐ नमो नारायणाय अनन्तोल्काय स्वाहा श्रः शूलिन्यै करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् ।

इति करन्यासः । इत्थंक्रमेण षडङ्गन्यासं कुर्यात् ।

इस प्रकार करन्यास सम्पन्न हुआ इसी क्रम से षडङ्गन्यास करे ।

ध्यानम्

विद्याऽरविन्दमुकुरामृतकुम्भपद्म-
कौमोदकींदरसुदर्शनशोभिहस्ताम् ।

अथ करन्यासः—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं कं खं गं घं ङं आं हस्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इं चं छं जं झं ञं ईं हस्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उं टं ठं डं ढं णं ऊं हस्रूं मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं एं तं-थं दं धं नं ऐं हस्रैं अनामिकाभ्यां हुम्। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ओं पं-फं बं भं मं औं हस्रौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं यं-रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अः हस्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। इति करन्यासः।

अथ षडङ्गन्यासः—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं कं खं गं घं ङं हस्रां हृदयाय नमः। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इं चं छं जं झं ञं ईं हस्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उं टं ठं डं ढं णं-ऊं हस्रूं शिखायै वषट्। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं एं तं थं दं धं नं ऐं हस्रैं कवचाय हुम्। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ओं पं फं बं भं मं औं हस्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं अः हस्रः अस्त्राय फट्। इति षडङ्गः।

ध्यानम्

बन्धूककाञ्चननिभं रुचिराक्षमालाम् पाशांकुशौ च वरदां निजबाहुदण्डैः।
विभ्राणमिन्दुसकलाभरणं त्रिनेत्रम् अम्बाऽम्बिकेशमनिशं वपुराश्रयामि॥

ध्यानार्थ बन्धुकपुष्प एवं स्वर्ण के समान आभावाली, अपने हाथों में सुन्दर अक्षमाला, पाश, अङ्कुश और वरदमुद्राओं तथा शीर्ष पर चन्द्रखण्ड (अर्धचन्द्र) का आभूषण धारण किये अम्बा और अम्बिकेश के अर्धनारीश्वर रूप का मैं आश्रय लेता हूँ।

इति ध्यात्वा न्यसेत्।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्रौः अं श्रीकण्ठेशाय पूर्णोदर्यै नमः शिरसि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्रौः आं अनन्तेशाय विरजायै नमः मुखवृत्ते। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्रौः इं सूक्ष्मेशाय शाल्मल्यैः नमः दक्षनेत्रे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्रौः ई त्रिमूर्तेशाय लोलाक्ष्यै नमः वामनेत्रे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्रौः उं अमरेशाय वर्तुलाक्ष्यै नमः दक्षकर्णे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्रौः ॐ अर्घेशाय दीर्घघोणायै नमः वामकर्णे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्रौः ऋं भारभूतेशाय दीर्घमुख्यै नमः दक्षनसि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्रौः ॠं तिथीशाय गोमुख्यै नमः वामनसि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्रौः ऌं स्थाणुकेशाय दीर्घजिह्वायै नमः दक्षगण्डे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्रौः ॡं हरेशाय कुण्डोदर्यै नमः वामगण्डे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्रौः एं झिंटीशाय ऊर्ध्वकेश्यै नमः ऊर्ध्वोष्ठे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्रौः ऐं भौतिकेशाय विकृतमुख्यै नमः अधरे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्रौः ओं सद्योजातेशाय ज्वालामुख्यै नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्रौः औं अनुग्रहेशाय उल्कामुख्यै नम अधोदन्तपंक्तौ। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्रौः अं क्रूरेशाय

श्रीमुख्यै नम: ललाटे । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: अ: महासेनेशाय विद्यामुख्यै नम: मुखाभ्यन्तरे ।

३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: कं क्रोधेशाय महाकाल्यै नम: दक्षपाणिकक्षे । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: खं चण्डेशाय सरस्वत्यै नम: दक्षकूर्परे । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: गं पञ्चवक्त्रेशाय सर्वसिद्धिदायै नम: दक्षमणिबन्धे । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: घं शिवोत्तमेशाय त्रैलोक्यविद्यायै नम: दक्षअंगुलिमूले । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: ङं एकरुद्रेशाय मन्त्रशक्त्यै नम: दक्षअंगुल्यग्रे । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: चं कूर्मेशायात्मशक्त्यै नम: वामपाणिकक्षे । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: छं एकनेत्रेशाय भूतमात्रे नम: वामकूर्परे । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: जं चतुराननेशाय लम्बोदर्यै नम: वाममणिबन्धे । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: झं अजेशाय द्राविण्यै नम: वामअंगुलिमूले । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: ञं सर्वेशाय नागर्यै नम: वामअंगुल्यग्रे । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: टं सोमेशाय खेचर्यै नम: दक्षोरौ । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: ठं लाङ्गलीशाय मञ्जर्यै नम: दक्षजानुनि । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: डं दारुणेशाय रूपिण्यै नम: दक्षगुल्फे । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: ढं अर्द्धनारीश्वराय वीरिण्यै नम: दक्षपाद-अंगुलिमूले । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: णं उमाकान्तेशाय काकोदर्यै नम: दक्षपाद-अंगुल्यग्रे । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: तं आषाढेशाय पूतनायै नम: वामोरौ । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: थं दण्डीशाय भद्रकाल्यै नम: वामजानुनि । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: दं अत्रीशाय योगिन्यै नम: वामगुल्फे । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: धं मीनेशाय शंखिन्यै नम: वामपाद-अंगुलिमूले । ३ॐ ऐ ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: नं मेषेशाय भमन्यै नम: वामपाद-अंगुल्यग्रे । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: पं लोहितेशाय कालरात्र्यै नम: दक्षपार्श्वे । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: फं शिखिनेशाय कुब्जिन्यै नम: वामपार्श्वे । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: बं छागलण्डेशाय कपर्दिन्यै नम: पृष्ठे । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: भं द्विरण्डेशाय वज्रायै नम: नाभौ । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: मं महाकालेशाय जयायै नम: उदरे । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: यं त्वागात्मने वालीशाय सुमुख्यै नम: हृदि । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: रं असृगात्मने भुजेशाय रेवत्यै नम: दक्षांसे । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: लं मांसात्मने पिनाकेशाय माधव्यै नम: वामांसे । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: वं मेदसात्मने खड्गीशाय वारुण्यै नम: ककुदि । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: शं अस्थ्यात्मने सहजायै नम: हृदादिदक्षपाण्यन्तम् । ३ॐ ऐं श्रीं हस्त्रौं: षं भज्जात्मने श्वेतेशाय रक्षो विदारिण्यै नम: हृदादि वामपाण्यन्तम् ३ॐ ऐं ह्रीं श्री हस्त्रौं: सं शुकुरात्मे मृगवीशाद सहजायै नम: हृदादि दक्षपादन्तम् । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौं: हं प्राणात्मने नकुलेशाय महालक्ष्म्यै नम: हृदादिवामपादान्तम् । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: ळं शक्त्यात्मने शिवेशाय व्यापिन्यै नम: पादादिनाभ्यन्तम् । ३ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रौ: क्षं परमात्मने वर्त्तेशाय महामायायै नम: नाभ्यादिमूर्द्धान्तम् । इति श्रीकण्ठादिन्यास: । ३ॐ अस्य से नाभ्यादि

मूर्द्धान्ताम्। पर्यन्त विनियोग, ऋष्यादिन्यास, करन्यास, षडङ्गन्यास, ध्यान सहित श्रीकंठादिन्यास सम्पन्न करे।

अथ पूर्वषोढान्यासः—ॐ अस्य श्रीषोढान्यासस्य श्रीदक्षिणामूर्तिऋषिः पंक्तिश्छन्दः, श्रीमातृकात्रिपुरसुन्दरीदेवता, ऐं बीजं, सौः शक्तिः, क्लीं कीलकं, श्रीभुवनेश्वरीपूजाङ्गत्वेन न्यासे विनियोगः। इति कृताञ्जलिः स्मृत्वा न्यसेद्। यथा— श्रीदक्षिणामूर्तिऋषये नमः शिरसि। पंक्तिश्छन्दसे नमः मुखे। श्रीमातृकात्रिपुरसुन्दरी-देवतायै नमः हृदि। ऐं बीजाय नमः गुह्ये। सौः शक्तये नमः पादयोः। क्लीं कीलकाय नमः नाभौ। श्रीभुवनेश्वरीपूजाङ्गत्वेन न्यासे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गेषु। इति ऋष्यादिन्यासः।

अथ करन्यासः—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं कं खं गं घं ङं आं ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इं चं छं जं झं ञं ईं क्लीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उं टं ठं डं ढं णं ऊं सौः मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं एं तं थं दं धं नं ऐं अनामिकाभ्यां हुं। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ओं पं फं बं भं मं औं क्लीं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं कं खं गं घं ङं अः सौः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। इति करन्यासः।

अथ षडङ्गन्यासः—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं कं खं गं घं ङं आं ऐं हृदयाय नमः। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इं चं छं जं झं ञं ई क्लीं शिरसे स्वाहा। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उं टं ठं डं ढं णं ऊं सौः शिखायै वषट्। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं एं तं थं दं धं नं ऐं कवचाय हुं। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ओं पं फं बं भं मं औं क्लीं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं अःसौः अस्त्राय फट्। इति षडङ्गन्यासः।

तत्पश्चात् विनियोग, ऋष्यादिन्यास, करन्यास, षडङ्गन्यास, ध्यान सहित गणेश, ग्रह, नक्षत्र, योगिनी, राशि युक्त पीठन्यास सम्पन्न करे।

ध्यानम्

उद्यत्सूर्यसहस्राभां पीनोन्नतपयोधराम्।
रक्तमाल्याम्बरां तामारक्तभूषणभूषिताम्॥
पाशांकुशधनुर्बाणभास्वत्पाणिचतुष्टयाम्।
लसन्नेत्रत्रयां स्वर्णमुकुटोद्भासिचन्द्रिकाम्॥
गणेशग्रहनक्षत्रयोगिनीराशिरूपिणीम्।
देवीं पीठमयीं ध्यायेन्मातृकां सुन्दरीं पराम्॥

ध्यानार्थ उदीयमान सहस्रसूर्यों की आभावाली उच्च एवं पुष्ट स्तनों, लालवर्ण

की माला, वस्त्रों, लालआभूषणों से विभूषित, अपनी चारों भुजाओं में पाश, अङ्कुश, धनुष, बाण जैसे चमकते हुए आयुध धारण की हुईं, तीनों नेत्रों से सुशोभित, चन्द्रकला से उद्भाषित, स्वर्णमुकुटधारिणी, गणेश-ग्रह-नक्षत्र-योगिनी-राशि-स्वरूपवाली, उन पीठमयी, सुन्दरी, परमा (श्रेष्ठतमा), मातृकादेवी का मैं ध्यान करता हूँ।

अथ गणपतिन्यासः

ध्यानम्

तरुणादित्यसङ्काशाः गजवक्त्राः त्रिलोचनाः।
पाशांकुशवराभीतिकराः शक्तिसमन्विताः ॥
तास्तु सिन्दूरवर्णाभाः सर्वालङ्कारशोभिताः।
एकहस्ते धृताम्भोज इतरालिङ्गितप्रियाः ॥

इति ध्यात्वा न्यसेत्।

तरुणसूर्य के समान कांति वाले, हाथी के समान मुख व तीन नेत्रों से युक्त, पाश, अङ्कुश, वर और अभय मुद्रा युक्त हाथों वाले वाले, जो सिन्दूरवर्ण की आभावाली सभी अलङ्कारों से सुशोभित, एक हाथ में कमलपुष्प तथा दूसरे से प्रिय गणपति को आलिङ्गित की हुई शक्तियों सहित विराजमान हैं। ऐसे गणपति का मैं ध्यान करता हूँ। ऐसा ध्यान करके नीचे लिखा न्यास करे—

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं गं विघ्नेश्वराय श्रियै नमः शिरसि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं आं गं विघ्नराजाय ह्रियै नमः मुखवृत्ते। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इं गं विनायकाय तुष्ट्यै नमः दक्षनेत्रे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ईं गं शिवोत्तमाय शान्त्यै नमः वामनेत्रे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उं गं विघ्नकृते पुष्ट्यै नमः दक्षकर्णे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऊं गं विघ्नहर्त्रे सरस्वत्यै नमः वामकर्णे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऋं गं विघ्नराजे रत्यै नमः दक्षनासिकायाम्। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॠं गं गणनाथाय मेधायै नमः वामनासिकायाम्। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऌं गं एकदन्ताय कान्त्यै नमः दक्षगण्डे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॡं गं द्विदन्ताय कामिन्यै नमः वामगण्डे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं एं गं गजवक्त्राय मोहिन्यै नमः ऊर्ध्वोष्ठे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं गं निरञ्जनाय जटायै नमः अधरे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ओं गं कपालिने तीव्रायै नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं औं गं दीर्घवक्त्राय ज्वालिन्यै नमः अधोदन्तपंक्तौ। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं गं शंकुकर्णाय नन्दायै नमः ललाटे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अः गं वृषभध्वजाय रसायै नमः मुखे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कं गं गणनाथाय रूपिण्यै नमः दक्षपाणिकक्षे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं खं गं गजेन्द्राय मुद्रायै नमः दक्षकूपरि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं गं शूर्पकर्णाय जयिन्यै नमः दक्षमणिबन्धे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं घं गं त्रिनेत्राय सत्यै नमः दक्षअंगुलिमूले। ॐ ऐंह्रीं श्रीं ङं गं लम्बोदराय विघ्नेशाय नमः दक्षअंगुल्यग्रे। ॐ ऐं ह्रीं चं गं महानादाय स्वरूपिण्यै वामपाणि कक्षे

नमः ॐ ऐं ह्रीं श्रीं छं गं चतुर्मूर्तये कामदायै नमः वामकूर्परे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं जं गं सदाशिवाय मदविकलायै नमः वाममणिबन्धे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं झं गं आमोदाय विकटायै नमः वामअंगुलिमूले । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ञं गं दुर्मुखाय धूम्रायै नमः वामअंगुल्यग्रे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं टं गं सुमुखाय भूत्यै नमः दक्षोरौ । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ठं गं प्रमोदाय भूम्यै नमः दक्षजानुनि । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं डं गं एकपादाय रत्यै नमः दक्षगुल्फे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ढं गं द्विजिह्वाय रमायै नमः दक्षपाद-अंगुलिमूले । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं णं गं शूराय मानुष्यै नमः दक्षपाद-अंगुल्यग्रे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं तं गं वीराय मकरध्वजायै नमः वामोरौ । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं थं गं षण्मुखाय विकलायै नमः वामजानुनि । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दं गं वरदाय भ्रुकुट्यै नमः वामगुल्फे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं धं गं वामदेवाय लज्जायै नमः वामपाद अंगुलिमूले । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं नं गं वक्रतुण्डाय दीर्घघोणायै नमः वामपाद-अंगुल्यग्रे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पं गं द्विरण्डाय धनुर्धरायै नमः दक्षपार्श्वे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं फं गं सेनान्यै यामिन्यै नमः वामपार्श्वे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं बं गं ग्रामण्यै रात्र्यै नमः पृष्ठे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं भं गं मत्ताय चन्द्रिकायै नमः नाभौ । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मं गं विमलाय शशिप्रभायै नमः उदरे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यं गं मत्तवाहनाय लोलायै नमः हृदि । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं रं गं जटिने चञ्चलाक्ष्यै नमः दक्षांसे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लं गं मुण्डिने ऋद्ध्यै नमः दक्षककुदि । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वं गं खड्गिने दुर्भगायै नमः वामांसे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शं गं वरेण्याय सुभगायै नमः हृदादिदक्षपाण्यन्तम् । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं षं गं वृषकेतवे शिवायै नमः हृदादिवामपाण्यन्तम् । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सं गं भक्ष्यप्रियाय दुर्गायै नमः हृदादिक्षपादान्तम् । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हं गं मेघदाय कालिकायै नमः हृदादिवामपादान्तम् । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ळं गं गणपतये कालजिह्वायै नमः पादादिनाभ्यन्तम् । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षं: गं गणेशाय विघ्नहारिण्यै नमः नाभ्यादिमूर्द्धान्तम् । इति गणेशन्यासः ।

इस प्रकार गणेशन्यास सम्पन्न हुआ ।

अथ ग्रहन्यासः

ध्यानम्

रक्तं श्वेतं रक्तश्यामं पीतं शुक्लं च पाण्डुरम् ।
धूम्रकृष्णं कृष्णधूम्रं धूमधूम्रं विचिन्तयेत् ॥
रविमुख्यान् कामरूपान् सर्वाभरणभूषितान् ।
वामोरुन्यस्तहस्तांश्च दक्षहस्तवरप्रदान् ॥
शक्तयोऽपि तथा ध्येया वराभयकराम्बुजाः ।
स्वस्वप्रियाङ्कनिलयाः सर्वाभरणभूषिताः ॥

इति ध्यात्वा न्यसेत् ।

ध्यानार्थ कामरूप (सुन्दर), सभी आभूषणों से विभूषित, बायेंहाथ को जंघे पर रखे हुए तथा दाहिने हाथ से भक्तों को वर देने वाले, स्वयं क्रमश: लाल, श्वेत, रक्त-श्याम, पीत-शुक्ल, पाण्डुर, धूम्रकृष्ण, कृष्णधूम्र, धूम्र-धूम्र वर्णों तथा अपने गोद में स्थित इन्हीं वर्णों से युक्त, सभी प्रकार के आभूषणों से युक्त, हाथों में वर और अभय मुद्राधारिणी शक्तियों सहित सूर्य आदि ग्रहों का ध्यान करके न्यास करे।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः सूर्याय रेणुकाम्बायै नम: भ्रूमध्ये। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यं रं लं वं चन्द्रायामृताम्बायै नम: नेत्रत्रये। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कं खं गं घं ङं मङ्गलाय धामाम्बायै नम: हृदयोपरि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चं छं जं झं ञं बुधाय ज्ञानरूपाम्बायै नम: कण्ठे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं टं ठं डं ढं णं बृहस्पतये यशस्विन्यम्बायै नम: हृदये। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं तं थं दं धं नं शुक्राय शाकम्भर्यम्बायै नम: नाभौ। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पं फं बं भं मं शनिश्चराय शक्त्यम्बायै नम: मुखे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शं षं सं हं राहवे कृष्णाम्बायै नम: पादयो:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ळं क्षं केतवे धूम्राम्बायै नम:। इति ग्रहन्यास:।

अथ नक्षत्रन्यास:

ध्यानम्

ज्वलत्कालाग्निसंकाशाः वरदाभयपाणयः।
नति पाण्योश्विनीमुख्याः सर्वाभरणभूषिताः।

इति ध्यात्वा न्यसेत्।

अश्विनी आदि नक्षत्रों का सभी आभूषणों से विभूषित स्वयं वरद एवं अभय मुद्राओं से युक्त, प्रज्ज्वलितअग्नि के समान आभामयस्वरूप में नमस्कारपूर्वक ध्यान करना चाहिए। ऐसा ध्यान करके नीचे लिखा न्यास करे—

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ललाटे अं आं अश्विन्यै नम:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दक्षनेत्रे इं ईं भरण्यै नम:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वामनेत्रे उं ऊं कृत्तिकायै नम:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दक्षकर्णे ऋं ॠं ऌं ॡं रोहिण्यै नम:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वामकर्णे एं मृगशिरायै नम:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दक्षनासिकायाम् ऐं आर्द्रायै नम:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वामनासिकायाम् ओं औं अं अ: पुनर्वसवे नम:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कण्ठे कं पुष्याय नम:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दक्षस्कन्धे खं गं अश्लेषायै नम:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वामस्कन्धे घं ङं मघायै नम:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दक्षकपोले चं पूर्वाफाल्गुन्यै नम:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वामकपोले छं जं उत्तरफाल्गुन्यै नम:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दक्षमणिबन्धे झं ञं हस्ताय नम:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वाममणिबन्धे टं ठं चित्रायै नम:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दक्षस्तने डं स्वात्यै नम:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वामस्तने ढं णं विशाखायै नम:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं नाभौ तं थं दं अनुराधायै नम:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दक्षकट्यां धं नं ज्येष्ठायै नम:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वामकट्यां पं फं मूलाय नम:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दक्षोरौ बं पूर्वाषाढायै नम:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वामोरौ भं उत्तराषाढायै नम:।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दक्षजानुनि मं श्रवणाय नमः । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वामजानुनि यं रं धनिष्ठायै नमः । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दक्षजंघायां लं शतभिषायै नमः । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वामजंघायां वं शं पूर्वाभाद्रपदायै नमः । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दक्षपादे षं सं हं उत्तराभाद्रपदायै नमः । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वामपादे ळं क्षं अं अः रेवत्यै नमः । इति नक्षत्रन्यासः ।

अथ योगिनीन्यासः

ध्यानम्

रक्तां श्यामां तथा कृष्णां पीतां ज्योतिःस्वरूपिणीम् ।
शुक्लवर्णां तथा सर्ववर्णां ध्यायेत् तु योगिनीम् ।
डाकिन्याद्यामायुधैः स्वैः स्वैर्लसत्पाणिपङ्कजाम् ॥

इति ध्यात्वा न्यसेत् ।

अपने हाथों में अपने-अपने आयुधों को धारण की हुई डाकिनी आदि योगनियों का क्रमशः रक्त, श्याम, कृष्ण, पीत, ज्योतिस्वरूप, शुक्लवर्ण तथा सभी वर्णोंवाले रूपों में ध्यान करे । ऐसा ध्यान करके नीचे लिखा न्यास करे—

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः डां डीं डमलवरयूं डाकिन्यै मां रक्ष रक्ष त्वगात्मने नमः कण्ठे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं रां रीं रमलवरयूं राकिण्यै मां रक्ष रक्ष असृगात्मने नमः हृदये । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं लां लीं लमरवरयूं लाकिन्यै मां रक्ष रक्ष मांसात्मने नमः नाभौ । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं बं भं मं यं रं लं कां कीं कमलवरयूं काकिन्यै मां रक्ष रक्ष मेदसात्मने नमः स्वाधिष्ठाने । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वं शं षं सं सां सीं समलवरयूं शाकिन्यै मां रक्ष रक्ष अस्थ्यात्मने नमः मूलाधारे । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हं लं क्षं हां हीं हमलवरयूं हाकिन्यै मां रक्ष रक्ष मज्जात्मने नमः भ्रूमध्ये । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं आं...........अः कं खं......क्षं यां यीं यूं यैं यौं यः यमलवरयूं याकिन्यै मां रक्ष रक्ष सर्वधात्वात्मने नमः ब्रह्मरन्ध्रे। इति योगिनी न्यासः ।

अथ राशिन्यासः

ध्यानम्

रक्तं श्वेतं हरिद्वर्णं पाण्डुचित्रं सितं स्मरेत् ।
पिशङ्गपिङ्गलौ वभ्रुकर्बुरौ सितधूम्रकौ ॥

इति ध्यात्वा न्यसेत् ।

मेषादि बारह राशियों का रक्त, श्वेत, हरित, पाण्डु, चित्र-विचित्र, श्वेत, पिशंग, पिङ्गल, वभ्रु, कर्बूर, श्वेत, धूम्र वर्णों में स्मरण करें। ऐसा ध्यान करके नीचे लिखा न्यास करे—

दक्षगुल्फे अं आं इं ईं मेषाय नमः । दक्षजानुनि उं ऊं वृषाय नमः । दक्षवृषणे

ॠं ॠं ऌं ॡं मिथुनाय नमः । दक्षकुक्षौ एं ऐं कर्कटाय नमः । दक्षस्कन्धे ओं औं सिंहाय नमः । दक्षशिरोभागे अं अः कन्यायै नमः । वामशिरोभागे कं खं गं घं ङं तुलाधराय नमः । वामस्कन्धे चं छं जं झं ञं वृश्चिकाय नमः । वामकुक्षौ टं ठं डं ढं णं धनुषे नमः । वामवृषणे तं थं दं धं नं मकराय नमः । वामजानुनि पं फं बं भं मं कुम्भाय नमः । वाम-गुल्फे यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं मीनाय नमः । इतिराशिन्यासः ।

अथ पीठन्यासः

ध्यानम्

सितासितारुणश्यामहरित्पीतान्यनुक्रमात् ।
पुनः पुनः क्रमाद् देवि! पञ्चाशत् स्थानसञ्चये ।
पीठानि संस्मरेद् विद्वान् सर्वकामार्थसिद्धये ॥

इति ध्यात्वा न्यसेत् ।

अपनी सभी कामनाओं की सिद्धि के लिए पचास स्थान में स्थित श्वेत, काले, लाल, श्याम, हरित, पीत वर्ण के पचासपीठों का विद्वान्साधक क्रमशः स्मरण करके न्यास करे—

अं कामरूपपीठाय नमः शिरसि । आं वाराणसीपीठाय नमः मुखवृत्ते । इं नेपालपीठाय नमः दक्षनेत्रे । ईं पौण्ड्रवर्धनपीठाय नमः वामनेत्रे । उं पुरस्थिरपीठाय नमः दक्षकर्णे । ऊं कान्यकुब्जपीठाय नमः वामकर्णे । ऋं पूर्णगिरिपीठाय नम; दक्षनासिकायाम् । ॠं अर्बुदपीठाय नमः वामनासिकायाम् । ऌं आम्रातकेश्वरपीठाय नमः दक्षगण्डे । ॡं एकाम्रपीठाय नमः वामगण्डे । एं त्रिस्रोतपीठाय नमः ऊर्ध्वोष्ठे । ऐं कामकोटिपीठाय नमः अधरे । ओं कैलासपीठाय नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ । औं भृगुनगरपीठाय नमः अधोदन्तेषु । अं केदारपीठाय नमः ललाटे । अः चन्द्रपुरपीठाय नमः चिबुके । कं श्रीपुरपीठाय नभः दक्षबाहुमूले । खं ॐकारपीठाय नमः दक्षकूर्परे । गं जालन्धरपीठाय नमः दक्षमणिबन्धे । घं मालवपीठाय नमः दक्षहस्त-अंगुलिषु । ङं कुलान्तकपीठाय नमः दक्षहस्त-अंगुल्यग्रे । चं देवीकोटपीठाय नमः वामबाहुमूले । छं गोकर्णपीठाय नमः वामकूर्परे । जं मारुतेश्वरपीठाय नमः वाममणिबन्धे । झं अट्टहासपीठाय नमः वामहस्तांगुलीषु । ञं विराटपीठाय नमः वामहस्त-अंगुल्यग्रेषु । टं गजगृहपीठाय नमः दक्षोरौ । ठं महापथपीठाय नमः दक्षजानुनि । डं कोल्लगिरिपीठाय नमः दक्षगुल्फे । ढं ऐलापुरपीठाय नमः दक्षपाद-अंगुलिमूले । णं कालीश्वरपीठाय नमः दक्षपाद-अंगुल्यग्रेषु । तं जयान्तकपीठाय नमः वामोरौ । थं उज्जयिनीपीठाय नमः वामजानुनि । दं चरित्रापुरपीठाय नमः वामगुल्फे । धं क्षीरिकपीठाय नमः वामपाद अंगुलिमूले । नं हस्तिनापुरपीठाय नमः वामपाद अंगुल्यग्रेषु । पं उड्डीशपीठाय नमः

दक्षपार्श्वे। फं प्रयागपीठाय नमः वामपार्श्वे। बं षष्ठीशपीठाय नमः पृष्ठे। भं मायापुरपीठाय नमः नाभौ। मं जलेश्वरपीठाय नमः जठरो। यं मलयगिरिपीठाय नमः हृदि। रं श्रीशैलपीठाय नमः दक्षांसे। लं मेरुपीठाय नमः ककुदि। वं गिरिवरपीठाय नमः वामांसे। शं महेन्द्रपुरपीठाय नमः हृदादिदक्षपाण्यन्तम्। षं वामनपुरपीठाय नमः हृदादिवामपाण्यन्तम्। सं हिरण्यपुरपीठाय नमः हृदादिदक्षपादान्तम्। हं महालक्ष्मीपुरपीठाय नमः हृदादिवामपादान्तम्। ळं उड्डीयाणपीठाय नमः पादादिनाभ्यन्तम्। क्षं छायाछत्रपीठाय नमः नाभ्यादिमूर्धान्तम्। इति पीठन्यासं। इति षोडान्यासः।

इस प्रकार पीठन्यास एवं षोढ़ान्यास सम्पन्न हुए।

अथ महायोगिनीन्यासः

तत्र विशुद्धौ षोडशदलकमले—

महायोगिनीन्यास के क्रम में विशुद्धिचक्र के षोडशदल कमल में डाकिनी का ध्यान करे।

डाकिनीध्यान

रक्तारक्तत्रिनेत्रां पशुजनभयकृत् शूलखट्वाङ्गहस्तां
वामे खेटं दधानाम् चषकमपि सुरापूरितं चैकवक्त्राम्।
अत्युग्रामुग्रदंष्ट्रामरिकुलमथनीं पायसान्नप्रसक्तां
कण्ठस्थानेऽमृताढ्यैः परिवृतवपुषं भावयेड्डाकिनीं ताम्॥

इति ध्यात्वा न्यसेत्।

स्वयं लालवर्ण की, लाल-लाल तीन नेत्रों से युक्त, पशुभावाचारियों को भय देने वाली, अपने दाहिने हाथों में शूल एवं खट्वाङ्ग तथा बाएँ हाथों में खेट और सुरा से भरा हुआ चषक धारण की हुई, अपने अत्यन्तउग्र दाँतों से शत्रुसमूह का मथन करती हुई, उग्रस्वभाव की डाकिनी देवी का स्मरण करता हूँ जो पायस (खीर) प्रिय हैं तथा जिनका कण्ठस्थान अमृत से युक्त है। उपर्युक्त ध्यान सम्पन्न कर न्यास करे—

डां डीं डूं डैं डौं डः डमलवरयूं डाकिनि ! मां रक्ष रक्ष मम त्वग्धातुं रक्ष रक्ष, सर्वसत्त्ववशङ्करि देवि ! आगच्छागंच्छ इमां पूजां गृह्णाण गृह्णाण ऐं घोरे देवि ! ह्रीं सः परमघोरे ! हूं घोररूपे ! एहि एहि। नमश्चामुण्डे ! डलरकसहैं श्रीभुवनेश्वरि देवि वरदे ! विच्चे। अं आं इं ईं उं ऊं ऋं लृं लॄं एं ऐं ओं औं अं अः विशुद्धपीठस्थे विशुद्ध डाकिनि ! विशुद्धनाथदेव ! श्रीपादुकां पूजयामि नमः। इत्यंगुष्ठानामिकाभ्यां कर्णिकायां विन्यस्य तदग्रादिपरितस्तदावरण-शक्तीर्न्यसेत्—इस प्रकार अं....अः पूजयादि नमः से अंगुष्ठा अनामिका से कर्णिका में न्यास कर उसके आगे चारो ओर नीचे लिखे अनुसार

आवरण शक्तियों का न्यास करे। अं अमृतायै नमः। आं आकर्षिण्यै नमः। इं इन्द्राण्यै नमः। ईं ईशान्यै नमः। उं उमायै नमः। ऊं ऊर्ध्वकेशिन्यै नमः। ऋं ऋद्धिदायै नमः। ॠं ॠषायै नमः। ऌं ऌङ्कारायै नमः। ॡं ऌङ्कायै नमः। एं एकपादायै नमः। ऐं ऐश्वर्यात्मिकायै नमः। ओं ओंकारात्मिकायै नमः। औं औषधात्मिकायै नमः। अं अम्बिकात्मिकायै नमः। अः अक्षरात्मिकायै नमः।

इति डाकिनीं ध्यात्वा प्राग्दक्षिणेन न्यसेत्। ततोऽनाहते द्वादशदलकमले राकिनीध्यानम्—

इस प्रकार डाकिनी की भाँति ही राकिनी का ध्यानकर पूर्व-दक्षिण क्रम से न्यास करें तब अनाहतचक्र के द्वादशदल में ध्यान करे।

राकिनीध्यान

श्यामां शूलाग्रहस्तां डमरुकसहितं तीक्ष्णचक्रं वहन्तीं।
श्यामारक्तां त्रिनेत्रां भ्रुकुटिवलिलसदृष्टदन्तप्रभाभिः॥
दीप्तास्यां देवदेवीं हृदयकमलगां रक्तधात्वेकनाथाम्।
शुद्धान्नेषु प्रसक्तां मधुमदमुदितां चिन्तयेद् राकिनीं ताम्॥

राकिनी देवी का जो श्यामवर्ण की, अपने हाथों में त्रिशूल, डमरू और चक्र धारण की हुई, श्याम और रक्त तीन नेत्रों से युक्त, सुन्दर भौंहों से सुशोभित हैं और अपने बाहर दीखने वालों दाँतों की प्रभा से युक्त, देवों की भी देवी, रक्तधातु की स्वामिनी, शुद्धान्नप्रिय, मधु (मदिरा) के मद से प्रसन्नचित्त हो भक्तों के हृदयकमल में विराजमान हैं, चिन्तन करना चाहिए।

इति राकिनीं सावरणां ध्यात्वा तत्कर्णिकायां तन्मन्त्रं न्यसेत्—

इस प्रकार आवरण सहित राकिनी का ध्यान कर उसकी कर्णिका में उसके मन्त्र का न्यास करे।

रां रीं रूं रैं रौं रः रमलवरयूं राकिनि ! मां रक्ष रक्ष मम रक्तधातुं रक्ष रक्ष सर्वसत्त्ववशङ्करि देवि। आगच्छागच्छ इमां पूजां गृहण गृहण ऐं घोरे देवि ! ह्रीं सः परमघोरे ! ह्रूं घोररूपे एह्येहि नमश्चामुण्डे ! डरलकस हैं श्रीभुवनेश्वरि देवि वरदे ! विच्चे। कं खं.....ठं अनाहतपीठस्थे अनाहतराकिनि ! अनाहतनाथदेव। श्रीपादुकां पूजायामि नमः।

इति पूर्ववन्न्यस्य दलेषु परितस्तदावरणदेवान् न्यसेत्—

ऐसा पहले की भाँति न्यास कर दलों में चारो ओर आवरण देवताओं का न्यास करे।

कं कालरात्र्यै नमः । खं खातितायै नमः । गं गायत्र्यै नमः । घं घण्टाधारिण्यै नमः । ङं ङार्णात्मिकायै नमः । चं चामुण्डायै नमः । छं छायायै नमः । जं जयायै नमः । झं झांकारिण्यै नमः । ञं ञार्णात्मिकायै नमः । टं टङ्कहस्तायै नमः । ठं ठंकारिण्यै नमः । इति राकिनीं ध्यात्वा न्यसेत् । इस प्रकार राकिनी का ध्यान कर न्यास करे ।

ततो मणिपूरे दशदलकमले लाकिनीध्यानम्—

तब मणिपूर के दशदल कमल में लाकिनी का ध्यान करे ।

लाकिनीध्यान

कृष्णां देवीं त्रिवक्त्रां त्रिनयनलसितां दंष्ट्रिणीमुग्ररूपाम् ।
वज्रं शक्तिं च दण्डाभयवरदकरां दक्षवामे दधानाम् ॥
ध्याये नाभिस्थपद्मे दशदलविलसत्कर्णिके लाकिनीं ताम् ।
मांसस्थां गौड़भक्तोत्सुकहृदयवतीं विन्यसेत् साधकेन्द्रः ॥

श्रेष्ठ साधक, अपने नाभिचक्र में स्थित मणिपूर के दशदलकमल में उन लाकिनी देवी का न्यासपूर्वक ध्यान करे—जो कालेवर्णवाली, तीननेत्रयुक्त, तीनमुखों वाली, बड़े-बड़े दांतों के कारण उग्र रूप की हैं । जो अपने दाहिने हाथों में वज्र और शक्ति, बाएँ हाथ में दण्ड, अभय व वरमुद्रा धारण की, मांसधातु की स्वामिनी, गुड़ के भात (रसियाव) के प्रति उत्सुक हृदयवाली हैं ।

इति ध्यात्वा लाकिनीमन्त्रं न्यसेत्—

इस प्रकार ध्यान कर लाकिनीमंत्र का न्यास करे ।

लां लीं लूं लैं लौं लः लमवरयूं लाकिनि ! मां रक्ष रक्ष मम मांसधातुं रक्ष रक्ष सर्वसत्त्ववशङ्करि देवि ! आगच्छागच्छ इमां पूजां गृहण गृहण ऐं घोरे देवि ! ह्रीं सः परमघोरे ! हूं घोररूपे ! एह्येहि नमश्चामुण्डे ! डरलकसहैं श्रीभुवनेश्वरि देवि वरदे ! विच्चे । डं.......फं मणिपूरकपीठस्थे मणिपूरकलाकिनि ! मणिपूरकनाथदेव ! श्रीपादुकां पूजयामि नमः । इति कर्णिकायां विन्यस्य लाकिनीवत् ध्यात्वा न्यसेत् । परितस्तदावरणदेवता न्यसेत्—

ऐसा कर्णिका में न्यास कर उसके चारो ओर आवरण देवता का न्यास करे ।

डं डामर्यै नमः । ढं ढङ्कारिण्यै नमः । णं णङ्कारिण्यै नमः । तं तामस्यै नमः । थं स्थानदेव्यै नमः । दं दाक्षायिण्यै नमः । धं धात्र्यै नमः । नं नन्दायै नमः । पं पार्वत्यै नमः । फं फेत्कारिण्यै नमः ।

ततः स्वाधिष्ठाने षड्दलकमले—

तब स्वाधिठानचक्र के षट्दलकमल में काकिनी का ध्यान करे ।

काकिनीध्यान

स्वाधिष्ठानाख्यपद्मे रसदललसिते वेदवक्त्रां त्रिनेत्राम्।
पीताभां धारयन्तीं त्रिशिखगुणकपालाभयान् पातु सर्वाम्॥
मेदोधातुप्रतिष्ठामतिमदमुदितां बन्धिनीत्यादिवीताम्।
दध्यन्ने सक्तचित्तामभिमतफलदां काकिनीं भावयेत् ताम्॥

जो रस (छ:) दलों से युक्त कमल में, स्वाधिष्ठानचक्र में स्थित हो प्रत्येक के तीननेत्रों से युक्त चारमुखोंवाली पीले रंग की आभा धारण की हुई, त्रिशिख (त्रिशूल), गुण (पाश), कपाल और अभयमुद्रा से सब की रक्षा करने वाली, मेदधातु में प्रतिष्ठित, मदपान से अत्यन्तमुदित, प्रसन्नचित्त, बन्धिनी आदि से घिरी हुई, दही और अन्न के भोजन में आसक्त, अमितफल देनेवाली हैं, उन काकिनी देवी की मैं भावना करता हूँ।

इति ध्यात्वा कर्णिकायामेतन्मन्त्रं न्यसेत्—

ऐसा ध्यान कर कर्णिका में इस मन्त्र का न्यास करे।

कां कीं कूं कैं कौं क: कमलवरयूं काकिनि ! मां रक्ष रक्ष मम मेदोधातुं रक्ष रक्ष सर्वसत्त्ववशङ्करि देवि ! आगच्छागच्छ इमां पूजां गृहण गृहण। ऐं घोरे देवि ! ह्रीं स: परमघोरे ! ह्रूं घोररूपे ! एह्येहि नमश्चामुण्डे ! डरलकसहैं भुवनेश्वरि देवि ! वरदे ! विच्चे। बं भं मं यं रं लं स्वाधिष्ठानपीठस्थे स्वाधिष्ठानकाकिनि ! स्वाधिष्ठाननाथदेव ! श्रीपादुकां पूजयामि नम:।

इति विन्यस्य परितस्तद्दलेषु परिवारदेवता न्यसेत्—इस प्रकार न्यास कर चारो ओर दलों में देवता का न्यास करे।

बं बन्धिन्यै नम:। भं भद्रकाल्यै नम:। मं महामायायै नम:। यं यशस्विन्यै नम:। रं रमायै नम:। लं लम्बोष्ठ्यै नम:।

इति काकिनीवद्ध्यात्वा न्यसेत्।

इस प्रकार से काकिनी की भाँति ध्यान कर न्यास करे।

ततो मूलाधारे चतुर्दलकमलकर्णिकायां शाकिनी ध्यानम्—तब मूलाधार के चतुर्दश कमल की कर्णिका में शाकिनी का ध्यान करे।

शाकिनीध्यान

देवीं ज्योति:स्वरूपां त्रिनयनविलसत्पञ्चवक्त्रां सुदंष्ट्राम्।
हस्ताम्भोजेक्षुचापं सृणिमपि दधतीं पुस्तकं ज्ञानमुद्राम्॥

मूलाधारस्य पद्मे निखिलपशुजनोन्मादिनीमस्थिसंस्थाम् ।
स्वाद्वन्नेप्रीतियुक्तां मधुमदमुदितां चिन्तयेच्छाकिनीं ताम् ॥

मैं उन शाकिनी देवी का चिन्तन (ध्यान) करता हूँ जो ज्योतिस्वरूप हैं, तीन-तीननेत्रों वाले पाँचमुखों से युक्त हैं। जिनके दाँत सुन्दर हैं। जो अपने हाथों में इख का धनुष, सृणि (अंकुश), पुस्तक, ज्ञानमुद्रा धारण कर, मूलाधारपद्म में समस्त पशुजनों को उन्मत्त करती हुई, अस्थिधातु में स्थित हो स्वादिष्ट अन्न से प्रेम रखने वाली, मधु के मद से मुदित हैं।

इति ध्यात्वा—ऐसा ध्यान कर।

सां सीं सूं सैं सौं सः समलवरयूं शाकिनि ! मां रक्ष रक्ष ममास्थिधातुं रक्ष रक्ष सर्वसत्त्ववशङ्करि देवि ! आगच्छागच्छ इमां पूजां गृह्ण गृह्ण । ऐं घोरे देवि ! ह्रीं सः परमघोरे ! ह्रूं घोररूपे ! एह्येहि नमश्चामुण्डे ! डरलकसहैं। श्रीभुवनेश्वरि देवि वरदे ! विच्चे। वं शं षं सं मूलाधारपीठस्थे मूलाधारशाकिनि ! मूलाधारनाथदेव ! श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

इति विन्यस्य तद्दलेषु तत्परिवारदेवतास्तद्वद् ध्यात्वा न्यसेत्—

ऐसा न्यास कर उसके दलों में परिवारदेवताओं का उसी भाँति ध्यान कर न्यास करे।

वं वरदायै नमः। शं शङ्खिन्यै नमः। षं षोढ़ायै नमः। सं सरस्वत्यै नमः।

ततो भ्रूमध्ये आज्ञाचक्रकर्णिकायां हाकिनी ध्यानम्—

तब भ्रूमध्य के आज्ञाचक्र की कर्णिका में हाकिनीध्यान करे।

हाकिनीध्यान

भ्रूमध्ये विन्दुपद्मे द्विदलसुललिते शुक्लवर्णां कराब्जैः ।
विभ्राणां ज्ञानमुद्रां डमरुकसहितामक्षमालां कपालम् ॥
षड्वक्त्रां मज्जसंस्थां त्रिनयनलसितां हंसवत्यादियुक्ताम् ।
हारिद्रान्ने प्रसक्तां सकलसुरनुतां हाकिनीं भावयेत् ताम् ॥

भ्रूमध्य में स्थित सुन्दरद्विदल बिन्दुकमल में स्थित शुक्लवर्ण, हाथों में ज्ञान-मुद्रा, डमरु, रुद्राक्षमाला और कपालपात्र धारण की हुई, तीननेत्रों वाले छः मुखों से युक्त, मज्जाधातु में स्थित हंसवती आदि शक्तियों से वेष्टित, हरिद्रान्न से प्रेम रखने वाली उन हाकिनी देवी की भावना करता हूँ जो सभी देवों से नमस्कृत भी हैं।

इति ध्यात्वा ऐसा ध्यान कर—हां ह्रीं हूं हैं ह्रौं हः हमलवरयूं हाकिनि ! मां रक्ष रक्ष मम मज्जाधातुं रक्ष रक्ष सर्वसत्त्ववशङ्करि देवि ! आगच्छागच्छ इमां पूजां गृह्ण गृह्ण । ऐं घोरे देवि ! ह्रीं सः परमघोरे ! ह्रूं घोररूपे ! एह्येहि नमश्चामुण्डे ! डरलकसहैं

श्रीभुवनेश्वरि देवि वरदे ! विच्चे । हं क्षं आज्ञापीठस्थे आज्ञाहाकिनि ! आज्ञानाथदेव ! श्रीपादुकां पूजयामि नमः । इति विन्यस्य हाकिनिवद् ध्यात्वा तद्दलयोः न्यसेत्—

ऐसा न्यास कर हाकिनी की भाँति ध्यान कर उसके दलों में न्यास करे—

हं हंसवत्यै नमः । क्षं क्षमावत्यै नमः ।

ततो ब्रह्मरन्ध्रे सहस्त्रारकर्णिकायां याकिनी ध्यानम्—

तब ब्रह्मरन्ध्र में सहस्त्रार की कर्णिका में याकिनी का ध्यान करें ।

याकिनीध्यान

मुण्डव्योमासनस्थे सहस्त्रदलयुते याकिनीं भैरवीं ताम् ।
यक्षिण्याद्यां समस्तायुधललितकरां सर्ववर्णां समष्टिम् ॥
डाकिनीं सर्ववक्त्रां सकलसुखकरीं सर्वधातुस्वरूपाम् ।
सर्वान्ने सक्तचित्तां परशिवरसिकां भावयेत् सर्वरूपाम् ॥

मैं मुण्डाकाश में सहस्त्रदलआसन पर विराजमान, उन याकिनी भैरवी का ध्यान करता हूँ जो यक्षिणियों की आदिरूप, सभी आयुधों से सुशोभितहाथोंवाली, सभी वर्णोंवाली, समष्टिस्वरूप, सर्वमुखी, सबको सुख देने वाली, सभी धातुओं की रूप, सभी प्रकार के अन्नभोग में आसक्तचित्त, परशिवरसिक, सर्वस्वरूप हैं ।

इति ध्यात्वा ऐसा ध्यान कर—यां यीं यूं यैं यौं यः यमलवरयूं याकिनि ! मां रक्ष रक्ष मम शुक्रादिसर्वधातून् रक्ष रक्ष सर्वसत्त्ववशङ्करि ! आगच्छागच्छ इमां पूजां गृह्ण गृह्ण । ऐं घोरे देवि ! ह्रीं सः परमघोरे ! ह्रूं घोररूपे ! एह्येहि नमश्चामुण्डे डरलकसहैं श्रीभुवनेश्वरि देवि ! वरदे विच्चे । अं.....अः कं.....हं लं क्षं ब्रह्मरन्ध्रपीठस्थे ब्रह्मरन्ध्रयाकिनि ! ब्रह्मरन्ध्रनाथदेव ! श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

इति विन्यस्य परितः पञ्चाशद्वर्णदेवतां याकिनीवद् ध्यात्वा न्यसेत्—

ऐसा न्यास कर चारो ओर पचासवर्ण देवताओं का याकिनी की भाँति ध्यान कर न्यास करे ।

अं अमृतायै नमः । आं आकर्षिण्यै नमः । इं इन्द्राण्यै नमः । ईं ईशान्यै नमः । उं उमायै नमः । ऊं उर्ध्वकेश्यै नमः । ऋं ऋद्धिदायै नमः । ॠं ॠषायै नमः । ऌं ऌङ्कारात्मिकायै नमः । ॡं ॡङ्कायै नमः । एं एकपादायै नमः । ऐं ऐश्वार्यात्मिकायै नमः । ओं ओंकारात्मिकायै नमः । औं औषधात्मिकायै नमः । अं अम्बिकायै नमः । अः अक्षरात्मिकायै नमः । कं कालरात्र्यै नमः । खं खातीतायै नमः । गं गायत्र्यै नमः । घं घण्टाधारिण्यै नमः । ङं ङार्णात्मिकायै नमः । चं चामुण्डायै नमः । छं छायायै नमः ।

जं जयायै नमः । झं झांकारिण्यै नमः । ञं ञार्णात्मिकायै नमः । टं टंकहस्तायै नमः । ठं ठंकारिण्यै नमः । डं डामर्यै नमः । ढं ढांकारिण्यै नमः । णं णंकारिण्यै नमः । तं तामस्यै नमः । थं स्थानदेव्यै नमः । दं दाक्षायिण्यै नमः । धं धात्र्यै नमः । नं नन्दायै नमः । पं पार्वत्यै नमः । फं फेत्कारिण्यै नमः । बं बन्धिन्यै नमः । भं भद्रकाल्यै नमः । मं महामायायै नमः । यं यशस्विन्यै नमः । रं रमायै नमः । लं लम्बोष्ठ्यै नमः । वं वरदायै नमः । शं शशिन्यै नमः । षं षोढायै नमः । सं सरस्वत्यै नमः । हं हंसवत्यै नमः । क्षं क्षमावत्यै नमः ।।

इति महायोगिनीन्यासः । इस प्रकार महायोगिनी न्यास सम्पन्न हुआ ।

अथ हृल्लेखादिन्यासः—ओं हृल्लेखायै नमः मूर्ध्नि । एं गगनायै नमः वक्त्रे । उं रक्तायै नमः हृदि । इं करालिकायै नमः गुह्ये । अं महोच्छुष्मायै नमः पादयोः । इति हृल्लेखादिन्यासः । इस प्रकार हृल्लेखान्यास सम्पन्न करे ।

ओं हृल्लेखायै नमः ऊर्ध्वमुखे । एं गगनायै नमःपूर्वमुखे । उं रक्तायै नमः दक्षिणमुखे । इं करालिकायै नमः उत्तरमुखे । अं महोच्छुष्मायै नमः पश्चिममुखे । इति पूर्ववद् ऊर्ध्वदक्षिणोत्तरपश्चिममुखक्रमेण हृल्लेखादिन्यासः । इस प्रकार पहले की भांति ही ऊर्ध्वादि मुखक्रम में हृल्लेखा न्यास पुनः सम्पन्न करे ।

अथ गायत्र्यादिन्यासः—कण्ठे गायत्र्यै नमः । वामकुचे सावित्र्यै नमः । दक्षकुचे सरस्वत्यै नमः । वामांसे ब्रह्मणे नमः । हृदि विष्णवे नमः । दक्षांसे महेश्वराय नमः । इति गायत्र्यादिन्यासः ।

अथ मिथुनन्यासः—भाले गायत्र्यै नमः ब्रह्मणे नमः । दक्षगण्डे सावित्र्यै नमः विष्णवे नमः । वामगण्डे माहेश्वर्यै नमः रुद्राय नमः । वामकर्णे श्रियै नमः धनपतये नमः । मुखे रत्यै नमः कामाय नमः । दक्षकर्णे पुष्ट्यै नमः गणपतये नमः । दक्षकर्णकपोलयोर्मध्ये वसुधारायै नमः शङ्खनिधये नमः । वामकर्णकपोलयोर्मध्ये वसुमत्यै नमः पद्मनिधये नमः । इति विन्यस्य पुनर्न्यसेद् यथा—

गलमूले गायत्र्यै नमः ब्रह्मणे नमः । वामकुचे सावित्र्यै नमः विष्णवे नमः । दक्षकुचे माहेश्वर्यै नमः रुद्राय नमः । वामांसे श्रियै नमः धनपतये नमः । हृदये रत्यै नमः कामाय नमः । दक्षांसे पुष्ट्यै नमः गणपतये नमः । दक्षपार्श्वे वसुधारायै नमः शङ्खनिधये नमः । वामपार्श्वे वसुमत्यै नमः पद्मनिधये नमः ।। इति मिथुनन्यासः ।

अथ ब्राह्म्यादिन्यासः—ललाटे आं ब्राह्म्यै नमः । वामांसे ईं माहेश्वर्यै नमः । वामपार्श्वे ऊं कौमार्यै नमः । उदरे ॠं वैष्णव्यै नमः । दक्षपार्श्वे लॄं वाराह्यै नमः । दक्षांसे ऐं इन्द्राण्यै नमः । ककुदि औं चामुण्डायै नमः । हृदि अः महालक्ष्म्यै नमः ।। इति ब्राह्म्यादिन्यासः ।

इति विन्यस्य मूलमन्त्रेण व्यापकं कृत्वा पीठन्यासं कुर्यात्। तद्यथा—

ऐसा गायत्री, मिथुन ब्राह्मयादि न्यास कर मूलमन्त्र से व्यापक कर पीठन्यास करें—

मूलाधारे आधारशक्त्यै नमः। स्वाधिष्ठाने प्रकृत्यै नमः। मणिपूरे कूर्मायै नमः। हृदि अनन्ताय नमः। पृथिव्यै सुधासमुद्राय। मणिद्वीपाय, चिन्तामणिगृहाय, पारिजाताय तन्मूले रत्नवेदिकायै तस्योपरि मणिपीठाय दिक्षुनानामुनिगणेभ्यो नानादेवेभ्यो नमः। दक्षांसे धर्माय नमः। वामांसे ज्ञानाय नमः। वामोरौ वैराग्याय नमः। दक्षोरौ ऐश्वर्याय नमः। दक्षकुक्षौ अधर्माय नमः। दक्षपृष्ठे अज्ञानाय नमः। वामपृष्ठे अवैराग्याय नमः। वामकुक्षौ अनैश्वर्याय नमः। पुनः हृदि शेषाय नमः। पद्माय नमः, प्रकृतिमयपत्रेभ्यो नमः, विकृतिमयकेसरेभ्यो नमः, मध्ये पञ्चाशद्वर्णभूषितकर्णिकायै नमः, वैश्वानरमण्डलाय नमः, सूर्यमण्डलाय नमः, सोममण्डलाय नमः, सं सत्त्वाय नमः, रं रजसे नमः, तं तमसे नमः, आं आत्मने नमः, अं अन्तरात्मने नमः, पं परमात्मने नमः, ह्रीं ज्ञानात्मने नमः। अष्टपत्रेषु ॐ जयायै नमः, विजयायै नमः, अजितायै नमः, अपराजितायै नमः, नित्यायै नमः, विलासिन्यै नमः, दोग्ध्र्यै नमः, अघोरायै नमः। मध्ये ॐ मङ्गलायै नमः, ॐ मनोन्मन्यै नमः, एं परायै नमः, ऐं अपरायै नमः, ऐं परापरायै नमः, ह्रीं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः। इति पीठन्यासं विधाय पुनः षडङ्गन्यासं कुर्यात्—

ह्रां हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रूं शिखायै वषट्। ह्रैं कवचाय हुं। ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रः अस्त्राय फट्।

तब ह्रां हृदयाय नमः.......आदि मन्त्रों से पुनः षडङ्गन्यास सम्पन्न करे।

इति षडङ्गं विधाय। निमीलितनयनः स्वहृदयकमले स्वात्मभेदेन श्रीभुवनेश्वरीं ध्यायेद् यथा—

उपर्युक्त समस्त न्यासविधान सम्पन्न कर साधक निमिलितनेत्रों से अपने हृदयकमल में अपने से अभेदात्मक भुवनेश्वरी देवी का नीचे लिखा ध्यान करे—

उद्यदादित्यसङ्काशां शीतांशुकृतशेखराम्।
पद्मासनां त्रिनेत्रां च पाशांकुशवराभयैः॥
अलंकृतचतुर्बाहुं मन्दस्मितलसन्मुखीम्।
कुचभारविनम्राङ्गलतां देवीं हृदि स्मरेत्॥

मैं उन भुवनेश्वरी देवी का अपने हृदय में स्मरण करता हूँ जो उगते हुये सूर्य के समान आभावाली हैं तथा चन्द्रमा को अपने मस्तक पर धारण की हुई, पद्मासन

पर विराजमान, पाश-अङ्कुश, वर एवं अभय मुद्राओं से सुशोभित चारहाथों तथा तीननेत्रों से युक्त हैं और मन्द-मन्द मुस्कुरा रही हैं, जिनकी अङ्गलता, स्तनों के भार से झुकी हुई है।

वामोर्ध्वकरादिवामाधःकरपर्यन्तमायुधध्यानम् ।

यहाँ बताते हैं कि ऊपरी बायें हाँथ से चलकर ऊपरी दाहिने हाथ की ओर होता हुआ निचले बायें हाथ तक आयुधक्रम का विन्यास समझना चाहिए।

इति ध्यात्वा मनसाऽऽसनादिसर्वोपचारैराराध्य मनसा होमादिकं कुर्यात्।

तत्र मूलाधारे आत्माऽन्तरात्मपरमात्मज्ञानात्मस्वरूपं चतुरस्रं विभाव्य, तन्मध्ये परमज्ञानाग्निं विचिन्त्य—

मूलं अहन्तां जुहोमि स्वाहा, मूलं असत्यं जुहोमि स्वाहा, मूलं पैशुन्यं जुहोमि स्वाहा, मूलं कामं जुहोमि स्वाहा, मूलं क्रोधं जुहोमि स्वाहा, मूलं लोभं जुहोमि स्वाहा, मूलं मदं जुहोमि स्वाहा, मूलं अहङ्कारं जुहोमि स्वाहा। इति हुत्वा पूर्णाहुतित्रयं दद्याद्।

उपर्युक्त ध्यान सम्पन्न कर साधक उनकी आसनादि उपचारों से मानसिक आराधना करके मानसिकरूप से होमादि कर्म सम्पन्न करे। इस क्रम में वह अपने मूलाधार में आत्मा, अन्तरात्मा, परमात्मा, ज्ञानात्मारूप चौकोर स्थण्डिल की भावना कर उसके मध्य में प्रज्ज्वलित ज्ञानाग्नि का चिन्तन करके—मूलमन्त्रसहित ऊपर लिखे अनुसार अहन्ता, असत्य, पैशुन्य, काम, क्रोध, लोभ, मद, अहंकारादि स्वदोषों का होम कर नीचे लिखे तीन मन्त्रों से पूर्णाहुति प्रदान करे—

ॐ धर्माधर्महविर्दीप्ते स्वात्माग्नौ मनसा स्रुचा।
सुषुम्णावर्त्मना नित्यमक्षवृत्तीर्जुहोम्यहं स्वाहा॥

ॐ प्रकाशाकाशहस्ताभ्यामवलम्ब्योन्मनीस्रुचम्।
धर्माधर्मकलास्नेहपूर्णां वह्नौ जुहोम्यहं स्वाहा॥

ॐ अन्तर्निरन्तरनिरिन्धनमेधमाने
मायान्धकारपरिपन्थिनि संविदग्नौ।
कस्यांश्चिदद्भुतमरीचिविकाशिकायां
विश्वं जुहोमि वसुधा दिशि वावसानं स्वाहा।

मन्त्रार्थ—

मैं धर्माधर्म की हवि से प्रदीप्त अपने आत्मारूपी अग्नि में मनरूपी स्रुवा से सुषुम्नामार्ग से नित्य अक्षवृत्ति का होम करता हूँ।

प्रकाश एवं आकाश रूपी हाथों द्वारा उन्मनी स्त्रुवा को धारण कर धर्माधर्म-कलारूपी स्नेह से परिपूर्ण, अग्नि में उपर्युक्त होम करता हूँ।

मैं अपने अन्तर में बिना इन्धन के ही प्रज्वलित माया के अन्धकार को रोकने वाली संविद्रूपी अग्नि में किसी अद्भुतकिरणों की विकाशिका में दिगन्त व्याप्त वसुधा और विश्व का हवन करता हूँ।

ततः मानसोपचारैः सम्पूजयेत्। यथा—

लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि नमः। हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि नमः। यं वायव्यात्मकं धूपं समर्पयामि नमः। रं वह्न्यात्मकं दीपं समर्पयामि नमः। वं अमृतात्मकं नैवेद्यं समर्पयामि नमः। सं सर्वतत्त्वात्मकं ताम्बूलं समर्पयामि नमः। इति सम्पूज्य यथाशक्तिं जपं विधाय, जपान्ते करषडङ्गन्यासं कृत्वा जपफलं समर्पयेत्।

तब मानसिक उपचारों से पूजन करे। जैसे—लं पृथिव्यात्मकं...ताम्बूलं समर्पयामि नमः से पूजन कर यथा-शक्ति जप करे। जप के अन्त में करन्यास और षडङ्गन्यास सम्पन्न करे।

गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देवि! त्वत्प्रसादान्महेश्वरि!॥

इत्यन्तर्यजनं कृत्वा स्वदक्षे सामान्यार्घ्यं कुर्याद्यथा।

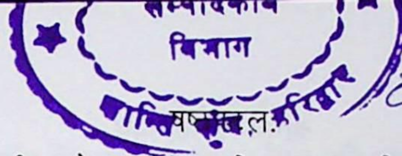
गुह्यातिगुह्य-मन्त्र से जप फल समर्पण करे। इस प्रकार अन्तर्यजन की प्रक्रिया पूर्ण करे तब अपनी दाहिनी ओर बहिर्यजन के अन्तर्गत सामान्यार्घस्थापनविधि प्रारम्भ करे।

तत्रादौ सामान्यार्घ विधिः। अथ कलशस्थापन विधिः। स्वदक्षभागे त्रिकोण वृत्त चतुस्त्र मण्डलं विलिख्य चतुरस्त्रे चतुः पीठेन त्रिकोणं मूलं त्रिखण्डेन पूजयेत्। बिन्दुमध्ये ह्रीं आधार शक्त्यै नमः। अस्त्रमन्त्रेण आधारं प्रक्षाल्य मण्डलोपरि संस्थाप्य रं बन्हिमण्डलाय दशकलात्मने नमः। दशकलाः पूजयेत्। अस्त्रमन्त्रेण अर्धपात्रं प्रक्षाल्य मण्डलोपरि संस्थाप्य तत्पात्रोपरि ॐ अर्क मंडलाय द्वादशकलात्मने नमः। द्वादशकलाः पूजयेत्। कवचमन्त्रेण अर्घपात्रं प्रपूर्य जलेन च भाग मेकं प्रपूर्य ॐ सोम-मण्डलाय षोड़शकलात्मने नमः। षोड़श कलाः पूजयेत्। जलमध्ये लोम विलोम मातृकामुच्चार्य धेनु मुद्रां प्रदर्श्य मत्स्य मुद्रयाच्छाद्य मूलेन पूजयेत्। ऐं अमृते अमृतोद्भवे अमृत वर्षिणि अमृतमाकर्षय २ अमृतं श्रावय २ अमृतं कुरु २ स्वाहा। एवं वारत्रयमुच्चार्य आनन्दभैरवभैरवीं सम्पूज्य गंगेत्यादि तीर्थमावाह्य—

गंगे च यमुनेचैव गोदावरि सरस्वती।
नर्मदे सिन्धु कावेरी जलेऽस्मिन्सन्निधिं कुरु॥

मूलेन गन्धादिना सम्पूज्य अङ्कुशमुद्रां प्रदर्श्य ह्रीं भुवनेश्वरि देवि इहागच्छ इहतिष्ठ हुं इत्यवगुंठ्य वौषट् अनेन गालिनी मुद्रां प्रदर्श्य वौषट् इति जलं वीक्ष्य तज्जलमध्ये करषड़ङ्ग न्यासं कुर्यात्। अक्षतान् विकीर्य ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः धेनु मुद्रां कृत्वा फट् इति संरक्ष्य ततो मत्स्यमुद्रां कृत्वा मूलमष्टधा जप्त्वा हुं फट् अनेनांगुलिध्वनि तालत्रयं दत्वा इति सामान्यार्घक्रमेण विशेषार्घस्थापनं कुर्यात्।

अथ कलशस्थापन विधिः स्ववामभागे षट्कोणान्तर्गत त्रिकोणद्वय बिन्दु बाह्यबिन्दु वृत्तचतुरस्त्र मण्डलं कृत्वा सामान्यार्घोदकेनाभ्युक्ष्य तत्राधार शक्तिभ्यो नमः। कालाग्नि रुद्राय नमः। मण्डले चतुरस्त्रे ह्रीं श्रीं कामराजपीठाय नमः। ह्रीं श्रीं जालन्धरपीठाय नमः २। उड्डियान पीठाय नमः २। पूर्णगिरि पीठाय नमः। षट्कोणे ह्रां हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा नमः। ह्रूं शिखायै वषट् नमः। ह्रैं कवचाय हुं नमः। ह्रौं नेत्रत्रयाय बौषट् नमः। ह्रः अस्त्राय फट् नमः। इति षट्कोणं च सम्पूज्य त्रिकोणे ह्रीं नमः ह्रीं नमः ह्रीं नमः। बिन्दौ ह्रीं आधार शक्तये नमः। ह्रः अस्त्राय फट्। आधारं प्रक्षाल्य मण्डलोपरि संस्थाप्य रं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः आधारोपरि दशकलाः पूजयेत्। यथा—यं धूम्रार्चिषे नमः। रं उष्मायै नमः। लं ज्वलिन्यै नमः। वं ज्वालिन्यै नमः। शं विस्फुलिंगिन्यै नमः। षं सुश्रियै नमः। सं स्वरूपायै नमः। हं कपिलायै नमः। लं कव्यवाहायै नमः। क्षं हव्यवाहायै नमः। इति। दशकला धर्म प्रदाय नमः। कलशं ह्रीं प्रक्षाल्य हुं फट् कलशं धूपवासितं हूं हूं ब्रह्माण्डचषकाय नमः इति कलशं प्रक्षाल्य ॐ ऐं ह्रीं श्रीं भुवनेश्वर्याः अमृतकलशं स्थापयामि नमः इति मण्डलोपरि स्थाप्य कं भं तपिन्यै नमः। खं बं तापिन्यै नमः। गं फं धूम्रायै नमः। घं पं मरिच्यै नमः। ङं नं ज्वलिन्यै नमः। चं धं रुच्यै नमः। छं दं सुषुम्णायै नमः। जं थं भोगदायै नमः। झं तं विश्वायै नमः। ञं णं बोधिन्यै नमः। टं ढं धारिण्यै नमः। ठं डं क्षमायै नमः। अं अर्कमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः इति सम्पूज्य तन्मध्ये त्रिकोणषट्कोण वृत्तं पात्रे विलिख्य पूर्ववत्पात्रे समस्त मन्त्रेण सम्पूज्य वमिति वरुणबीजं अष्टधा जप्त्वा अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं पठित्वा पुनः विलोमं पठेत्। क्षं लं हं सं षं शं वं लं रं यं मं भं बं फं पं नं धं दं थं तं णं ढं डं ठं टं ञं झं जं छं चं ङं घं गं खं कं अः अं औं ओं ऐं एं ॡं ऌं ॠं ऋं ऊं उं ईं इं आं अं अमृतेन त्रिकोणं प्रपूर्य तत्र गन्धादि निःक्षिप्य अं अमृतायै नमः। आं मानदायै नमः। ई पूषायै नमः। ईं तुष्ट्यै नमः। उं पुष्ट्यै नमः। ऊं रत्यै नमः। ॠं ऋद्धायै नमः। ॠं शशिन्यै नमः। ऌं चन्द्रिकायै नमः। ॡं कान्त्यै नमः। एं ज्योत्स्नायै नमः। ऐं श्रियै नमः। ओं प्रीत्यै नमः। औं अङ्गदायै नमः। अं



पूर्णायै नमः । अः पूर्णामृतायै नमः । ॐ षोऽश कलात्मने सोममण्डलाय नमः इति सम्पूज्य पूर्ववत् यन्त्रं द्रव्यमध्ये विलिख्य त्रिकोणरेखायां अं १५ कं १६ गंगेत्यादि तीर्थमावाह्य वमित्यवगुंठ्य वीक्षण मुद्रया संवीक्ष्य मूलेन गन्धमाघ्राय मूलेनाभ्युक्ष्य रक्तवस्त्रमाल्यादिभिः संविभूष्य कुम्भे पुष्पं दत्वा सुराशापमोचनं कुर्यात् ।

बहिर्यजन के अन्तर्गत अर्घस्थापन विधियाँ सम्पन्न की जाती हैं। यह अर्घस्थापन सामान्य एवं विशेष दो प्रकार का होता है दोनों में ही कलशस्थापन प्रमुख है। इस हेतु मण्डल निर्माण, आधार स्थापन, अर्घपात्र स्थापन, अर्घपात्र पूरण, अर्घपात्र पूजन की क्रियाएँ सम्पन्न की जाती हैं।

(क) मण्डल निर्माण—सामान्यार्घ स्थापन में साधक अपनी दाहिनी ओर त्रिकोण, वृत्त, चतुरस्त्र युक्त मण्डल निर्माण कर चारों कोनों में कामराज, जालन्धर, उड्डियान, पूर्णगिरि पीठ, चतुष्टय, मूलमन्त्र के त्रिखण्ड से त्रिकोण का तथा विन्दु में आधार शक्ति का पूजन करे। विशेषार्घ के लिए बाईं ओर षट्कोणान्तर्गत त्रिकोणद्वय, विन्दु चतुरस्त्रमय मण्डल निर्माण किया जाता है। पूजन में षट्कोण में षडंग पूजन तथा मूलमन्त्र से त्रिकोण पूजन की एक अतिरिक्त प्रक्रिया भी सम्पन्न करनी होती है।

(ख) आधार स्थापन—अब दोनों ही प्रक्रियाओं में ह्वः अस्त्राय फट् से आधार का प्रक्षालन कर पूर्वोक्त मण्डल पर उसका स्थापन कर रं वह्नि मण्डलाय दशकलात्मने नमः से अग्नि की धूम्रार्चि, उष्मा, ज्वलिनी, ज्वालिनी, विस्फुलिंगिनी, सुश्रिया, स्वरुपा, कपिला, कव्यवाहा, हव्यवाहा इन दश कलाओं का पूजन करना चाहिए।

(ग) अर्घपात्र (कलश/घट) स्थापन—अब कलश का प्रक्षालन, धूप वासन कर कलश स्थापन करे उस पर सूर्य की तपिनी, तापिनी, धूम्रा, मरीची, तब ज्वलिनी, रुचि, सुषुम्णा, भोगदा, विश्वा, बोधिनी, धारिणी, क्षमा, इन द्वादश कलाओं का पूजन करना चाहिए।

(घ) अर्घपात्र पूरण—इस क्रम में अर्घपात्रान्तर्गत त्रिकोण, षट्कोण, वृत्तमय यन्त्र निर्माण या यन्त्र की भावना कर उसका पुण्य से द्रव्य कर वं इस वरुण मन्त्र का आठ बार एवं अनुलोम विलोम मातृकाओं का पाठकर उसमें अमृता, मानदा, पूषा, तुष्टि, पुष्टि, रति, ऋद्धि, शशिनी, चन्द्रिका, कान्ता, ज्योत्स्ना, श्री, प्रीति, अंगदा, पूर्णा, पूर्णामिता, नामक सोलह (चन्द्र) कलाओं का ॐ षोडश कलात्मने सोम मण्डलाय नमः कहकर पूजन करे। तत्पश्चात् उसी अमृत द्रव्य में त्रिकोण की भावना कर अकथ क्रम से मातृका न्यास करे।

(ङ) अर्घपात्र पूजन—पूरित अर्घपात्र 'गंगेच यमुनेचैव' मन्त्र से तीर्थावाहन, वं से अवगुण्ठन, वीक्षण मुद्रा से संवीक्षण मूलमन्त्र से गन्ध आघ्रापन, तथा उसी से अभ्युक्षण करना चाहिए तदनन्तर विशेषार्घ्य पात्र का रक्त वस्त्र मालादि से अलंकरण कर पुष्प से उसका पूजन करे।

सामान्यार्घ में अंकुश मुद्रा से देवी के आवाहन हुं से अवगुण्ठन वौषट मन्त्र और गालिनी मुद्रा के प्रदर्शन से वीक्षण के पश्चात् कर अङ्गन्यास सहित अक्षत छिड़ककर धेनु मुद्रा से संरक्षण तथा मत्स्य मुद्रा पूर्वक मूल मन्त्र जप कर के हुं फट् से ताल त्रय देने का निर्देश भी किया गया है। उपर्युक्त रीति से सामान्य एवं विशेषार्घ के स्थापन के पश्चात् साधक, तत्त्वशोधन की प्रक्रिया में तत्पर हो। देवी पूजन में सुरा (अमृत), शुद्धि, मत्स्य, मुद्रा, मैथुन पंच तत्त्वों के शोधन का विधान है। जिसके अमृत की आवश्यकता अर्घपात्र स्थापन में भी पड़ती है अतः अर्घपात्र स्थापन के पूर्व ही सुरा शुद्धि का सम्पादन कर लेना चाहिए—इसमें सुराशाप मोचन प्रमुख है।

सुराशापमोचनमन्त्र

एकमेव परंब्रह्म स्थूलसूक्ष्ममयं ध्रुवम्।
कचोद्भवां ब्रह्महत्यां तेन ते नाशयाम्यहम्॥

मन्त्रार्थ—हे देवि ! परमब्रह्म एकमेव (अपने आप में अकेला, अद्वैत) है किन्तु निश्चय ही वही स्थूल और सूक्ष्म दोनों ही तत्त्वों से युक्त है। उसी के (चिन्तन) द्वारा मैं कच से उत्पन्न तुम्हारी ब्रह्महत्या का नाश करता हूँ।

उपर्युक्त मन्त्र से ब्रह्मशापमुक्त हुई सुरादेवी को ॐ वां वीं वूं वैं वौं, वः ब्रह्मशाप विमोचितायै सुरा देव्यै नमः इस मन्त्र का तीन बार उच्चारण करते हुए नमस्कार करे।

सूर्यमण्डलसम्भूते वरुणालयसम्भवे !।
अमावीजमये देवि ! शुक्रशापाद्विमुच्यताम्॥

हे सूर्यमण्डल के मध्य में सम्भूत, वरुणालय (सागर) से उत्पन्न, अमाबीज (अमृतवर्षिणी १६ चन्द्रकला) से युक्त सुरा देवि ! आप शुक्र के शाप से मुक्त होइए।

ॐ सां सीं सूं सैं सौं सः शुक्रशापविमोचितायै सुरादेव्यै नमः। इत्यपि त्रिः।

तब शुक्रशापमुक्त सुरादेवी को इस मन्त्र से पहले ही की भाँति तीन बार नमस्कार करे।

नीचे लिखे मन्त्रों से सुरा देवी को ब्रह्महत्या से मुक्त करे।

वेदानां प्रणवो बीजं ब्रह्मानन्दमयो यदि।
तेन सत्येन हे देवि! ब्रह्महत्यां व्यपोहतु॥

मन्त्रार्थ—हे देवि! वेद का प्रणवबीज (ॐ) यदि ब्रह्मानन्दमय है तो इस सत्य तत्त्व के प्रभाव से आपकी ब्रह्महत्या नष्ट हो जाय।

इस प्रकार ब्रह्महत्या के शाप से मुक्त हुई सुरादेवी को भगवान् कृष्ण के शाप से मुक्त करते हुये अमृत से परिपूर्ण करने के लिए निम्नलिखित मन्त्र से तीन बार नमस्कार करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्रां क्रीं क्रूं क्रैं क्रौं क्रः सुरादेव्यै कृष्णशापं विमोचय विमोचय अमृत स्रावय स्रावय स्वाहा। इति त्रिः।

तब नीचे लिखा मन्त्र पढ़े—

ॐ ह्रीं हंसः शुचिषद् वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोणसत्।
नृषद्वरसदृतसद्व्योमसदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतं वृहत्॥

मन्त्रार्थ—हंस (सूर्य), तेजोमय रूप से स्वर्ग में तथा वसुरूप से अन्तरिक्ष में एवं पृथ्वी पर होता व अग्नि के रूप में निवास करता है। वही अतिथि रूप में पूजनीय है। वह गृहस्थ की अग्नि, मनुष्य की चेतना में व्याप्त, सत्यलोक में निरूपित तथा सत्य एवं आकाश में स्थित है।

तत्पश्चात् नीचे तीन बार लिखे मन्त्र को पढ़कर नमस्कार करे—

पवमानः परंब्रह्म पवमानः परोरसः।
पवमानः परं ज्ञानं तेन ते पावयाम्यहम्॥ इत्यपि त्रिः।

हे सुरादेवि! पवमान (अग्नि) परंब्रह्म है, वही सर्वश्रेष्ठ रस तथा परमज्ञान भी है। उसी से मैं तुम्हें पवित्र करता हूँ।

पठित्वाऽऽनन्दभैरवं ध्यायेत्—
इस प्रकार से शाप मोचन की प्रक्रिया सम्पन्न कर आनन्दभैरव का ध्यान करे।

आनन्दभैरवध्यान

सूर्यकोटिप्रतीकाशं चन्द्रकोटिसुशीतलम्।
अष्टादशभुजं देवं पञ्चवक्त्रं त्रिलोचनम्॥
अमृतार्णवमध्यस्थं ब्रह्मपद्मोपरिस्थितम्।
वृषारूढं नीलकण्ठं सर्वाभरणभूषितम्॥
कपालखट्वाङ्गधरं घण्टाडमरुवादिनम्।
पाशांकुशधरं देवं गदामूशलधारिणम्।
खड्गखेटकपट्टीशं मुद्गरो शूलदण्डकम्॥

विचित्रखेटकं मुण्डं वरदाभयपाणिनम् ।
लोहितं देवदेवेश भावयेत् साधकोत्तमः ॥

हे करोड़ों सूर्य के समान प्रकाशमान् तथा करोड़ों चन्द्रमा के समान सुन्दर शीतल, अठारहभुजाओं, तीननेत्रों से युक्त पाँचमुखवाले, अमृतार्णव के मध्य, ब्रह्म-पद्म पर विराजमान देव ! आप बैल पर आरूढ़ हैं । आप नीलेकण्ठ वाले तथा सभी प्रकार के आभूषणों से विभूषित हो, कपाल, खट्वाङ्ग धारण किये हैं । आप घण्टा एवं डमरु बजा रहे हैं । आपने पाश, अंकुश, गदा एवं मूशल भी धारण किया हुआ है । ऐसे खड्ग, खेटक, पट्टीश, मुद्गर, शूल, दण्ड, विचित्रखेटक, मुण्ड तथा वरद और अभय मुद्राओं से युक्त, लोहितवर्ण के देवदेवेश की उत्तम साधक द्वारा जो भावना की जानी चाहिए वही मैं करता हूँ ।

इति ध्यात्वा 'हसक्षमलवरयूं आनन्दभैरवाय वौषट्' इति दशधा प्रजप्यानन्दभैरवाङ्कोपविष्टां सुरादेवीं ध्यायेद्, यथा—

उपर्युक्त मन्त्रानुसार आनन्दभैरव का ध्यान सम्पन्न कर हसक्षमलवर यूँ इस मन्त्र का दश बार जप करे । तत्पश्चात् आनन्दभैरव की गोद में विराजमान सुरादेवी का ध्यान करे । जैसे—

सुरादेवीध्यान

भावयेच्च सुरादेवीं चन्द्रकोटियुतप्रभाम् ।
हिमकुन्देन्दुधवलां पञ्चवक्त्रां त्रिलोचनाम् ॥
अष्टादशभुजैर्युक्तां सर्वानन्दकरोद्यताम् ।
प्रहसन्तीं विशालाक्षीं देवदेवस्य सम्मुखीम् ॥

देवदेव आनन्दभैरव के सम्मुख विराजमान, करोड़ों चन्द्रमाओं की प्रभा से युक्त, हिम और कुन्द के समान श्वेत, तीन-नेत्रवाले पाँचमुखों वाली, अठारहभुजाओं से सुशोभित, सभी प्रकार का आनन्द देने किंवा अपने सभी भक्तों को आनन्द देने को सदैव उद्यत, विशालनेत्रोंवाली, हँसती हुई, सुरादेवी (आनन्दभैरवी) के ध्यान की भावना करनी चाहिए । यह ध्यान आलिङ्गनरतभैरवी का प्रतीत होता है ।

इति ध्यात्वा 'सहक्षमलवरयीं सुरादेव्यै वौषट्' इति दशधा प्रजप्य आनन्दभैरव्यौ सम्पूज्य ।

इस प्रकार से ध्यान कर । दशबार 'सहक्षमलवरयीं सुरादेव्यै वौषट्' इस मन्त्र का दशबार जप करे तब आनन्दभैरव और आनन्दभैरवी का पूजन करे ।

पञ्चरत्नपूजा

पूर्ववद् यन्त्रं द्रव्ये विलिख्य त्रिकोणत्रिरेखायां अं-१६ कं-१६ थं-१६ इति त्रिर्विलिख्य, मध्ये हं ळं क्षं' इति च विचिन्त्य मूलखण्डत्रयेण त्रिकोणं सम्पूज्य, षट्कोणे षडङ्गं च गङ्गे चेत्यादि तीर्थमावाह्य आनन्दभैरवभैरव्यो ध्यात्वा स्वमन्त्रेण सम्पूज्य पूर्वादितः ग्लूं गगनरत्नेभ्यो नमः, स्लूं स्वर्गरत्नेभ्यो, प्लूं पातालरत्नेभ्यो, म्लूं मर्त्यरत्नेभ्यो, मध्ये न्लूं नागरत्नेभ्यो नमः' इति सम्पूज्य ।

तब पहले की भाँति यन्त्रस्थितद्रव्य में भावित त्रिकोण की तीनों रेखाओ में अं से १६ कं से १६ तथा थं से १६ वर्णों को तीन स्थानों में लिखकर मध्य में हं लं क्षं का चिन्तन करता हुआ मूलमन्त्र के तीन खण्डों से त्रिकोण में तथा षडङ्गमन्त्रों से षट्कोण में पूजन कर गङ्गे च यमुने चैव.....मन्त्र से तीर्थों का आवाहन करे। तत्पश्चात् आनन्दभैरव एवं आनन्दभैरवी का ध्यान कर उनका स्वमन्त्र अर्थात् मूलमन्त्र से पूजन करे। तदनन्तर ग्लूं गगनरत्नेभ्यो नमः आदि चार मन्त्रों से पूर्वादि चारों दिशाओं तथा मध्य में न्लू नाग रत्नेभ्यो नमः मन्त्रोच्चारपूर्वक पञ्चरत्नपूजा सम्पन्न करनी चाहिए।

उपर्युक्त रीति से सुराशापमोचन के पश्चात् साधक तत्त्वशुद्धि के क्रम में सुराशोधन हेतु प्रवृत्त हो ।

अखण्डैकरसानन्दे करैः परसुधात्मनि ।
स्वच्छन्दं स्फुरणान्मन्त्रं निद्योहि कुलरुपिणी ।।
त्वद्रूपेण करस्पर्शं करोमि त्वत्स्वरुपिणी ।
भूत्वापरामृताकारामस्मिन्विस्फुरणां कुरु ।।
ब्रह्माण्डरस संभूतमशेष कुलसम्भवम् ।
आपूरितं महापात्रं पीयूषरसमावह ।।
ब्रह्माण्डोदरतीर्थेषु करैः स्पृष्टानिसेवते ।
तेकरैस्तीर्थमावेहि तीर्थं देहि निशाकर ।।

दिवाचेति दिवाकर इति ध्यात्वा सुरां शोधयेत् ।

मांसादि शोधयेत्; यथा—मांसादि का शोधन करे ।

(यहाँ मांसादि से मांस, मीन, मुद्रा तथा कुण्डगोलादि तत्त्वशोधन का आग्रह है) जैसे—

तत्रादौ त्रिकोणवृत्तमण्डलं विलिख्य, तदुपरि मांसादिपात्रं संस्थाप्य, यं इति संशोष्य रं इति सन्दह्य 'वं' इत्याप्लाव्य धेनुमुद्रयाऽमृतीकृत्य तदुपरि मूलं दशधा जप्त्वा ऋचः पठेत् ।

सभी तत्त्वों की शोधनप्रक्रिया में त्रिकोण, वृत्त, मण्डल (चतुष्कोण) बनाकर

पात्राधार यन्त्र की रचना करना चाहिए। तब उस यन्त्र पर मांसादि तत्त्वों का क्रमशः स्थापन करे, तत्पश्चात् यं बीज से उनके संशोधन, रं से दहन, वं से आप्लावन, की क्रियाएँ सम्पन्न कर धेनुमुद्रा से क्रमशः उनका अमृतीकरण करके अमृतीकृत तत्त्व के ऊपर हाथ रखकर सम्बन्धित ऋचा का पाठ करे जो तत्त्वसंकेत पूर्वक अर्थबोध सहित क्रमशः नीचे दी जा रही है।

मांसशोधन

प्रतद्विष्णुस्तवते वीर्येण मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठः।
यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेष्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा॥

इति मांसं शोधयेत्।

पर्वत पर स्थित, प्राणी-वध से जीनेवाले, भयङ्कर सिंह के समान, सर्व-व्यापी विष्णु साधारण वीर-कर्म से स्तुति को प्राप्त होते हैं, जिन विष्णु के महान् तीन पाद-प्रक्षेपवाले लोकों में सम्पूर्ण प्राणी निवास करते हैं। इस प्रकार मांस शोधन करें।

मीनशोधन

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
ऊर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्॥

इति मीनं शोधयेत्।

हम उस त्र्यम्बक शिव की पूजा करते हैं जो सुगन्धि एवं पुष्टि दोनों ही बढ़ाने वाले हैं। जैसे सुगन्धि और पुष्टि से युक्त उर्वारुक ककड़ी अपने मूल बन्धन से मुक्त हो जाती है ऐसे ही वे शिव मुझे मृत्यु से मुक्त करें, अमरता से नहीं। इस प्रकार मीन शोधन करे।

मुद्राशोधन

ॐ तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः दिवीव चक्षुराततम्।
तद्विप्रासो विपण्यवो जागृवांसः समिन्धते विष्णोर्यत् परमं पदम्॥

इति मुद्राः शोधयेत्।

जिस प्रकार साधारण मनुष्यों को सूर्य स्पष्ट रूप में दिखाई देता है, उसी प्रकार बुद्धिमान् मनुष्यों को श्रीविष्णु के श्रेष्ठ चरण सदैव दिखाई देते रहते हैं। जो बुद्धिमान् एवं भक्त मनुष्य अपने मन को नियन्त्रण में रखता और जागता हैं, वह विष्णु के श्रेष्ठ चरणों (परम पद) का दर्शन करता है।

कुण्डगोलशोधन

ॐ विष्णुर्योनिं कल्पयतु त्वष्टा रूपाणि पिंशतु।
आसिञ्चतु प्रजापतिर्धाता गर्भं ददातु ते॥

गर्भं धेहि सिनीवालि गर्भं धेहि सरस्वती।
गर्भं ते अश्विनौ देवा वाधत्तां पुष्करस्त्रजा॥

इति कुण्डगोलादि शोधयेत्।

विष्णु तुम्हारी योनि (उत्पत्ति स्थान) की कल्पना (योजना) करें। त्वष्टा तुम्हें रूप प्रदान करें। प्रजापति उसका अभिसिंचन करें। धाता उसमें गर्भाधान कराएँ। सिनीवाली और सरस्वती देवियाँ उस गर्भ को धारण करें (रक्षा करें)। कमल की माला धारण करने वाले अश्विनीकुमार तुम्हारे गर्भ की रक्षा करें। इस प्रकार कुण्डगोलशोधन सम्पन्न करें।

विशेष पूजनम्

'हुं' इत्यवगुण्ठ्य तालत्रयेण दिश: संशोध्य, तत्र देवीमावाह्य अवगुण्ठयामृतीकृत्य योनिमुद्रां प्रदर्श्य कुण्डलिन्य: प्रयोगेण निस्सृतममृतवृष्टिं योनिमुद्रोल्लसितकरेण तत्रानीय मूलान्ते—

तब 'हुं' इस मन्त्र से अवगुण्ठन कर तालत्रय से दिशाओं का संशोधन कर वहाँ देवी का आवाहन करे। तत्पश्चात् अवगुण्ठन से अमृतीकरण कर योनिमुद्रा का प्रदर्शन कर कुण्डलिनी के प्रयोग से निसृत अमृतवृष्टि को योनिमुद्रा से उल्लसित हाथों (योनिमुद्रा) द्वारा उसमें स्थापित कर मूलमन्त्र के उच्चारण के पश्चात्।

ब्रह्माण्डरससम्भूतमशेषकुलसम्भवम्।
आपूरितं महापात्रं पीयूषरसमावह॥

मन्त्रार्थ—सकलब्रह्माण्ड के रस से उत्पन्न सभी रसों से युक्त महापात्र (ब्रह्माण्डकटाह) में पूरित समस्त अमृततत्त्व प्रस्तुत श्रीपात्र में आ जायं।

इत्यभिमन्त्रय—ऐं अमृते अमृतोद्भवे अमृतेश्वरि अमृतवर्षिणि! अमृतमावह, ॐ जूं स: स्वाहा। इत्यभिमन्त्र्य।

उपर्युक्त मन्त्र से श्रीपात्र को अभिमन्त्रित कर उसे ऐं अमृतोद्भवे—ॐ जूंस: स्वाहा से पुन: अभिमन्त्रित करे। मन्त्रार्थ—हे अमृते, आप अमृत से उत्पन्न हैं। आप अमृत की स्वामिनी हैं तथा अमृत की वर्षा करने वाली हैं ऐसी आप इसमें अमृत का आवाहन करें—ॐ जूंस: स्वाहा।

तद्रूपेणैकरस्यं च दत्वार्घ्यं चित्स्वरूपिणि!।
भूत्वा परामृताकारं मयि चित्स्फुरणं कुरु॥

उस (परमशिव) से ऐकरस्य का अर्घ्य प्रदान कर, हे चित्तस्वरूपिणि! तुम परा और अमृतस्वरूपिणी होकर मुझमें चित्तस्फुरण करो।

इत्यभिमन्त्र्य, 'सौः नमः' इति सम्पूज्य, शङ्खमुद्रां प्रदर्श्य, षडङ्गेन सकलीकृत्य, मत्स्यमुद्रया पात्रमाच्छाद्य, पात्रं देवीरूपं भावयेत् ॥

उपर्युक्त मन्त्र से अभिमन्त्रण कर सौः नमः मन्त्र से पूजन कर, शङ्खमुद्रा का प्रदर्शन एवं षडङ्ग से सकलीकरण कर मत्स्यमुद्रा से पात्र का आच्छादन करे। तब पात्र की ही देवीरूप में भावना करे।

इति श्रीपात्रस्थापनविधिः।

ततो देव्याज्ञामादाय घटसमीपे गुरुपात्रं शक्तिपात्रं स्वपात्रं योगिनीपात्रं वीरपात्रं भोगपात्रं बलिपात्रं पाद्यपात्रं अर्घ्यपात्रं घृतदधिमधुसहितं मधुपर्कपात्रं आचमनीयपात्रं प्रोक्षणीपात्रं संस्थाप्य।

तब देवी की आज्ञा प्राप्त कर घट (श्रीपात्र) के समीप ही गुरुपात्र, शक्तिपात्र, स्वपात्र, योगिनी-पात्र, वीरपात्र, भोगपात्र, बलिपात्र, पाद्यपात्र, अर्घ्यपात्र, घीदही मधुयुक्त मधुपर्कपात्र, आचमनीयपात्र, प्रोक्षणीपात्रादि पात्रों की स्थापना करनी चाहिए।

ततश्चर्वणयुतकारणेन तत्त्वमुद्रया श्रीपात्राद् विन्दुं समुद्धृत्य स्वहृदि 'हसक्षमलवरयूं आनन्दभैरवं तर्पयामि नमः' इति त्रिः सन्तर्पयेत।

तत्पश्चात् चर्वणयुतकारणसहित तत्त्वमुद्रा से श्रीपात्रविन्दु को लेकर अपने हृदय में हसक्ष्मलवरयूं आनन्द भैरवंतर्पयामि नमः मन्त्र से आनन्दभैरव का तीन बार तर्पण करे।

सहक्ष्मलवरयीं सुरादेवीं तर्पयामि नमः इति त्रिः सन्तर्प्य, स्वशिरसि गुरुपादुकामन्त्रेण गुरुपात्रविन्दुभिः 'श्रीमच्छ्रीअमुकानन्दनाथश्रीपादुकां तर्पयामि नमः' इति त्रिः गुरुं सन्तर्प्य परमगुरुपरात्परगुरु आदीन् परमेष्ठिगुरूंस्तर्पयेत्।

इसी प्रकार सहक्ष्मलवरयीं सुरादेवीं तर्पयामि नमः इससे तीन बार सुरादेवी का तर्पण करे। तब अपना गुरुपादुकामन्त्र पढ़ता हुआ गुरुपात्र के विन्दु से श्री मच्छ्री अमुकानन्द नाथ श्री पादुकां तर्पयामि नमः कहकर गुरु, परमगुरु, परात्परगुरु, परमेष्ठीगुरु आदि का तर्पण करना चाहिए।

ततः श्रीपात्रविन्दुभिः स्वहृदि मूलं 'श्रीमच्छ्रीभुवनेश्वरीं भगवतीं सेश्वरां सपरिवारां सवाहनां समुद्रां तर्पयामि नमः' इति त्रिः सन्तर्प्य, प्रोक्षणीपात्रं श्रीपात्रविन्दुभिः सम्पूर्य, तेनैव 'मूलं आत्मतत्त्वात्मने नमः, मूलं विद्यातत्त्वात्मने नमः, मूलं शिवतत्त्वात्मने नमः, मूलं सर्वतत्त्वात्मने नमः' इति स्वात्मानं सम्प्रोक्ष्य पूजोपकरणानि सम्प्रोक्षयेत् ॥

इति कलशस्थापनविधिः ।

तब श्रीपात्र के विन्दुओं से मूलमन्त्र के साथ श्रीमच्छ्रीभुवनेश्वरी भगवती.....तर्पयामिनमः कहते हुए तीनबार आराध्या भुवनेश्वरी देवी का तर्पण करे। तदनन्तर प्रोक्षणीपात्र को श्रीपात्रविन्दुओं से भरकर उसी से मूलमन्त्रसहित आत्मतत्त्वात्मने नमः, विद्यातत्त्वात्मने नमः, शिवतत्त्वात्मने नमः, सर्वतत्त्वात्मने नमः कहता हुआ अपना एवं पूजा उपकरणों का, साधक प्रोक्षण करे।

इस प्रकार कलशस्थापना की विधि सम्पूर्ण हुई।

अथ श्रीभुवनेश्वरीदेवीं ध्यात्वा पीठोपरि पीठपूजां कुर्यात्। तत्रादौ स्ववामे गुरुमन्त्रेण 'गुरवे नमः', स्वदक्षे 'गं गणपतये नमः' इति गणेशं सम्पूज्य पीठपूजां कुर्याद्यथा।

श्री भुवनेश्वरी देवी का ध्यान करके पीठ पर पीठपूजा करनी चाहिए। इस क्रम में अपने वामभाग में गुरुमन्त्र या गुरुपादुकामन्त्र पढ़ता हुआ गुरवेनमः से गुरु का तथा दाहिनी ओर गं गणपतये नमः से गणेश का पूजन कर पीठपूजनका कार्य करना चाहिए।

ॐ मण्डूकाधाराय नमः, कालाग्निरुद्राय नमः, मूलप्रकृत्यै नमः, आधारशक्तये नमः, कूर्माय नमः, अनन्ताय नमः, पृथिव्यै नमः, सुधासमुद्राय नमः, मणिद्वीपाय नमः, चिन्तामणिगृहाय नमः, पारिजाताय नमः, तन्मूले रत्नवेदिकायै नमः, मणिपीठाय नमः, दिक्षु नानामुनिगणेभ्यो नमः, नानादेवेभ्यो नमः, धर्माय नमः, ज्ञानाय नमः, वैराग्याय नमः, ऐश्वर्याय नमः, अधर्माय नमः, अज्ञानाय नमः, अवैराग्याय नमः, अनैश्वर्याय नमः, शेषाय नमः, पद्माय नमः, प्रकृतिमयपत्रेभ्यो नमः, विकारमयकेसरेभ्यो नमः, पञ्चाशद्वर्णभूषितकर्णिकायै नमः, वैश्वानरमण्डलाय नमः, सूर्यमण्डलाय नमः, सोममण्डलाय नमः, सं सत्त्वायनमः, रं रजसे नमः, तं तमसे नमः, आं आत्मने नमः, पं परमात्मने नमः, ह्रीं ज्ञानात्मने नमः। अष्टपत्रेषु ॐ जयायै नमः, ॐ विजयायै नमः, ॐ अजितायै नमः, ॐ अपराजितायै नमः, ॐ नित्यायै नमः, ॐ विलासिन्यै नमः, ॐ दोग्ध्र्यै नमः, ॐ अघोरायै नमः, मध्ये ॐ मङ्गलायै नमः, ॐ अमित्यादिक्षान्तं ह्रीं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः इति पीठपूजां विधाय।

ॐ मण्डूकाधाराय नमः से सर्वशक्ति कमलासनाय नमः तक के मन्त्रों से निर्दिष्ट स्थानों पर पीठपूजा सम्पन्न करे।

तत्र श्रीचक्रं संस्थाप्य अथवा श्रीचक्रोपरि मूलं पठित्वा, तत्र देवीमूर्तिं परिकल्प्य पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा वं इति वामनासापुटेन स्वहृदयात् तेजोरूपां स्वेष्टदेवतां तत्रानीय।

तब उस पूजितपीठ पर श्रीचक्र की स्थापना कर या श्रीचक्र पर मूलमन्त्र पढ़कर वहीं देवी के मूर्ति की परिकल्पना कर, हाथ में पुष्पाञ्जलि लेकर वं बीज का स्मरण करते हुए बाएँ नासापुटमार्ग से साधक अपने हृदय से तेजरूपिणी अपनी इष्टदेवता को वहाँ ले आए।

ॐ देवेशि ! भक्तिसुलभे परिवारसमन्विते।
यावत् त्वां पूजयिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिराभव॥

इति पठित्वा तं कुसुमाञ्जलिं चक्रोपरि निःक्षिपेत्।

हे देवेशि ! आप भक्ति से सुलभ हैं। जब तक मैं आपकी पूजा करता हूँ, हे देवि ! ऐसी आप, तब तक के लिए अपने परिवार सहित यहाँ पधारें।

उपर्युक्त श्लोक पढ़ते हुए पुष्पाञ्जलि को चक्र पर छोड़े।

मूलं श्रीमच्छ्रीभगवति भुवनेश्वरि ! इहागच्छ इहागच्छ मूलं भगवति भुवनेश्वरि ! इह सन्तिष्ठ इह सन्तिष्ठ, मूलं भगवति भुवनेश्वरि ! इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि, मूलं भगवती भुवनेश्वरि ! इह सन्निरुद्धा भव, इह सन्निरुद्धा भव, मम सर्वोपचारसहितां पूजां गृह्ण गृह्ण स्वाहा।

इत्यावाहनादि मुद्राः प्रदर्श्य चक्रोपरि प्राणप्रतिष्ठां लेलिहानमुद्रया कुर्यात्।

तब मूलमन्त्रसहित श्रीमच्छ्रीभगवति भुवनेश्वरि ! इहागच्छ इहागच्छ मन्त्र के साथ आवाहनमुद्रा, श्रीभगवति भुवनेश्वरि ! इह सन्तिष्ठ इह सन्तिष्ठ के साथ स्थापन—मुद्रा, श्रीभगवति भुवनेश्वरि इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि से सन्निधानमुद्रा, भगवति भुवनेश्वरी इह सन्निरुद्धाभव इह सन्निरुद्धाभव, मम पूजां गृहण गृहण स्वाहा ऐसा कहता हुआ सन्निरोधमुद्रा का प्रदर्शन कर श्रीचक्र पर लेलिहानमुद्रा से भगवती भुवनेश्वरी की प्राण-प्रतिष्ठा का कार्य सम्पन्न करना चाहिए।

यथा—ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं हंसः सोऽहं श्रीभुवनेश्वरी-प्राणा इह प्राणाः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं हंसः सोऽहं श्रीभुवनेश्वरीजीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं हंसः सोऽहं श्रीभुवनेश्वरीसर्वेन्द्रियाणि इह स्थितानि। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं हंसः सोऽहं श्रीभुवनेश्वरीवाङ्मनस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रघ्राणप्राणाः इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा। इति प्राणप्रतीष्ठां विधाय छोटिकाभिर्दशदिग्बन्धनं कृत्वाऽगुण्ठ्यामृतिकृत्य शकलीकृत्य परमीकृत्य धेनुयोनिमुद्रौ प्रदर्श्य पाशांकुशवराभयमुद्राः प्रदर्श्य।

इसी क्रममें ॐ आं ह्रीं क्रों……तिष्ठन्तु स्वाहा तक मन्त्रों को पढ़ता हुआ प्राणप्रतिष्ठा का कार्य सम्पन्न करे। तब छोटिकाओं (चुटकियों) से दशों दिशाओं में

दिग्बन्धन करे तत्पश्चात् अवगुण्ठन एवं सकलीकरण मुद्रा से अमृतीकरण, परमीकरण कर, धेनु तथा योनि मुद्राओं का प्रदर्शन कर अन्त में पाश, अङ्कुश, वर एवं अभय मुद्राओं का प्रदर्शन करना चाहिए।

पुनः श्रीपात्रामृतेन सायुधांसवाहनांसपरिवारांसावरणांसेश्वरां श्रीमद्भुवनेश्वरी-भगवतीं तर्पयामि नमः' इति त्रिः सन्तर्प्य।

पुनः श्रीपात्र के अमृत से सायुधां.......तर्पयामि नमः मन्त्र के साथ भगवती भुवनेश्वरी का तीन बार तर्पण करे।

मूले एतदासनं श्रीमदीश्वरसहितायै श्रीमच्छ्रीभुवनेश्वर्यै भगवत्यै नमः भगवत्य-त्रासने उपविश्यताम् इत्यासने उपविष्टां भावयेत्।

मूलमन्त्रसहित एतदासने-उपविश्यताम् कह, पुष्पार्पणपूर्वक देवी की आसन पर विराजमानरूप में भावना करनी चाहिए।

मूलं एतत् पाद्यं श्रीमदीश्वरसहितौ श्रीमच्छ्रीभुवनेश्वरीभगवत्यै नमः इति पाद्यपात्रेण पादयोः पाद्यं दद्यात्।

मूलमन्त्रसहित एतद् पाद्यं.....भगवत्यै नमः पढ़ता हुआ पाद्यपात्र से भगवती-भुवनेश्वरी के चरणों में पाद्य समर्पित करे।

पुनः मूलमेतदर्घ्यं श्रीमदीश्वरसहितायै श्रीमच्छ्रीभुवनेश्वरीभगवत्यै स्वाहा' इत्यर्घ्यपात्रेण शिरसि अर्घ्यं दद्यात्।

पुनः मूलमन्त्रसहित एतदर्घ्यं.......स्वाहा कहता हुआ अर्घ्यपात्र से भगवती के मस्तक पर अर्घ्यप्रदान करे।

मूलं एतदाचमनीयं श्रीमदीश्वरसहितायै श्रीमच्छ्रीभुवनेश्वरीभगवत्यै स्वधा इत्याचमनीयपात्रेण मुखे आचमनीयं दद्यात्।

मूलमन्त्र सहित एतदाचमनीयं.......स्वधा कहकर आचमनीयपात्र से देवता के मुख में आचमनीय प्रदान करे।

मूलं एतन्मधुपर्कं श्रीमदीश्वरसहितायै श्रीमच्छ्रीभुवनेश्वरीभगवत्यै स्वाहा इति मधुपर्कपात्रेण मुखे मधुपर्कं दद्यात्।

मूलमन्त्र सहित एतन्मधुपर्कं.......स्वाहा पढ़ते हुए मधुपर्कपात्र से देवता के मुख में मधुपर्क प्रदान करे।

एतदाचमनीयं श्रीमदीश्वरसहितायै श्रीमच्छ्रीभुवनेश्वरीभगवत्यै स्वधा इत्याचमनीय पात्रेण मुखे आचमनीयं दद्यात्।

एतदाचमनीयं.......स्वधा इस मन्त्र से आचमनीयपात्र से देवता के मुख में पुनः आचमनीय प्रदान करे ।

ततः स्नानमण्डपं नीत्वा तत्र पीठोपरि संस्थाप्य तत्रासनादिभिः सम्पूज्य, ततो गङ्गादितीर्थोदकसम्मिश्रितक्षीरादिभिर्मूलं एतत् स्नानीयं श्रीमदीश्वरसहितायै श्रीमच्छ्रीभुवनेश्वरीभगवत्यै नमः इति सर्वाङ्गेषु स्नानीयं दद्यात् ।

तत्पश्चात् श्री चक्राधिष्ठित देवता को स्नानमण्डप में ले आकर, वहाँ पीठ पर भलीभाँति स्थापन कर वहीं आसन आदि से पूजन करे । तब गङ्गादि तीर्थों के जल मिले क्षीरादि से मूलमन्त्र सहित एतत्.......भगवत्यै नमः पढ़कर देवता के सर्वाङ्ग में स्नानीयद्रव्य अर्पण करे ।

इति सुस्नाप्य शुद्धदुकूलेनाङ्गं प्रोक्ष्य कालागरुधूपेन केशान् संशोष्यालङ्कार-मण्डपं नीत्वा, तत्र विचित्रपट्टवस्त्रकुंकुमकस्तूरीचन्दनसिन्दूरमुकुटकुण्डलहारत्रयादि-नूपुरमञ्जीरदर्पणादिनानाऽलङ्कारान् दत्वा पुनराचमनीयं दद्यात् ।

इस प्रकार से सुन्दर रीति से स्नान कराकर, शुद्धदुकूल से उनके अङ्ग का प्रोक्षण कर, कालागरु के धूप से उनके केशों को संशोधित करे। तब देवता को अलङ्कारमण्डप में ले आए। वहाँ उन्हें रेशमीवस्त्र, कुङ्कुम, कस्तूरी, चन्दन, सिन्दूर, मुकुट, कुण्डल, हारत्रय, नूपुर, मञ्जीर, दर्पण आदि अनेक प्रकार के अलङ्कार समर्पितकर पुनः आचमनीय प्रदान करे ।

ततः पूजामण्डपं समानीय, तत्र पुनः पाद्यादिमधुपर्कान्तं सम्पूज्य मूलं मध्यमाऽनामांगुष्ठैः श्रीमदीश्वरसहितायै श्रीमद्भुवनेश्वरी भगवत्यै एष गन्धो नमः इति तिलकं कुर्यात् ।

तब देवता को पूजामण्डप में भली-भाँति ले आकर, वहाँ पुनः पाद्य से मधुपर्क पर्यन्त उपचारों से ३ पूजन कर मूलमन्त्र और मध्यमा, अनामिका और अंगुष्ठा के योग से श्री मदीश्वर.......गन्धो नमः कहते हुए उन्हें तिलक लगाए ।

ततो अंगुष्ठतर्जनीभ्यां मूलं श्रीमदीश्वरसहितायै श्रीमद्भुवनेश्वरीभगवत्यै एतान्यक्षतपुष्पाणिवौषट् इति पुष्पाक्षतैः सम्पूज्य ।

तब अंगुष्ठा-तर्जनी के योग से मूलमन्त्रसहित श्रीमदीश्वर सहितायै.......वौषट् इन मन्त्रों को पढ़ता हुआ पुष्पाक्षत से देवी का पूजन करना चाहिए ।

ततो धूपपात्रं अस्त्राय फट् इति सामान्यार्घ्योदकेन सम्प्रोक्ष्य, पुरतः संस्थापयित्वा वामतर्जन्या संस्पृशन् श्रीपात्रामृतेन धूपं निवेदयामीति निवेद्य ।

तब धूपपात्र का अस्त्राय फट् कहते हुए सामान्य अर्घोदक से प्रोक्षण करके उसे

सम्मुख स्थापित करना चाहिए। तत्पश्चात् बाएं हाथ की तर्जनी अंगुली से उसका स्पर्श करते हुए श्री पात्रामृतेनधूपं निवेदयामि ऐसा कहते हुए धूप निवेदित करे।

ॐ जगद्ध्वनिमये मन्त्रमातः स्वाहेति घण्टां सम्पूज्य वामेन पाणिना तां वादयन् मध्यमाऽनामांगुष्ठैर्धूपं कृत्वा ऐं ह्ल्लेखायै विद्महे ह्रीं भुवनायै धीमहि श्रीं तन्नः शक्तिः प्रचोदयात् इति गायत्रीं मूलमन्त्रं च पठन्।

वनस्पतिरसोत्पन्नो गन्धाढ्यो गन्धसंयुतः।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्॥

इति त्रिधोत्तोल्य देवीं धूपयेत्।

पुनः ॐ जगद्ध्वनि मये मन्त्रमातः स्वाहा ऐसा कहकर घण्टा का पूजन करे। तब बाएँ हाथ से उसे बजाते हुए मध्यमा, अनामिका एवं अंगूठे के योग से धूपग्रहण कर ऐं ह्ल्लेखायै.....शक्तिः प्रचोदयात् इस भुवनेश्वरीगायत्री और मूलमन्त्रसहित वनस्पति.......प्रति गृह्यताम् इस मन्त्र को पढ़ते हुए तीन बार ऊपर की ओर घुमाते हुए देवता को धूप अर्पित करना चाहिए।

ततो दीपं सम्मुखे संस्थाप्य पूर्ववत् प्रोक्षणेन पूजनं कृत्वा, वाममध्यमया दीपपात्रं संस्पृशन् दीपं निवेदयामीति श्रीपात्रामृतेन निवेद्य पूर्ववत् घण्टां वादयन् मध्यमाऽनामामध्ये दीपमंगुष्ठेन धृत्वा दर्शयेत्। पूर्ववत् गायत्रीं मूलं च पठन्।

सुप्रकाशो महादीपः सर्वतस्तिमिरापहः।
स बाह्याभ्यन्तरं ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम्॥

इति दीपं दद्यात्।

तब दीपक (दीपपात्र) को देवी के सम्मुख स्थापित कर पहले की भाँति अर्थात् धूपपात्र की भाँति उसका प्रोक्षण और पूजन करके बाएँ हाथ की मध्यमा एवं अनामिका से दीपपात्र को स्पर्श करता हुआ दीपं निवेदयामि ऐसा कहते हुए श्रीपात्र के अमृत-द्रव से निवेदित कर पहले ही की भाँति घण्टा बजाते हुए मध्यमा एवं अनामिका अंगुलियों के मध्य में दीपक को अंगुठे से पकड़कर, देवता को प्रदर्शित करना चाहिए। ऐसा करते समय धूप प्रकरण की ही भाँति भुवनागायत्री और मूलमन्त्र के वाचन सहित सुप्रकाशो......:प्रतिगृह्यताम् इस मन्त्र को पढ़ते हुए दीपक दिखाना चाहिए।

ततः स्वर्णादिपात्रे कुंकुमेन वसुपत्रं चन्द्ररूपं च कृत्वा मध्ये दीपमेकमष्टपत्रेषु दीपाष्टकं संस्थाप्य मूलमन्त्रेण प्रज्वाल्य 'श्रीं सौः ग्लूं म्लूं स्लूं प्लूं न्लूं सौः श्रीं रत्नेश्वर्यै नमः' इत्यभ्यर्च्य मूलेन चाभ्यर्च्य स्थालकं मस्तकान्तमुद्धृत्य नववारं मूलं च पठित्वा गायत्रीं च पठित्वा।

समस्तचक्रचक्रेशियुते देवि! नवात्मिके !।
आरार्तिकमिदं देवि! गृहाणं मम सिद्धये ॥

इति चक्रमुद्रया नीराजयेत्।

तब दीपप्रदर्शनोपरान्त स्वर्ण आदि धातु के बने पात्र में मध्य में, वृत्त और उसके बाहर अष्टदलकमल बनाकर, उसके मध्य में एक तथा आठ पत्रों में आठ दीपक स्थापित करें। तत्पश्चात् मूलमन्त्र पढ़ता हुआ उन्हें प्रज्वलित करे। तदनन्तर श्रीं सौः ग्लूं म्लूं स्लूं प्लूं न्लूं सौः श्रीः रत्नेश्वर्यै नमः इस मन्त्र और मूल मंत्र से पूजन कर आरती की थाली को मस्तक तक ले जाकर मूलमन्त्र, भुवनागायत्री पढ़कर समस्त चक्र..... सिद्धये इस मन्त्र को पढ़कर चक्रमुद्रा से नव बार नीराजन सम्पन्न करना चाहिए।

ततो नानानैवेद्यं स्वर्णादिपात्रे निक्षिप्य नमः इत्यभ्युक्ष्य हुं इत्यवगुण्ठ्य धेनुमुद्रयाऽमृतीकृत्य मूलं सप्तधा जप्त्वा, वामांगुष्ठेन नैवेद्यपात्रं स्पृशन् मूलान्ते।

हेमपात्रगतं दिव्यं परमान्नं सुसंस्कृतम्।
पञ्चधाषड्रसोपेतं गृहाण परमेश्वरि ! ॥
स्फारत्सौरभनिर्भरं रुचिकरं शाल्योदनं निर्मलम्।
युक्तं हिंगुमरिचजीरसुरभिद्रव्यान्वितैर्व्यञ्जनैः ॥
पक्वान्नेन सपायसेन मधुना दध्याज्यसम्मिश्रितम्।
नैवेद्यं सुरसुन्दरीविरचितं श्रीसुन्दरि! त्वं प्रिये ! ॥

ह्रां हृदयाय, ह्रीं शिरसे, ह्रूं शिखायै, ह्रैं कवचाय, ह्रौं नेत्रत्रयाय, हः अस्त्राय, ॐ ह्रीं हल्लेखायै, ऐं गगनायै, उं रक्तायै, इं करालिकायै, ओं महोच्छुष्मायै, गं गङ्गायै, यं यमुनायै, सं सरस्वत्यै, गायत्रीसहितब्रह्मणे, सावित्रीसहितविष्णवे, पार्वतीसहितरुद्राय, लक्ष्मीसहितकुबेराय, रतिसहितमदनाय, पुष्टिसहितविघ्नराजाय, शङ्खनिधये, पद्मनिधये, अनङ्गकुसुमायै, अनङ्गमदनायै, अनङ्गमदनातुरायै, अनङ्गमेखलायै, भुवनपालायै, गगनवेगायै, शशिरेखायै, कराल्यै, विकराल्यै, उमायै, सरस्वत्यै, श्रियै, दुर्गायै, उषायै, लक्ष्म्यै, सत्यायै, श्रुत्यै, स्मृत्यै, धृत्यै, श्रद्धायै, मेधायै, मत्यै, रत्यै, अनङ्गरूपायै, अनङ्गमदनायै, अनङ्गमेखलायै, ब्राह्मी आदि अष्टमातृकाभ्यः, इन्द्राय, अग्नये, यमाय, नैर्ऋतये, वरुणाय, वायवे, कुबेराय, ईशानाय, ब्रह्मणे, अनन्ताय, वज्राय, शक्तये, दण्डाय, खड्गाय, पाशाय, ध्वजाय, गदायै, त्रिशूलाय, पद्माय, चक्राय, पाशाय, अंकुशाय, वराय, अभयाय, वटुकाय, योगिनीभ्यः, क्षेत्रपालाय, गणेशाय, मूलं श्रीमदीश्वरसहितायै सावरणायै सवाहनायै सायुधायै सपरिकरायै, श्रीमच्छ्रीभुवनेश्वरीभगवत्यै नैवेद्यं निवेदयामि इति दक्षानामाङ्गुष्ठाभ्यामुत्सृजेत्।

तब स्वर्णादिपात्रों में अनेक प्रकार के नैवेद्यों को रख कर सर्वप्रथम नमः से उनका अभ्युक्षण, हुँ से अवगुण्ठन करे। तत्पश्चात् धेनुमुद्रा से उसका अमृतीकरण करके सात बार मूलमन्त्र का जप करे। तब बाएँ हाथ के अंगूठे से नैवेद्यपात्र का स्पर्श करते हुए मूलमन्त्र के अन्त में हेमपात्र गतं से निवेदयामि तक के मन्त्रों को पढ़ता हुआ, देवता को दाहिने हाथ की अनामिका और अंगूठे से नैवेद्य निवेदन करे।

ततः मूलं एतदाचमनीयं श्रीमदीश्वरसहितायै श्रीमच्छ्रीभुवनेश्वर्यै स्वधा इति दत्वा ग्रासमुद्राः प्रदर्शयेत्। यथा—

तब मूलमन्त्र और एतदाचमनीयं श्रीमदीश्वरसहितायै श्रीमच्छ्रीभुवनेश्वर्यैस्वधा इससे देवता को आचमनीय देकर ग्रासमुद्राओं का प्रदर्शन करना चाहिए। जैसे—

ॐ प्राणाय स्वाहा — दक्षांगुष्ठकनिष्ठाऽनामाभिः।

ॐ अपानाय स्वाहा — दक्षांगुष्ठतर्जनीमध्यमाभिः।

ॐ समानाय स्वाहा — दक्षांगुष्ठमध्यमाऽनामाभिः।

ॐ उदानाय स्वाहा — दक्षांगुष्ठतर्जनीमध्यमाऽनामभिः।

ॐ व्यानाय स्वाहा — सर्वांगुलीभिः।

इति प्रदर्श्य पुनराचमनीयं दत्वा।

मन्त्रपूर्वक दाहिने हाथ के अंगूठे, कनिष्ठा और अनामिका के योग से, ॐ प्राणाय स्वाहा; अंगूठा, तर्जनी, मध्यम से ॐ अपानाय स्वाहा; अंगूठे मध्यमा और अनामिका के योग से ॐ समानाय स्वाहा; अंगूठे, तर्जनी, मध्यमा और अनामिका के योग से ॐ उदानाय स्वाहा, सभी अंगुलियों के योग से ॐ व्यानाय स्वाहा आदि। इन ग्रासमुद्राओं का प्रदर्शन कर देवता को पुनः आचमनीय अर्पित करना चाहिए।

मूलान्ते श्रीमदीश्वरसहितायै श्रीमच्छ्रीभुवनेश्वरीभगवत्यै कर्पूरादिशुक्लं ताम्बूलं निवेदयामि नमः इति दद्यात्।

मूलमन्त्र के पश्चात् श्रीमदीश्वरसहितायै श्रीमच्छ्रीभुवनेश्वरी भगवत्यै कर्पूरादिशुक्लं ताम्बूलं निवेदयामि नमः कहकर ताम्बूल समर्पित करे।

सर्वेषामर्घ्यपात्रजलेनोत्सर्गः कार्यः।

ताम्बूलादि सभी का अर्घ्यपात्र के जल से उत्सर्जन करना चाहिए।

ततस्तत्त्वमुद्रया श्रीपात्रामृतेन मूलं श्रीमदीश्वरसहितां सायुधां सपरिकरां सवाहनां सावरणां श्रीमच्छ्रीभुवनेश्वरीं भगवतीं तर्पयामि नमः इति त्रिः सन्तर्प्य पूर्वोक्तमुद्राः प्रदर्श्य।

तत्पश्चात् तत्त्वमुद्रा से श्रीपात्र के अमृत से मूलमन्त्र श्रीमदीश्वर.......तर्पयामि नमः मन्त्र से तीन बार तर्पण कर पूर्वोक्त ग्रासमुद्राओं का पुनः प्रदर्शन करना चाहिए। तथा

योनिं हृदि, क्षोभिणीं मुखे, द्राविणीं भ्रूमध्ये, आकर्षिणीं ललाटे, वशिनीं ब्रह्मरन्ध्रे, आह्लादिनीं पञ्चमुद्रामयीं प्रदर्श्य।

तब योनिमुद्रा से हृदय में, क्षोभिणी से मुख में, द्राविणी से भ्रूमध्य में, आकर्षिणी से ललाट में, वशिनी से ब्रह्मरन्ध्र में और इन पञ्चमुद्रामयी आह्लादिनी का भी देवता को प्रदर्शन करे।

कृताञ्जलिः श्रीमच्छ्रीभुवनेश्वरि भगवति ! आवरणं ते पूजयामि नमः इत्याज्ञां गृहीत्वाऽवरणपूजामारभेत्। यथा—

अञ्जलि बनाकर श्रीमच्छ्रीभुवनेश्वरि नमः। ऐसा कहकर देवी से आवरणपूजा की आज्ञा ले, आवरणपूजन प्रारम्भ करे। जैसे—

प्रथमावरण विन्दुचक्रपूजा

तत्रादौ देव्याः पृष्ठे त्रिकोणान्तराले षट्कोणान्तराले रेखात्रयं विभाव्य गुरुपंक्तित्रयं पूजयेत्। यथा—

इस क्रम में सर्वप्रथम देवी के पृष्ठभाग में षड्कोणान्तर्गत त्रिकोण के भीतर तीन रेखाओं की भावना करते हुए उनमें गुरुपंक्तित्रय का पूजन करना चाहिए।

ऐं दिव्यौघपराख्यगुरुपंक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः इति प्रथमरेखायां सम्पूज्य गुरुपात्रबिन्दुभिस्तर्पयेत्।

ऐं दिव्यौध.......तर्पयामि नमः ऐसा कहकर प्रथमरेखा में पूजन कर गुरुपात्र के बिन्दु से दिव्यौघगुरुओं का तर्पण करे।

ऐं सिद्धौघपरापराख्यगुरुपंक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः-शक्ति ऋषिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः-इति द्वितीयरेखायाम्।

ऐं सिद्धौघ.......शक्ति ऋषि श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः कहते हुए द्वितीयपंक्ति में सिद्धौघगुरुओं का पूजन-तर्पण करना चाहिए।

ततस्तृतीयरेखायां-ऐं मानवौघपराख्यगुरुपंक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

तब तृतीयरेखा में ऐं मानवौघा.......तर्पयामि नमः कहकर मानवौघगुरुओं का पूजन तर्पण करे।

अत्रैव गुरुपरमगुरुपरात्परगुरुपरमेष्ठिगुरुपरमाचार्यादीन् सम्पूजयेद् गुरु-पात्राम्बुभिस्तर्पयेत्।

यहीं गुरु, परमगुरु, परात्परगुरु, परमेष्ठिगुरु, परमाचार्यादि का पूजन कर गुरु-पात्र के तीर्थ से उनका तर्पण करे।

इति त्रिः सकृद् वा सम्पूज्य, मध्ये विन्दौ श्रीदेवीं पूजयेत्। यथा—

इस प्रकार तीन या एक ही बार (यन्त्र) मण्डल के मध्यबिन्दु में श्रीदेवी का पूजन करे।

तत्रादौ कुसुमाञ्जलिं गृहीत्वा मूलं सर्वानन्दमयभैरवचक्राय नमः इति कुसुमाञ्जलिं दत्वा पूजयेत्।

तब सर्वप्रथम पुष्पाञ्जलि ले, मूलमन्त्रसहित सर्वानन्दमयभैरवचक्राय नमः कहकर पुष्पाञ्जलि अर्पित कर पूजन करे।

मूलं श्रीमदीश्वरीं भैरवाङ्कोपविष्टां श्रीहृल्लेखापररूपिणीं श्रीमद्भुवनेश्वरीभगवतीं पूजयामि नमः इति सम्पूज्याष्टोत्तरशतवारं सन्तर्प्य च कुसुमाञ्जलिं गृहीत्वा।

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले!।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम्॥

इति कुसुमाञ्जलिं दत्वा योनिमुद्रया प्रणमेत्।

मूलमन्त्र सहित श्रीमदीश्वरी...पूजयामि नमः से देवी का पूजन कर १०८ बार भलीभाँति तर्पण कर पुष्पाञ्जलि ले अभीष्ट सिद्धि.......प्रथमावरणार्चनम् कहता हुआ पुष्पाञ्जलि प्रदान कर, योनिमुद्रा से प्रणाम करे। इति विन्दुचक्रपूजा प्रथमावरणार्चनम्। ऐसा करने से बिन्दुचक्रपूजा नामक प्रथमावरणपूजा सम्पन्न होती है।

द्वितीयावरण-त्रिकोणपूजा

अथ त्रिकोणपूजामूलं सर्वसिद्धिप्रदायचक्राय नमः इत्यादौ कुसुमाञ्जलिना सम्पूज्य पूजयेत्।

मूलमन्त्रसहित सर्वसिद्धिप्रदायचक्राय नमः इससे सर्वप्रथम पुष्पाञ्जलि दे सर्वसिद्धिचक्र का पूजन करे।

यथा—अग्रे ऐं गगनाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। दक्षिणे उं रक्ता-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। उत्तरे इं करालिकाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। पूर्वे श्रीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। पश्चिमे अं महोच्छुष्माश्रीपादुकां

पूजयामि तर्पयामि नमः । इति सम्पूज्य सन्तर्प्य गगनाग्रे मूलेन देवीं सम्पूज्य सन्तर्प्य कुसुमाञ्जलिं गृहीत्वा—

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले ! ।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं द्वितीयावरणार्चनम् ॥

इति कुसुमाञ्जलिं दत्वा योनिमुद्रया प्रणमेत् ।

जैसे अग्रे गगना.......तर्पयामि नमः तक मन्त्रों को क्रमशः पढ़ता हुआ साधक सम्बद्ध दिशाओं में, सम्बद्ध देवियों का भली-भाँति पूजन करे तब अग्रभाग में गगना के सम्मुख पुष्पाञ्जलि ले अभीष्टसिद्धि.......द्वितीयावरणार्चनम्। ऐसा पढ़ता हुआ पुष्पाञ्जली दे एवं योनिमुद्रा से प्रणाम करे।

इति त्रिकोणे द्वितीयावरणार्चनम् ।

इस प्रकार द्वितीयावरण की पूजा सम्पन्न हुई ।

तृतीयावरण षट्कोणपूजा

अथ षट्कोणपूजा-मूलं सर्वरोगहरचक्राय नमः इति प्रथमतः कुसुमाञ्जलिं दत्वा सम्पूजयेत् ।

षट्कोणपूजा का वर्णन करते हैं—

सर्वप्रथम पुष्पाञ्जलि लेकर मूलमन्त्रसहित सर्वरोगहरचक्राय नमः मन्त्र से पुष्पाञ्जलि प्रदान कर पूजन करे ।

यथा—पूर्वे ॐ गायत्रीसहितब्रह्माश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । नैर्ऋत्ये ऐं सावित्रीसहितायै विष्णुश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । वायव्ये ॐ सरस्वतीसहितरुद्रश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । अग्निकोणे ऐं श्रीसहितधनपतिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । पश्चिमे ॐ रतिसहितस्मरश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ऐशान्यां ॐ पुष्टिसहितगणपतिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

ॐ गायत्री सहित....तर्पयामि नमः । तक के मन्त्रों को पढ़ता हुआ । षट्कोण की पूर्व, नैर्ऋत्य, वायव्य, अग्नि, पश्चिम एवं ईशानकोण में क्रमशः गायत्री-ब्रह्मा, सावित्री-विष्णु, सरस्वती-रुद्र, श्री-धनपति, रति-स्मर, पुष्टि-गणपति आदि षट्युगलों का पूजन-तर्पण करे ।

षट्कोणस्योभयपार्श्वयोः ॐ शङ्खनिधिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । पद्मनिधि श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

तब षट्कोण के दाएं तथा बाएं पार्श्वभाग में शंखनिधि एवं पद्मनिधि का क्रमशः पूजन, तर्पण करे ।

अत्रैव केसरेषु-अग्नौ ह्रां हृदयश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । नैर्ऋत्ये ह्रीं शिरःश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । वायव्ये ह्रूं शिखाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ऐशान्यां ह्रैं कवचश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । मध्ये ह्रौं नेत्रत्रयाय श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । दिक्षु ह्रः अस्त्रश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

इति सम्पूज्य सन्तर्प्य गायत्र्यग्रे देवीं सम्पूज्य सन्तर्प्य कुसुमाञ्जलिं गृहीत्वा—

अभिष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले ! ।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं तृतीयावरणार्चनम् ॥
इति कुसुमाञ्जलिं दत्वा योनिमुद्रया प्रणमेत् ।

इति षट्कोण तृतीयावरणार्चनम् ।

यहीं केसरों में अग्नि, नैर्ऋत्य, वायव्य, ईशान आदि उपदिशाओं तथा मध्य में क्रमशः हृदय, शिर, शिखा, कवच, नेत्र आदि अंगदेवताओं का तथा पूर्वादि दिशाओं में अस्त्रदेवताओं पूजन तर्पण करे । इस प्रकार से पूजन एवं तर्पण की प्रक्रिया सम्पन्न कर साधक, गायत्री के आगे देवी का पूजन-तर्पण कर हाथ में पुष्पाञ्जलि ले ।

अभीष्ट सिद्धि.......तृतीयावरणार्चनम् । कह पुष्पाञ्जलि अर्पण कर योनिमुद्रा से प्रणाम करे। इस प्रकार तृतीयावरणार्चन पूर्ण हुआ ।

चतुर्थावरण अष्टदलपूजा

अथाष्टदलपूजा । मूल सर्वसंक्षोभणचक्राय नमः इति प्रथमतः कुसुमाञ्जलिं दत्वा पूजयेत् ।

सर्वप्रथम मूलमन्त्रसहित सर्वसंक्षोभणचक्राय नमः से पुष्पाञ्जलि प्रदान कर सर्वसंक्षोभणचक्र का पूजन करे ।

यथा पूर्वादितः ॐ अनङ्गकुसुमाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॐ अनङ्गकुसुमातुराश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॐ अनङ्गमदनाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॐ अनङ्गमदनातुराश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॐ भुवनपालाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॐ गगनवेगाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॐ शशिरेखाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॐ गगनरेखाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

इति सम्पूज्य सन्तर्प्य अनङ्गकुसुमाग्रे मूलेन देवीं सम्पूज्य सन्तर्प्य कुसुमाञ्जलिं गृहीत्वा—

अभिष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले ! ।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं चतुर्थावरणार्चनम् ॥

इति कुसुमाञ्जलिं दत्वा योनिमुद्रयाप्रणमेत् ।

तब पूर्व से प्रारम्भ कर आठो दिशाओं के दल में अनंगपदयुता कुसुमा, कुसुमातुरा, मदना, मदनतुरा तथा भुवनपाला, गगनवेगा, शशिरेखा, गगनरेखा देवियों का सम्बन्धित मन्त्रों को पढ़ता हुआ पूजन-तर्पण करें। उपर्युक्त रीति से पूजन-तर्पण सम्पन्न कर, अनङ्गकुसुमा देवी के सम्मुख देवी का पूजन-तर्पण सम्पूर्ण कर पुष्पाञ्जलि लेकर अभीष्टसिद्धि.......चतुर्थावरणार्चनम् से पुष्पाञ्जलि प्रदान कर योनिमुद्रा से प्रणाम करे। इति अष्टदले चतुर्थावरणार्चनम् । इस प्रकार चतुर्थावरण की पूजा सम्पन्न होती है ।

पञ्चमावरण षोडशदलपूजा

अथ षोडशदलपूजा—'मूलं सर्वाशापूरकचक्राय नमः' इति प्रथमतः कुसुमाञ्जलिना सम्पूज्य पूजयेत् । यथा—

मूलमन्त्रसहित सर्वाशापूरकचक्राय नमः इस मन्त्र से सर्वप्रथम पुष्पाञ्जलि से षोडशदलात्मक सर्वाशापूरकचक्र का पूजन करे ।

ॐ करालीश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॐ विकरालीश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॐ उमाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॐ सरस्वतीश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॐ दुर्गाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॐ उषाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॐ लक्ष्मीश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॐ श्रुतिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॐ स्मृतिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॐ धृतिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॐ श्रद्धाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॐ मेधाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॐ मतिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॐ कान्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॐ आर्याश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

ॐ कराली......नमः । पर्यन्त सोलह मन्त्रों से सोलह देवियों का सर्वाशापूरक चक्र के षोडशदलों में पूजन करे ।

तद्बहिर्वृत्तमध्ये दलसन्धिषु—

आं ब्राह्मीश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ईं माहेश्वरीश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ऊं कौमारीश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॠं वैष्णवीश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ॡं वाराहीश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः । ऐं

इन्द्राणीश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। औं चामुण्डाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। अः महालक्ष्मीश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

तब उसी के बाहरीवृत्त की दलसन्धियों में ब्राह्मी आदि अष्टमातृकाओं का आं ब्राह्मी.....तर्पयामि नमः तक के आठमन्त्रों से पूजन एवं तर्पण करे।

तद्बहिः पूर्वादितः—

ॐ अनङ्गरूपाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। ॐ अनङ्गमदनाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। ॐ अनङ्गमदनातुराश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ भुवनवेगाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। ॐ भुवनपालाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। ॐ सर्वशिशिराश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। ॐ अनङ्गवेदनाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। ॐ अनङ्गमेखलाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

उसके बाहर पूर्व से प्रारम्भ कर ॐ अनङ्गरूपा श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः से ॐ अनङ्गमेखला श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः पर्यन्त आठमन्त्रों से सम्बन्धित आठदेवियों का पूजन, तर्पण करे।

इति सम्पूज्य सन्तर्प्य, कराल्यग्रे मूलेन देवीं सम्पूज्य सन्तर्प्य कुसुमाञ्जलिं गृहीत्वा—

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं पञ्चमावरणार्चनम्॥

इति कुसुमाञ्जलिं दत्वा योनिमुद्रया प्रणयेत्।

उपर्युक्त रीति से भली-भाँति पूजन-तर्पण कर कराली के आगे मूलमन्त्र से देवी की पूजा और तर्पण कर पुष्पाञ्जलि लेकर—

अभीष्ट.......पञ्चमावरणार्चनम्। इति षोडशदले पञ्चमावरणार्चनम्। कहते हुए पुष्पाञ्जलि लेकर योनिमुद्रा से प्रणाम करे। इस प्रकार पञ्चमावरणपूजन सम्पन्न हुआ।

षष्ठावरण चतुर्द्वारपूजा

अथ चतुर्द्वारपूजा—मूलं त्रैलोक्यमोहनचक्राय नमः इति कुसुमाञ्जलिना सम्पूज्य।

षष्ठावरण की चतुर्द्वारपूजा कहते हैं। इस क्रम में मूलमन्त्र सहित त्रैलोक्य चक्राय नमः कहकर चतुर्द्वारों से युक्त त्रैलोक्यमोहनचक्र का पूजन करे।

पूर्वादित: पूजयेत् । यथा—ॐ लं इन्द्रश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: । ॐ रं अग्निश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: । ॐ यं यमश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: । ॐ क्षं निर्ऋतिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: । ॐ वं वरुणश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: । ॐ वं वायुश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: । ॐ सं सोमश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: । ॐ हं ईशानश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: । ईशानपूर्वयोर्मध्ये ॐ आं ब्रह्मश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: । निर्ऋति-वरुणोर्यमध्ये—ॐ ह्रीं अनन्तश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: । इति सम्पूज्य सन्तर्प्य ।

तब पूर्व से प्रारम्भ कर भूपुर की दशों दिशाओं में ॐ लं इन्द्र श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: आदि कहते हुए दशो दिग्पालों का पूजन करे ।

तद्बहिर्वज्रादीन् पूजयेत् । यथा—ॐ वज्रश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: । ॐ शक्तिश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: । ॐ दण्डश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: । ॐ खड्गश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: । ॐ पाशश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: । ॐ ध्वजश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: । ॐ गदाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: । ॐ त्रिशूलश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: । ॐ पद्मश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: । ॐ चक्रश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: । इति सम्पूज्य सन्तर्प्य ।

तब उस भूपुर के बाहर उनके वज्रादि आयुधों का ॐ वज्र श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नम: आदि मन्त्रोच्चारपूर्वक पूजन एवं तर्पण करे ।

वरुणाग्रे देवीं मूलेन सम्पूज्य, सन्तर्प्य, कुसुमाञ्जलिं गृहीत्वा—

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले ! ।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं षष्ठावरणार्चनम् ॥

इति कुसुमाञ्जलिं दत्वा योनिमुद्रया प्रणमेत् ।

इति चतुर्द्वार षष्ठावरणार्चनम्

तत्पश्चात् वरुण के आगे देवी का मूलमन्त्र से पूजन एवं तर्पण कर हाथ में पुष्पाञ्जलि लेकर साधक अभीष्ट सिद्धिं.......षष्ठावरणार्चनम्। मन्त्र से पुष्पाञ्जलि अर्पण कर, योनिमुद्रा से उन्हें प्रणाम करे इस प्रकार षष्ठावरण की पूजा सम्पन्न होती है।

इत्थं पुनश्चतुर्द्वारमारभ्य विन्द्वन्तं सम्पूजयेत् ।

इसी प्रकार पुन: चतुर्द्वार (भूपुर) से आरम्भ कर विन्दुपर्यन्त छ: आवरणों का पूजन करना चाहिए ।

ततः पुनर्विन्दौ मूलश्रीमदीश्वरभैरवाङ्कोपविष्टां सवाहनां सपरिकरां सावरणां श्रीमद्भुवनेश्वरीभगवतीं पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः इति पाद्यादिभिः सम्पूज्य सन्तर्पयेत्।

तब पुनः विन्दु पर श्रीमदीश्वराङ्कोपविष्टा.......तर्पयामि नमः मन्त्र से पाद्यादि पूर्वोक्त उपचारों से देवी का भली-भाँति पूजन एवं तर्पण करना चाहिए।

ततो देवीवामहस्तोर्ध्वे—ॐ पां पाशश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। ॐ अं अंकुशश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। वामहस्ताधः—ॐ वं वरश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। दक्षहस्ताधः—ॐ अं अभयश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। इति सम्पूज्य सन्तर्पयेत्।

तब सम्बन्धितमन्त्रों से देवी के ऊपरी बाएँ हाथ में पाश, दाहिने हाथ में अंकुश, निचले बाएं हाथ में वर तथा दाहिने हाथ में अभयमुद्रा के रूप में देवी के आयुधों का पूजन-तर्पण करना चाहिए।

ततः पुनश्चतुरस्रे, पश्चिमे-वां बटुकश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। उत्तरे—यां योगिनीश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। पूर्वे—क्षं क्षेत्रपालश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। दक्षे—गं गणेशश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। इति सम्पूज्य सन्तर्पयेत्।

तब पुनः चतुरस्र के पश्चिम से प्रारम्भ कर सम्बन्धितदिशाओं में सम्बन्धितमन्त्रों से सम्बद्धदेवताओं का पूजन, तर्पण करना चाहिए।

पूनर्विन्दौ पूर्ववन्मूलदेवीं सम्पूज्य सन्तर्प्य पुनः मुद्राः प्रदर्श्य योनिमुद्रया प्रणम्य, पुनर्मूलं पठन् पुष्पाञ्जलित्रयेण च सम्पूज्य नित्यहोममारभेत्। यथा—

पुनः विन्दुचक्र पर पहले की भाँति मूलदेवी, इष्टदेवी का पूजन और तर्पण कर मुद्राप्रदर्शन सहित उन्हें योनिमुद्रा से प्रणाम करे। पुनः मूलमन्त्र पढ़ते हुए तीन पुष्पाञ्जलियाँ दे भलीभाँति पूजन सम्पन्न कर, नित्य होम सम्पन्न करे।

नित्यहोमविधिः

तत्र कुण्डं त्रिकोणं चतुरस्रं वा विधाय ॐ क्रियाशक्त्यात्मने कुण्डाय नमः' इति कुण्डे सम्पूज्य तत्राग्निमानीय स्वचैतन्यानलं तस्मिन् संयोज्य रं अग्नये नमः' इति सम्पूज्य, नैर्ऋते पात्रं सजलं, पुष्पत्रितयसहितं मूलेन मन्त्रितं संस्थाप्य—'अस्त्राय फट्' इति सामान्याघर्यवत् सम्पूज्य—'ॐ फट् क्रव्यादं निष्कर्षयामि फट्' इति दर्भकाण्डद्वयं प्रज्वाल्य बहिः क्षिपेत्।

वहाँ चौकोर या त्रिकोण कुण्ड बनाकर, ॐ क्रियाशक्त्यात्मने कुण्डाय नमः

इस मन्त्र से उस कुण्ड का भली-भांति पूजन कर उसमें अग्नि लाकर उस अग्नि में आत्मचैतन्य अग्नि का समायोजन करके रं अग्नये नमः से उसका पूजन करे। तत्पश्चात् नैर्ऋत्यकोण में जलपूर्णपात्र, जो तीन पुष्पों से युक्त हो, उसे मूलमन्त्र से अभिमन्त्रित कर स्थापित करे। सामान्यार्घ्य की भँति अस्त्राय फट् मन्त्र से उसका पूजन करना चाहिए। अन्त में ॐ फट् क्रव्यादं निष्कर्षयामि फट् इससे दो दर्भ के टुकड़े प्रज्ज्वलित कर बाहर की ओर फेंके।

इति क्रव्यादशुद्धिं कृत्वा सामान्याघर्यजलेन ॐ फट् अग्निं परिसमूहामि फट्, ॐ फट् अग्निं पर्युक्ष्यामि फट्, ॐ फट् अग्निं परिसिञ्चामि फट् इति सम्प्रोक्ष्य ॐ फट् यज्ञस्य सन्ततिरसि यज्ञस्य त्वा सन्तत्यैस्तृणामि फट् इति पूर्वे त्रयस्त्र, दक्षिणे पञ्च, उत्तरे पञ्च, पश्चिमे त्रयः दर्भान् संस्तीर्य रं अग्नये नमः इति पुनर्गन्धादीन् सम्पूज्य शिवशक्तिभ्यां समालम्भनं गन्धो नमः इति स्रुक्स्त्रुवौ सम्पूज्य आज्यपात्रमानीयाग्न्युपरि संस्थाप्य स्वमन्त्रेण सम्पूज्य वीक्षणं कुर्यात्।

ॐ आज्यं तेजः समुद्दिष्टमाज्यं पापहरं परम्।
आज्यं सुराणामाहारः आज्ये लोकाः प्रतिष्ठताः॥
दिव्यान्तरिक्षभौमाद्यैर्यत् ते किल्विषमागतम्।
तत्सर्वमाज्यस्पर्शेन विनाशमुपगच्छतु॥

इस प्रकार क्रव्यादशुद्धि करके सामान्यअर्घ्य के जल से ॐ फट् अग्नि परिसमूहामि फट्, ॐ फट् अग्निं पर्युक्ष्यामि फट, ॐ फट् अग्निं परिसिञ्चामि फट् मन्त्रों से क्रमशः अग्निकुण्ड में स्थापित आत्मचैतन्य-अग्नि से युक्त अग्नि के परिसमूहन, पर्युक्षण और परिसिञ्चन की क्रियाएँ सम्पन्न करनी चाहिए। ये तीनों मिलकर अग्निसम्प्रोक्षण की क्रिया सम्पन्न होती है। तब ॐ फट् यज्ञस्य सन्ततिरसि यज्ञस्य त्वा सन्तत्यैस्तृणामि फट् इससे पूर्व में तीन, दक्षिण में पाँच, उत्तर में पाँच, पश्चिम में तीन कुशाओं को बिछाकर रं अग्नये नमः से गन्धादि से अग्नि का पूजन कर। शिव शक्तिभ्यां समालम्भनं गन्धो नमः से स्रुक् और स्रुवा का पूजन करके आज्यपात्र (घी के कटोरे) को अग्नि के ऊपर स्थापित कर, अपने मूलमन्त्र से पूजन कर, ॐ आज्यं........विनाशमुपगच्छतु मन्त्र पढ़ता हुआ उसका निरीक्षण करे।

मन्त्रार्थ—आज्य! आप तेज हो, आप परम पाप का हरण करनेवाले एवं आप देवताओं के भोजन हो, आपमें ही लोकप्रतिष्ठित हैं। आपमें जो भी दिव्य, आन्तरिक्ष्य या भौम दोष आ गये हैं। वे सब आज्य के स्पर्श से नष्ट हो जायँ।

विशेष—सामान्य घी, घृत है किन्तु यज्ञाहुति हेतु प्रस्तुत वही आज्य है।

आत्मनो वाङ्मन:कायोपार्जितपापनिवारणार्थं श्रीभुवनेश्वरीप्रीत्यर्थं इदमाज्यं समर्पयामि नम:: इत्याज्यं संवीक्ष्य, मूलेन चर्वादिकं सम्मन्त्र्य, पूर्णां दद्यात्। मूलं पठन्, स्रुवं घृतपूर्णं कृत्वा स्वदेवताध्यानं पठन्, पूर्णाहुतिं दद्यात्।

अपने वाणी, मन एवं शरीर से उपार्जित पापों के निवारण और श्रीभुवनेश्वरी की प्रसन्नता हेतु आत्मनो.....इदमाज्यं समर्पयामि नम: से अग्नि का भली-भाँति वीक्षण (निरीक्षण) करके मूलमन्त्र से चरु आदि को अभिमन्त्रित कर पूर्णाहुति दे। यह यज्ञान्त पूर्णाहुति से भिन्न होगी। इस पूर्णाहुति की विधि—मूलमन्त्र पढ़ता हुआ स्रुवा को घी से भरकर अपने देवता (भुवनेश्वरी देवी) का ध्यान पढ़ते हुए पूर्णाहुति प्रदान करे।

ततोऽग्नौ देवतामावाह्य पाद्यादिभि: सम्पूज्य, वामकरेण मालां गृहीत्वा, दक्षकरेण स्रुवं गृहीत्वा, यथाशक्तिं मनुहोमं कृत्वा षडङ्गाहुतिर्जुहुयात्। यथा—ॐ ह्रां हृदयाय नम: स्वाहा। ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा स्वाहा। ॐ ह्रूं शिखायै वषट् स्वाहा। ॐ ह्रैं कवचाय हुं स्वाहा। ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् स्वाहा। ॐ ह्रः अस्त्राय फट् स्वाहा। इति हुत्वा।

तब अग्नि में इष्ट देवता का आवाहन कर पाद्यादि से उसका पूजन करके बाएँ हाथ में माला तथा दाहिने हाथ में स्रुवा ले यथा-शक्ति (संख्याक्) मन्त्र से होम करके षडङ्ग आहुति.....ॐ ह्रां हृदयायनम: स्वाहा से ॐ ह्रः अस्त्राय फट् स्वाहा पर्यन्त मन्त्रों से दे।

प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, ॐ भू: स्वाहा, ॐ भुव: स्वाहा, ॐ स्व: स्वाहा, ॐ मह: स्वाहा, ॐ जन: स्वाहा, ॐ तप: स्वाहा, ॐ सत्यं स्वाहा', इति हुत्वाऽऽवरणदेवताहोमं कुर्यात्।

तब प्राणाय स्वाहा से ॐ सत्यं स्वाहा तक मन्त्रों से आहुति देकर आवरण देवताओं का होम सम्पन्न करे।

यथा—तत्रादौ गुरव:—ऐं दिव्यौघपराख्यगुरुपंक्त्यै स्वाहा, ऐं सिद्धौघपरा-पराख्यगुरुपंक्त्यै स्वाहा, ऐं मानवौघापराख्यगुरुपंक्त्यै स्वाहा, शक्तित्रृषये स्वाहा'—इति हुत्वा स्वगुरुपरमगुरुपरात्परगुरुपरमेष्ठिगुरुपरमाचार्यादिगुरूणां पृथक् पृथगाहुतिं दद्यात्।

जैसे आवरण देवता के होम में सर्वप्रथम ऐं दिव्यौधपराख्य गुरुपंक्त्यै स्वाहा आदि मन्त्रों से आहुति देकर साधक अलग-अलग मन्त्रों से अपने गुरु, परमगुरु परात्परगुरु, परमेष्ठिगुरु, परमाचार्यगुरु आदि को अलग-अलग आहुति दे।

अथावरणदेवताः—ऐं गगनायै स्वाहा, उं रक्तायै, इं करालिकायै, अं महोच्छुष्मायै, ॐ गायत्रीसहितब्रह्मणे, ॐ सावित्रीसहितविष्णवे, ॐ सरस्वती-सहितरुद्राय, ॐ श्रीसहितधनपतये, ॐ रतिसहितस्मराय, ॐ पुष्टिसहितगणपतये, ॐ शङ्खनिधये, ॐ पद्मनिधये, ह्रां हृदयाय, ह्रीं शिरसे, ह्रूँ शिखायै, ह्रैं कवचाय, ह्रौं नेत्रत्रयाय, ह्रः अस्त्राय, ॐ अनङ्गकुसुमायै, अनङ्गकुसुमातुरायै, अनङ्गमदनायै, अनङ्गमदनातुरायै, भुवनपालायै, गगनदेवायै, शशिरेखायै, गगनरेखायै, ॐ करात्यै, ॐ विकरात्यै, ॐ उमायै, ॐ सरस्वत्यै, ॐ श्रियै, ॐ दुर्गायै, ॐ उषायै, ॐ लक्ष्म्यै, ॐ श्रुत्यै, ॐ स्मृत्यै, ॐ धृत्यै, ॐ श्रद्धायै, ॐ मेधायै, ॐ मत्यै, ॐ कान्त्यै, ॐ आर्यायै, आं ब्राह्मयै, ईं माहेश्वर्यै, ऊं कौमार्यै, ॠं वैष्णव्यै, ऌं वाराह्यै, ऐं इन्द्राण्यै, औं चामुण्डायै, अः महालक्ष्म्यै, ॐ अनङ्गरूपायै, ॐ अनङ्गमदनायै, ॐ अनङ्गमदनातुरयै, ॐ भुवनवेगायै, ॐ भुवनपालिकायै, ॐ सर्वशिशिरायै, ॐ अनङ्गवेदनायै, ॐ अनङ्गमेखलायै, लं इन्द्राय, रं अग्नये, यं यमाय, क्षं निर्ऋतये, वं वरुणाय, यं वायवे, सं सोमाय, हं ईशानाय, आं ब्रह्मणे, ह्रीं अनन्ताय, ॐ वज्राय, शक्तये, दण्डाय, खड्गाय, पाशाय, ध्वजायै, गदायै, त्रिशूलाय, पद्माय, चक्राय।

उपर्युक्त मन्त्रों को स्वाहा सहित पढ़ता हुआ अलग-अलग आवरण देवताओं को आहुति प्रदान करे।

मूलं श्रीमदीश्वराङ्कोपविष्टायै, सायुधायै सवाहनाय समुद्रायै सपरिकरायै श्रीमच्छ्रीभुवनेश्वरीभगवत्यै स्वाहा। इति शतवारं हुत्वा पूर्णाहुतिं दद्यात्। यथा—मूलं ध्यानं स्मरन् न्यूनातिरिक्तचक्रतृप्तिरस्तु वौषट् स्वाहा' इति पूर्णाहुतिं दत्वा।

तब मूलमन्त्र सहित श्रीमदीश्वराङ्कोपविष्टायै सायुधायै.....भगवत्यै स्वाहा से देवी भुवनेश्वरी को १०० आहुति दे, निर्दिष्टविधि से पूर्णाहुति दे।

मूलमन्त्र पढ़कर अभीष्टदेवता के ध्यानपूर्वक न्यूनातिरिक्त तृप्तिरस्तु वौषट् स्वाहा इससे पूर्णाहुति प्रदान करे।

गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देवि! त्वत्प्रसादान्महेश्वरि!॥

इति जपसमर्पणं विधाय।

तब गुह्यातिगुह्य.......महेश्वरि मन्त्र से इष्ट देवता के प्रति जपसमर्पण करे।

अग्निरिति भस्म। वायुरिति भस्म। जलमिति भस्म। स्थलमिति भस्म। आकाश इति भस्म।

शिवमस्तु यजमानस्य छिद्रं माऽभूत् कदाचन।
देवदेव्याः प्रसादेन रक्ष रक्षाऽस्तु मे भृश्॥

इति पठेत् ललाटे च भस्मतिलकं कुर्यात्।

तदनन्तर अग्निरिति भस्म.......मे भृश्। मन्त्रों को पढ़ता हुआ साधक अपने ललाट पर भस्म का तिलक धारण करे।

भाव—अग्नि, जल, स्थल, वायु, आकाश इन पाँचों तत्त्वों को मैं भस्मरूप में धारण करता हूँ। कल्याण हो, कर्ता के कार्य में कोई छिद्र या त्रुटि न रहे, देवता और देवियों की कृपा से मेरी रक्षा हो, बारम्बार रक्षा हो।

ततो देवतां विसृज्य, 'ॐ फट् अग्निं विमुञ्चामि फट् इत्यग्निं विमुञ्चय—

क्षमस्व मन्त्रनाथाय नित्यानन्दमयाय च।
धर्मार्थकाममोक्षाय पुनरागमनाय च॥

मन्त्रार्थ—हे नित्यानन्दमय मन्त्रनाथ ! आप मुझे धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष प्रदान करने के लिए पुनः पुनः आह्वान करने पर पधारने के लिए इस समय क्षमा करे।

इत्यग्नौ पुष्पं दत्वा योनिमुद्रयाऽऽवाह्याग्निं स्वात्माग्नौ संयोज्य प्रणमेत्।

तब देवता का विसर्जन कर ॐफट् अग्निं विमुञ्चामि फट् इस मन्त्र से अग्नि का विमुञ्चन करना चाहिए।

उस समय क्षमस्व.......च। मन्त्र से अग्नि में पुष्प देकर योनिमुद्रा से आवाहित अग्नि का अपनी आत्मारूपी अग्नि में समायोजन कर प्रणाम करे।

इति नित्यहोमविधिः। इस प्रकार नित्यहोमविधि सम्पन्न हुई।

अत्र वटुकादिबलिः—तत्रादौ ईशाने मण्डलं कृत्वा, तत्र पात्रं संस्थाप्य, वां वटुकाय नमः इति वटुकपात्रं सम्पूज्य **ह्रीं श्रीं एह्येहि देवीपुत्र, वटुकनाथ, कपिलजटाभारभास्वरत्रिनेत्र, ज्वालामुख ! सर्वविघ्नं नाशय नाशय, मम सर्वोपचारसहितं बलिं गृहण गृहण स्वाहा** इति वामांगुष्ठानामिकाभ्यां बटुकबलिं दद्यात्।

वटुकादिबलि के आरम्भ में सर्वप्रथम ईशानकोण में मण्डल बनाकर उस पर पात्रस्थापन कर वां बटुकाय नमः से वटुकपात्र का पूजन कर ह्रीं श्रीं एहयेहि.....गृहण स्वाहा इस मन्त्र से बाएँअंगूठे और अनामिका के योग से वटुकबलि प्रदान करे।

ततः आग्नेये योगिनीपात्रं संस्थाप्य, यां योगिनीभ्यो नमः इति सम्पूज्य।

ॐ ऊर्ध्वब्रह्माण्डतो वा दिवि गगनतले भूतले निष्कले वा,
पाताले वा तले वा पवनसलिलयोर्यत्रकुत्र स्थिता वा,

क्षेत्रपीठे पीठोपपीठादिषु च कृतपदा धूपदीपादिकेन
प्रीता देव्यः सदा न शुभबलिविधिना पान्तु वीरेन्द्रवन्द्याः ।

यां योगिनीभ्यः स्वाहा सर्वयोगिनीभ्यो हुं फट् स्वाहा इति वामांगुष्ठमध्यमाभ्यां योगिनीं बलिं दद्यात् ।

तब आग्नेयदिशा (अग्निकोण) में मण्डल बनाकर उस पर योगिनीपात्र स्थापित कर उसका यां योगिनीभ्यो नमः से पूजन कर ॐ ऊर्ध्व ब्रह्माण्ड तो वा...हुं फट् स्वाहा मन्त्र से बाएँ हाथ की मध्यमा और अंगूठे के योग से योगिनीबलि प्रदान करे ।

ततः नैर्ऋत्ये क्षेत्रपालपात्रं संस्थाप्य क्षां क्षेत्रपालाय नमः इति सम्पूज्य, क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः क्षेत्रपाल ! अलिबलिसहितं बलिं गृहण गृहण स्वाहा ।

योऽस्मिन् क्षेत्रे निवासी च क्षेत्रपालः स किङ्करः ।
सुप्रीतो बलिदानेन मम रक्षां करोतु सः ॥

इति वामांगुष्ठतर्जनीभ्यां क्षेत्रपालं बलिं दद्यात् ।

तब नैर्ऋत्यकोण में मण्डल बना, क्षेत्रपालपात्र की स्थापना कर क्षां क्षेत्रपालाय नमः से उसका पूजन कर क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः क्षेत्रपालः.....करोतु सः मन्त्र से बाएं अंगूठे और तर्जनी के योग से क्षेत्रपालबलि प्रदान करे ।

ततो वायव्ये गणपतिपात्रं संस्थाप्य, गं गणपतये नमः इति सम्पूज्य, गां गीं गूं गैं गौं गः गणपतये वरवरदसर्वजनं मे वशमानय बलिं गृहण गृहण स्वाहा' इति वामांगुष्ठमध्यमाभ्यां गणपतिबलिं दद्यात् ।

तब वायव्यकोण में गणपतिपात्र स्थापित कर गं गणपतये नमः से उसका पूजन कर गां गीं गूं गैं गौं गः गणपतये.....गृह्ण स्वाहा इस मन्त्र से बाएं अंगूठे और मध्यमा से गणपतिबलि प्रदान करे ।

तत उत्तरे सर्वभूतबलिपात्रं संस्थाप्य, ॐ सर्वेभ्यो भूतेभ्यो नमः इति सम्पूज्य, ॐ ह्रीं सर्वविघ्नकृद्भ्यः सर्वभूतेभ्यो हूँ स्वाहा, सर्वभूतेभ्यः एष बलिर्नमः इति वामहस्तस्य सर्वाभिरंगुलीभिः सर्वभूतबलिं दद्यात् ।

तब उत्तर में सर्वभूतबलिपात्र की स्थापना कर ॐ सर्वविघ्नकृद्भ्यः सर्वभूतेभ्यो.....एष बलिर्नमः मन्त्र पढ़ता हुआ बाएँ हाथ की सभी अंगुलियों के योग से सर्वभूतबलिप्रदान करे । इति वटुकादि बलि—बटुकादिबलि सम्पन्न हुई ।

अस्मिन्नेवावसरे छागादिबलिं दद्यात् ।

इसी अवसर पर छागादि बलि प्रदान करे ।

तत्रादौ पशुं मूलेनानीय, पाद्यादिगन्धस्त्रगादिभिरलंकृत्य, देव्यग्रे संस्थाप्य।

इस क्रम में पहले मूलमन्त्र पढ़ता हुआ बलिपशु को ले आकर उसका पाद्य-आदि तथा चन्दन, माला आदि से यथालब्धोपचारपूजन कर उसे देवी के आगे स्थापित करना चाहिए।

मूलेन प्रोक्षणीजलेन सम्प्रोक्ष्य, 'अस्त्राय फट् इति संरक्ष्य, हूं इत्यवगुण्ठ्य, धेनुमुद्रयाऽमृतीकृत्य ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सर्वदेवतारूपिणे बलिरूपायामुकपशवे नमः इति गन्धादिना त्रिः सम्पूज्य तस्य दक्षकर्णे पशुपाशाय विद्महे विप्रकर्णाय धीमहि तन्नो जीवः प्रचोदयात् इति पशुगायत्री त्रिः पठित्वा।

तब मूलमन्त्र पढ़कर प्रोक्षणीपात्र के जल से उसका प्रोक्षण, अस्त्राय फट् से संरक्षण, हूँ से अवगुण्ठन, धेनुमुद्रा से अमृतीकरण करके ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सर्वदेवता रूपिणे बलिरूपाय अमुकपशवे नमः (यहाँ अमुक के स्थान पर बलिपशु का उल्लेख करते हुए) मन्त्र से गन्धादि पूजाद्रव्यों से तीन बार पूजन कर, उसके दाहिने कान में 'पशुपाशाय विद्महे विप्रकर्णाय धीमहि तन्नों जीवः प्रचोदयात्' इस पशुगायत्री को तीन बार पढ़े। इस प्रकार बलि पूजन की प्रक्रिया सम्पन्न होती है।

पुरतः खड्गं निधाय, ॐ ह्रीं किलि किलि वज्रेश्वरीलौहदण्ड्यै नमः इति गन्धादिना त्रिरभ्यर्च्य तस्य मुष्टौ ॐ वागीश्वरी ब्रह्माभ्यां नमः मध्ये ॐ लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः अग्रे ॐ उमामहेश्वराभ्यां नमः इति सम्पूज्य, तं धृत्वा मन्त्रं पठेत्।

तत्पश्चात् खड्गपूजनक्रम में पुरतः.....सम्पूज्य पर्यन्त खड्गपूजन की क्रिया का निर्देश है। तब सामने खड्ग को रखकर ॐ ह्रीं किलि किलि वज्रेश्वरी लौहदण्ड्यै से गन्धादि से तीन बार उसका पूजन कर, उसके मुठिया पर ॐ वागीश्वरी ब्रह्माभ्यां नमः, मध्य में ॐ लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः से तथा अगले भाग में ॐ उमामहेश्वराभ्यां नमः से उसका पूजन कर, हाथ में उसे लेकर—

ॐ खड्गायासुरनाशाय देवकार्यार्थतत्परः।
पशुः देयस्त्वया शीघ्रं खड्गनाथ! नमोऽस्तु ते॥

इत्यभिमन्त्र्य।

मन्त्रार्थ—हे असुरों के नाश तथा देवकार्यहेतु तत्पर खड्ग! पशु आपके द्वारा शीघ्र प्रदान करने योग्य है। हे खड्गनाथ! आपको नमस्कार है।

ॐ खड्गा-नमोस्तुते से खड्ग को अभिमन्त्रित करे।

गन्धाक्षतजलादिकमादाय, मूलं अद्यामुकमासस्येत्यादि अमुकगोत्रोऽमुक-

शर्माऽमुककामः श्रीभुवनेश्वरि ! इमं पशुं तुभ्यमर्पयाम्यहं, प्रसीद इति पठित्वा, पशोः शिरसि निक्षिप्य तच्छिरो धृत्वा।

तब साधक गन्ध, अक्षत, जल आदि लेकर मूलमन्त्रसहित ॐ अद्यामुक मासस्य आदि के उच्चारणसहित अमुकगोत्रोऽमुकशर्मा अमुककामः श्रीभुवनेश्वरि ! इमं पशुं तुभ्यमर्पयाम्यहं प्रसीद यह पढ़े। उस जलादि को पशु के सिर पर छोड़ दे। तब पशु के शिर को पकड़कर—

ॐ यज्ञार्थं पशवः सृष्टा, यज्ञार्थं पशुघातनम्।
अतस्त्वां घातयिष्यामि तस्माद् यज्ञे वधोऽवधः॥
शिवायत्तमिदं पिण्डमतस्त्वं शिवतां गतः।
उद्बुध्यस्व पशो! त्वं हि नाशिवस्त्वं शिवोऽसि हि॥

मन्त्रार्थ—परमात्मा द्वारा पशुओं की सृष्टि यज्ञहेतु ही की गई है। पशु का घात भी यज्ञार्थ ही हो रहा है। इसीलिए मैं तुम्हारा घात करूँगा। यज्ञ में पशुवध वध नहीं होता। यह शरीर शिवप्रदत्त है अतः तुम शिवत्व को प्राप्त करो। हे पशु तुम उठो, क्योंकि तुम अशिव नहीं अपितु शिव हो।

इति सम्बोधयित्वा खड्गमादाय सौः अस्त्रायफट् छिन्धि छिन्धि स्वाहा' इति खड्गं तस्य स्कन्धे योजयेत्।

ॐ यज्ञार्थ—शिवो मन्त्र से उसका सम्बोधन कर खड्ग लेकर सौः अस्त्राय फट् छिन्धि छिन्धि स्वाहा इससे उस बलिपशु के कण्ठ से खड्ग लगाये।

ततो स्वयं देवीरूपो भूत्वा निर्विकल्पः एकेनप्रहारेण छिन्द्यात्। सविकल्पक परहस्तेन छेदयेत्। अत्रैव ब्राह्मणातिरिक्तः स्वास्त्रादिबलिं दद्यात्। इति बलिप्रदानविधिः।

तब स्वयं देवीरूप हो निर्विकलरूप से एक प्रहार से ही उसे काटे अथवा विकल्परूप में किसी अन्य के हाथ से कटवाए। यहाँ ब्राह्मण आदि से अतिरिक्त साधक द्वारा अपने हाथ से बलि देना चाहिए। इस प्रकार बलिदानविधि पूर्ण हुई।

ततो गुरुदेव्यौ ध्यायन् प्राणायामऋष्यादिकरषडङ्गन्यासान् कृत्वा मन्त्र-संस्कारं कुर्यात्।

तब बलिदानान्तर गुरु एवं देवी का ध्यान करते हुए प्राणायाम ऋषि, कर तथा खडङ्ग न्यासों को करके नीचे लिखे अनुसार मन्त्रसंस्कार करे—।

ह्रीं ह्रीं ह्रीं इति त्रिः पठेत्। इति सञ्जीवनम्। अथोत्कीलनं—नमः ह्रीं इत्युत्कीलनं त्रिर्जपेत्। अथ शापहरी विद्या—ह्रीं भैरवशापं मोचय मोचय ह्रीं। इति शापहरीं दशधा जपेत्। इति मन्त्रसंस्कारं कृत्वा।

तीन बार ह्रीं ह्रीं ह्रीं मन्त्र पढ़कर मन्त्रसञ्जीवन, तीन बार नमः ह्रीं जपकर मन्त्रों का उत्कीलन तथा ह्रीं भैरवशापं मोचय-मोचय ह्रीं इस मन्त्र को दशबार जप कर शापहरण की क्रियाएँ सम्पन्न कर मन्त्रसंस्कार करे।

ईश्वरमन्त्रं दशवारं जप्त्वा वामहस्ते पात्रे वा मालां संस्थाप्य—

ॐ माले माले महामाले सर्वसत्त्वस्वरूपिणि ! ।
चतुर्वर्गस्त्वयिन्यस्तस्तस्मान्मे फलदाभव ।।

इति मालां मूलेनापि सम्पूज्य ।

मन्त्रार्थ—हे माले, तुम महामाला हो तुम सभी तत्त्वों का स्वरूप हो। चतुवर्ग तुम्हारे ही में न्यस्त (स्थित) है इसलिए तुम उनका फल देने वाली होओ। तब ईश्वरमन्त्र का दशबार जप कर, माला को बाएँ हाथ या पात्र में रखकर—ॐ माले माले.....फलदा भव। इस मन्त्र का उच्चारण कर मूलमन्त्र से भी उसका पूजन करना चाहिए।

गं अविघ्नं कुरु माले! त्वं गृह्णामि दक्षिणेकरे ।
जपकाले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये ।।

मन्त्रार्थ—हे माले ! तुम अविघ्न करो। मैं तुम्हे अपने दाहिने हाथ में धारण करता हूँ, तुम मेरे कल्याण के लिए प्रसन्न होओ।

इति दक्षकरेण गृहीत्वा यथाशक्ति जपं विधाय ।

तब गं अविघ्नं.....सिद्धये। इस मन्त्र को पढ़ते हुए जपमाला को दाहिनेहाथ में लेकर यथाशक्ति मन्त्रजप करे।

जपान्ते—

त्वं माले ! सर्वदेवानां प्रीतिदाशुभदा तथा ।
शुभं कुरुष्व मे देवि ! यशोवीर्यं ददस्व मे ।।

मन्त्रार्थ—हे माला ! तुम सभी देवताओं को प्रसन्नता देने वाली, तथा साधकों को शुभ देने वाली हो। हे देवि ! तुम मेरा शुभ करो तथा मुझे यश एवं वीर्य (बल) प्रदान करो।

इति पठन् शिरसि मालां संस्थाप्य ।

जप के अन्त में त्वं माले.......ददस्व में मन्त्र को पढ़ते हुए शिर पर माला स्थापित करे।

पुनरपि प्राणायाम-ऋष्यादिकरषडङ्गन्यासान् विधाय, दशवारमीश्वरमनुं जप्त्वा, नमः ह्रीं इति सम्पुटमन्त्रं संजप्य—

गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देवि! त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ! ॥

मन्त्रार्थ—हे देवि ! आप गुप्त से भी गुप्त तथ्य जानने वाली हैं आप मेरे किए हुए जप को ग्रहण करें। हे महेश्वरि ! आपकी कृपा से मेरी सिद्धि हो।

इत्यनेन तेजोमयं जपफलं देवीवामहस्ते समर्प्य, कवचसहस्रनामस्तोत्रादि पठित्वा—

पुनः पूर्व की भांति ही प्राणायाम, ऋषि, कर एवं षडङ्गन्यास सम्पन्न कर दशबार ईश्वरमन्त्र का जप कर नमः ह्रीं इस सम्पुटमन्त्र का जप करे और गुह्याति.......महेश्वरि। इस मन्त्र से तेजोमय जपफल देवी के बाएँहाथ में समर्पित करे। तत्पश्चात् कवच, सहस्रनाम, स्तोत्र आदि पढ़े।

सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके !।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥

मन्त्रार्थ—हे सब प्रकार का मङ्गल प्रदान करने वाली शिवे ! आप सभी सिद्धियाँ देनेवाली हैं, हे त्र्यम्बके, हे गौरि ! हे नारायणि, आप शरणागतवत्सल हैं। आपको नमस्कार है।

इति चतुर्वारं प्रदक्षिणाम् कृत्वा।

अन्त में सर्वमङ्गल.......नमोस्तुते इस मन्त्र को पढ़ता हुआ चार बार प्रदक्षिणा करके।

अपराधो भवत्येव सेवकस्य पदे पदे।
कोऽपरः सहते लोके केवलं स्वामिनं विना ॥

इत्यष्टांगं प्रणिपत्य, ततः सामान्यार्घ्योदकं चुलुकेन गृहीत्वा—ॐ इतः पूर्वं प्राणबुद्धिदेहधर्माधिकारतो जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यवस्थासु मनसावाचाकर्मणा, पद्भ्यामुदरेण शिश्ना यत्स्मृतं यदुक्तं यत्कृतं तत्सर्वं मां मदीयं श्रीभुवनेश्वरीभगवतीचरणकमले समर्पणमस्तु ॐ तत्सत्। इति सामान्यार्घ्योदकं समर्प्याञ्जलिं। बध्वा—

तब अपराधो.......स्वामिनं विना। मन्त्र पढ़कर साष्टांग प्रणाम करे और चुल्लु में सामान्य-अर्घ्य का जल लेकर ॐ इतः पूर्ण........ॐ तत्सत्। तक मन्त्र पढ़कर अंजलि बांधकर सामान्यार्घ्य अर्पित करे।

यद्दत्तं भक्तिमात्रेण पुष्पं पत्रं फलं जलम्।
निवेदितं च नैवेद्यं तद् गृहाणानुकम्पया ॥

आह्वानं नैव जानामि न जानामि विसर्जनम्।
पूजाभागं न जानामि, क्षम्यतां परमेश्वरि!॥
देवी दात्री च भोक्त्री च देवी सर्वमिदं जगत्।
देवी जयतु सर्वत्र या देवी सोऽहमेव हि॥
यदक्षरपरिभ्रष्टं मात्राहीनं च यद्गतम्।
तत्सर्वं कृपया देवि! क्षम्यतां परमेश्वरि!॥
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं विधिहीनं च यद् भवेत्।
तत्सर्वं कृपया देवि! गृहाणाराधनं मम॥
प्रातः प्रभृतिसायान्तं सायांदिप्रातरं ततः।
यत्करोमि जगद्योने! तदस्तु तव पूजनम्॥
क्षमस्व देवदेवेशि! भुवनेशि! महेश्वरि!।
तव पादाम्बुजे नित्यं निश्चला भक्तिरस्तु मे॥

इति देवीं पुष्पाञ्जलिना क्षमाप्य।

तब हाथ में पुष्पाञ्जलि लेकर यद्दत्तं से भक्तिरंस्तु मे पर्यन्त मन्त्रों से क्षमायाचनापूर्वक पुष्पाञ्जलि अर्पण करे।

मन्त्रार्थ—हे देवि! जो भी पत्र, पुष्प, फल, जल, नैवेद्य आदि पूजोपचार मेरे द्वारा भक्तिपूर्वक आपको समर्पित किया जा रहा है, कृपया आप उसे ग्रहण करें।

हे परमेश्वरि! न तो मैं आपका आह्वान जानता हूँ न विसर्जन, मैं आपके पूजाभाग को भी नहीं जानता अत: पूजनकर्म में होने वाली त्रुटियों को आप क्षमा करें।

देवी देनेवाली तथा भोगनेवाली दोनों ही हैं, वे यह सम्पूर्ण जगत् ही हैं। सर्वत्र देवी की जय हो। जो देवी हैं, वही मैं हूँ॥

हे परमेश्वरि! मन्त्रोच्चार में जो अक्षर परिभ्रष्ट हो गए हों या मात्रारहित उच्चारित हुए हों उनके सभी प्रकार के दोष को आप क्षमा कीजिए।

आपकी आराधना में मन्त्र, क्रिया और विधि की हीनता के कारण जो दोष हो गए हों उन्हें कृपा करके आप ग्रहण करें।

हे महेश्वरि, हे भुवनेशि, हे देवताओं की भी देवेशि! हे संसार को उत्पन्न करने वाली। प्रात: से सायं और सायं से प्रात: तक अहर्निश मैं जो भी कार्य करता हूँ, वे सब आपके पूजन के ही रूप में स्वीकार हों।

आपके चरणकमलों में नित्य एवं निश्चल मेरी भक्ति बनी रहे।

ततः शङ्खमुत्थाप्य—

साधु वाऽसाधु वा कर्म यद्यदाचरितं मया।
तत्सर्वं कृपया देवि! गृहाणाराधनं मम ॥

इति शङ्खं त्रिः परिभ्राम्य, तज्जलं देवीदक्षहस्ते समर्प्य, पुनस्तज्जलं, वामहस्तेन गृहीत्वा शङ्खं स्वस्थाने संस्थाप्य, तज्जलं स्वमन्त्रेण सम्मन्त्र्य, तेन जलेन सप्तधा मूलं पठन् स्वशरीरं सम्प्रोक्षयेत्।

तब शङ्खपात्र को अपने स्थान से उठाकर साधुवाऽसाधु.......मम मन्त्र पढ़ता हुआ शङ्ख को तीन बार घुमाकर उसके जल को देवी के दाहिनेहाथ में समर्पण करे। पुनः उसी जल को बाएँ हाथ में लेकर शङ्ख को उसके स्थान पर स्थापित कर दे तथा बाएँ हाथ में लिए जल को अपने मन्त्र से अभिमन्त्रित कर उसी से सात बार मूलमन्त्र पढ़ता हुआ, अपने शरीर का प्रोक्षण करे।

ततः पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा—

गच्छ गच्छ परं स्थानं स्वस्थानं परमेश्वरि!।
यत्र ब्रह्मादयः सर्वे सुरास्तिष्ठन्ति मे हृदि ॥

इति देवीं विसृज्य।

तब पुष्पाञ्जलि लेकर गच्छ.....मे हृदि। इस मन्त्र से देवी का विसर्जन करे।

मन्त्रार्थ—हे परमेश्वरि! अब आप अपने परमस्थान को पधारें, जहाँ ब्रह्मादि सभी श्रेष्ठदेवगण मेरे हृदय निवास करते हैं।

संहारमुद्रया निर्माल्यपुष्पमाघ्राय—

तिष्ठ तिष्ठ परे स्थाने स्वस्थाने परमेश्वरि।
यत्र ब्रह्मादयः सर्वे सुरास्तिष्ठन्ति मे हृदि ॥

इति श्रीचक्रात् तेजोरूपां देवीं मनसोत्थाय, स्वहृदि संस्थापयेत्।

मन्त्रार्थ—हे परमेश्वरि! मेरे हृदय के अपने श्रेष्ठस्थान में जहाँ ब्रह्मादि देवगण स्थित हैं वहीं आप स्थित होइये। तब संहारमुद्रा से निर्माल्यपुष्प को सूंघ कर तिष्ठ.......मे हृदि। इस मन्त्र से श्रीचक्र से तेजरूपा देवी को मानसिकरूप से उठाकर अपने हृदय में स्थापित करना चाहिए।

ततः चण्डेश्वराय नमः इति निर्माल्यं सम्पूज्य ईशानकोणे त्रिकोणं संलिख्य तत्र ॐ ह्रीं उच्छिष्टचाण्डालिनि! सर्वसत्त्ववशङ्करि! स्वाहा इति उच्छिष्ट चाण्डालिनीं निर्माल्येन सम्पूज्य—

तत्पश्चात् चण्डेश्वराय नम: इस मन्त्र से निर्माल्य का पूजन कर, ईशानकोण में त्रिकोण बनाकर वहाँ ॐ ह्रीं उच्छिष्टचाण्डालिनि सर्वसत्ववशङ्करि स्वाहा इस मन्त्र से निर्माल्य द्वारा उच्छिष्टचाण्डालिनी का पूजन करे।

लेह्यचोष्यभक्ष्यपानादिताम्बूलस्त्रग्विलेपनं ।
निर्माल्यभोजनं तुभ्यं ददामि श्रीशिवाज्ञया ॥

इति नैवेद्यं शतांशं तस्यै दत्वा विसृजेत्।

मन्त्रार्थ—लेह्य, चोष्य, भक्ष्य, पान, ताम्बूल, माला, चन्दन आदि निर्माल्य भोजन शिव की आज्ञा से तुझे दे रहा हूँ।

लेह्य चोष्य.......श्री शिवाज्ञया ॥ इस मन्त्र से नैवेद्य का सौवां भाग उसे प्रदान कर, उच्छिष्टचाण्डालिनी का विसर्जन करे।

ततः श्रीपात्रमुत्थाप्य गुरुमन्त्रं स्मरन्, शिरसि संस्थाप्य; तज्जलं किञ्चित् पात्रान्तरे संस्थाप्य; तेन अं.....अ: मूलं आत्मतत्त्वं शोधयामि स्वाहा कं.......मं मूलं विद्यातत्त्वं शोधयामि स्वाहा; यं.......ळं क्ष: मूलं शिवतत्त्वं शोधयामि स्वाहा अं.....क्षं ळं मूलं सर्वतत्त्वं शोधयामि स्वाहा इति चुलुकचतुष्टयं स्वीकुर्यात्।

तब श्रीपात्र को उठाकर गुरुमन्त्र का स्मरण करता हुआ उसे अपने शिर पर स्थापित करे, उसके थोड़े जल को किसी अन्य पात्र में लेकर, उस जल से अं.....अ: मूलं आत्मतत्त्वं शोधयामि स्वाहा आदि मन्त्रचतुष्टय को क्रमश: पढ़ता हुआ चार चुल्लु जल आचमनरूप में स्वीकार करना चाहिए।

ततो गुरुपात्रमुत्तोल्य श्रीगुरुमन्त्रं पठन्, गुरुसद्भावे गुरवे दद्यात्, गुरोरभावे स्वशिरसि गुरुपादुकास्थाने निक्षिपेत्। अथवा गुरुज्येष्ठपुत्राय दद्यात्।

तब गुरुपात्र को उठाकर, गुरुमन्त्र पढ़ता हुआ गुरु की उपस्थिति वहाँ होने पर गुरु को या उनकी अनुपस्थिति में अपने मस्तक पर स्थित गुरुपादुकास्थान पर छोड़े अथवा यदि गुरु का ज्येष्ठपुत्र वहाँ उपस्थित हो तो वह उसे प्रदान करे।

ततः शक्तिपात्रमुत्तोल्य—

अलिपात्रमिदं तुभ्यं दत्तं स पिशितं मया।
स्वीकृत्य सुभगे देवि! यशो विद्यां च देहि मे ॥

इति पठन् शक्तये दद्यात्।

तब शक्तिपात्र को उठाकर अलिपात्रमिदं.......देहि मे पढ़ते हुए उसे शक्ति को प्रदान करे।

१०

मन्त्रार्थ—हे देवि ! मांसयुक्त, मधुपात्र मेरे द्वारा आपको दिया जा रहा है । हे सुभगे ! तुम इसे स्वीकार कर मुझे यश और विद्या प्रदान करो ।

ततो वीरपात्रामृतं वीरेभ्यो दद्यात् । ततः स्वपात्रं कपालिनीमुद्रितेन वामकरेण गृहीत्वा, स्वगुरुमार्गेण सामयिकैः सह पात्रवन्दनं कुर्यात् ।

तब वीरपात्र का अमृत वीरों को दे। इस प्रकार श्री, गुरु, शक्ति और वीरपात्रचतुष्टय के विसर्जन के पश्चात् अपने पात्र को कपालिनीमुद्रा से बाएँहाथ में ग्रहण कर, अपने गुरुमार्ग के अनुसार सामयिकों के साथ पात्रवन्दन करे ।

श्रीमद्भैरवशेखरप्रविलसच्चन्द्रामृताप्लावितम् ।
क्षेत्राधीश्वरयोगिनीगणमहासिद्धैः समाराधितम् ॥
आनन्दागमकं महात्मकमिदं साक्षात् त्रिखण्डामृतम् ।
वन्दे श्रीप्रथमं कराम्बुजगतं पात्रं विशुद्धिप्रदम् ॥१॥

इत्यभिवन्द्य, वन्दनं कृत्वा, 'जुहोमि' इति गुरु-शक्ति-साधकेभ्यः आज्ञां गृह्णीयात् । ते च यथोचितं 'जुषस्व' 'जुषध्वं' इति ब्रूयुः । ततो मूलाधारात् कुण्डलिनीमिष्ट-देवता-स्वरूपामाजिह्वान्तं विभाव्य, 'ॐ आत्मतत्त्वं शोधयामि स्वाहा' इति कुलकुण्डलिनीं जुहुयात् ।

श्रीमान् चन्द्रशेखररूप भैरव के मस्तक पर अर्धचन्द्र से प्लावित, क्षेत्रपाल, योगिनियों, गणों तथा महान्सिद्धों से आराधित, आनन्द तथा महत्त्व देने वाले त्रिखण्डामृतयुक्त विशुद्धिप्रद, हाथ में लिए प्रथमपात्र की मैं वन्दना करता हूँ ॥१॥

श्रीमद्.....विशुद्धिप्रदम् । मन्त्रोच्चार से अभिवंदित कर प्रथमपात्र का वन्दन करता हुआ जुहोमि ऐसा कहकर वहाँ उपस्थित गुरु, शक्ति, साधक (वीर) से आज्ञा ग्रहण करे और वे यथोचितक्रम से जुषस्व, जुषध्व बोलें। तब अपनी इष्टदेवतारूप कुण्डलिनी की मूलाधार से जिह्वा के अन्तिम छोर तक स्थित भावना कर ॐ आत्मतत्त्वं शोधयामि स्वाहा इस मन्त्र से कुलकुण्डलिनी में होम करे। पान करे। इत्यभिवन्द्य से जुहुयात् तक की योजना प्रत्येकपात्र के साथ होगी। मात्र तत्त्वनाम ही बदलेंगे ।

हैमं सिन्धुरसावहं दयितया दत्तं च पेयादिभिः
किञ्चिच्चञ्चलरक्तपङ्कजदृशा सानन्दमुद्वीक्षितम् ।
वामे स्वादुविशुद्धिशुद्धिकवलं पाणौ विधायात्मके
वन्दे पात्रमहं द्वितीयमधुनाऽऽनन्दैकसंवर्द्धनम् ॥२॥

ॐ विद्यातत्त्वं शोधयामि स्वाहा।

स्वर्णिमसिन्धु के समान रस से युक्त स्वर्णपात्र में थोड़े चंचल, लाल, कमलवत् नेत्रों तथा आनन्दपूर्णदृष्टि से दयिता (प्रेयसी) द्वारा दिये गये पेयपदार्थ तथा बाएँहाथ में स्वादिष्ट एवं विशुद्ध शुद्धिखण्ड सहित आनन्द बढ़ाने वाले द्वितीयपात्र की मैं वन्दना करता हूँ ॥२॥ कहते हुए पहले की भाँति कहकर ॐ विद्या तत्त्वं शोधयामि स्वाहा से द्वितीयपात्र ग्रहण करे।

सर्वाम्नायकलाकलापकलितं कौतूहलोद्योतितम्
चन्द्रोपेन्द्रमहेन्द्रशम्भुवरुणब्रह्मादिभिः सेवितम्।
ध्यातं देवगणैः परं मुनिवरैर्मोक्षार्थिभिः सर्वदा
वन्दे पात्रमहं तृतीयमधुना स्वात्मावबोधक्षमम् ॥३॥

ॐ शिवतत्त्वं शोधयामि स्वाहा।

सभी आम्नायों के कला-कलाप से युक्त, कौतूहल से प्रकाशमान, चन्द्रमा, उपेन्द्र (विष्णु), महेन्द्र (देवराज इन्द्र), शम्भु (शिव), वरुण, ब्रह्मादि देवताओं द्वारा सेवित, देवगणों तथा मोक्षाकांक्षी श्रेष्ठमुनियों द्वारा सर्वदा ध्यान किया जाता हुआ जो तृतीयपात्र है, मैं अब अपने आत्मबोध के सामर्थ्यहेतु उसकी वन्दना करता हूँ ॥३॥ कहकर पहले ही की भाँति ॐ शिवतत्त्वं शोधयामि स्वाहा से तृतीयपात्र ग्रहण करे।

मद्यं मीनरसावहं हरिहरब्रह्मादिभिः पूरितम्
मुद्रामैथुनधर्मकर्मनिरतं क्षाराम्लतिक्ताश्रयम्।
आचार्यार्चितमष्टभैरवकलान्यासेन चाच्छादितम्
पायात् पञ्चमकारतत्त्वनिलयं पात्रं चतुर्थं नमः ॥४॥

ॐ प्रकृतितत्त्वं शोधयामि स्वाहा।

मद्य (कारण), मीन (तृतीया) के रस से जिसे हरिहर ब्रह्मादि देवताओं ने रसमय किया है। मुद्रा-मैथुन के धर्म-कर्म में निरत, क्षार, अम्ल, तिक्त रसयुत; आचार्य (गुरुपरम्परा) से अर्चित, आठ भैरवों एवं कलान्यास से आच्छादित जो पञ्चमकार तत्त्वों का निलय (आश्रयभूत) चतुर्थपात्र है, उसे नमस्कार है। वह मेरी रक्षा करे ॥४॥ कहते हुए से ॐ प्रकृतितत्त्वं शोधयामि स्वाहा से चतुर्थपात्र ग्रहण करे।

आधारे भुजगाधिराजवलये पात्रं महीमण्डलम्
मद्यं सप्तसमुद्रवारिपिशितं चाष्टौ च दिग्दन्तिनः।
सोऽहं भैरवमर्चयेत् प्रतिदिनं तारागणैरक्षतैः
आदित्यप्रमुखैः सुरासुरगणैराज्ञाकरैः किङ्करैः ॥५॥

मन्त्रार्थ—हे देवि ! मांसयुक्त, मधुपात्र मेरे द्वारा आपको दिया जा रहा है । हे सुभगे ! तुम इसे स्वीकार कर मुझे यश और विद्या प्रदान करो ।

ततो वीरपात्रामृतं वीरेभ्यो दद्यात्। ततः स्वपात्रं कपालिनीमुद्रितेन वामकरेण गृहीत्वा, स्वगुरुमार्गेण सामयिकैः सह पात्रवन्दनं कुर्यात्।

तब वीरपात्र का अमृत वीरों को दे। इस प्रकार श्री, गुरु, शक्ति और वीरपात्रचतुष्टय के विसर्जन के पश्चात् अपने पात्र को कपालिनीमुद्रा से बाएँहाथ में ग्रहण कर, अपने गुरुमार्ग के अनुसार सामयिकों के साथ पात्रवन्दन करे ।

श्रीमद्भैरवशेखरप्रविलसच्चन्द्रामृताप्लावितम् ।
क्षेत्राधीश्वरयोगिनीगणमहासिद्धैः समाराधितम् ॥
आनन्दागमकं महात्मकमिदं साक्षात् त्रिखण्डामृतम् ।
वन्दे श्रीप्रथमं कराम्बुजगतं पात्रं विशुद्धिप्रदम् ॥१॥

इत्यभिवन्द्य, वन्दनं कृत्वा, 'जुहोमि' इति गुरु-शक्ति-साधकेभ्यः आज्ञां गृह्णीयात्। ते च यथोचितं 'जुषस्व' 'जुषध्वं' इति ब्रूयुः। ततो मूलाधारात् कुण्डलिनीमिष्ट-देवता-स्वरूपामाजिह्वान्तं विभाव्य, 'ॐ आत्मतत्त्वं शोधयामि स्वाहा' इति कुलकुण्डलिनीं जुहुयात्।

श्रीमान् चन्द्रशेखररूप भैरव के मस्तक पर अर्धचन्द्र से प्लावित, क्षेत्रपाल, योगिनियों, गणों तथा महान्सिद्धों से आराधित, आनन्द तथा महत्त्व देने वाले त्रिखण्डामृतयुक्त विशुद्धिप्रद, हाथ में लिए प्रथमपात्र की मैं वन्दना करता हूँ ॥१॥

श्रीमद्.....विशुद्धिप्रदम्। मन्त्रोच्चार से अभिवंदित कर प्रथमपात्र का वन्दन करता हुआ जुहोमि ऐसा कहकर वहाँ उपस्थित गुरु, शक्ति, साधक (वीर) से आज्ञा ग्रहण करे और वे यथोचितक्रम से जुषस्व, जुषध्व बोलें। तब अपनी इष्टदेवतारूप कुण्डलिनी की मूलाधार से जिह्वा के अन्तिम छोर तक स्थित भावना कर ॐ आत्मतत्त्वं शोधयामि स्वाहा इस मन्त्र से कुलकुण्डलिनी में होम करे। पान करे। इत्यभिवन्द्य से जुहुयात् तक की योजना प्रत्येकपात्र के साथ होगी। मात्र तत्त्वनाम ही बदलेंगे।

हैमं सिन्धुरसावहं दयितया दत्तं च पेयादिभिः
किञ्चिच्चञ्चलरक्तपङ्कजदृशा सानन्दमुद्वीक्षितम् ।
वामे स्वादुविशुद्धिशुद्धिकवलं पाणौ विधायात्मके
वन्दे पात्रमहं द्वितीयमधुनाऽऽनन्दैकसंवर्द्धनम् ॥२॥

ॐ विद्यातत्त्वं शोधयामि स्वाहा ।

स्वर्णिमसिन्धु के समान रस से युक्त स्वर्णपात्र में थोड़े चंचल, लाल, कमलवत् नेत्रों तथा आनन्दपूर्णदृष्टि से दयिता (प्रेयसी) द्वारा दिये गये पेयपदार्थ तथा बाएँहाथ में स्वादिष्ट एवं विशुद्ध शुद्धिखण्ड सहित आनन्द बढ़ाने वाले द्वितीयपात्र की मैं वन्दना करता हूँ ।।२।। कहते हुए पहले की भाँति कहकर ॐ विद्या तत्त्वं शोधयामि स्वाहा से द्वितीयपात्र ग्रहण करे ।

सर्वाम्नायकलाकलापकलितं कौतूहलोद्योतितम्
चन्द्रोपेन्द्रमहेन्द्रशम्भुवरुणब्रह्मादिभिः सेवितम् ।
ध्यातं देवगणैः परं मुनिवरैर्मोक्षार्थिभिः सर्वदा
वन्दे पात्रमहं तृतीयमधुना स्वात्मावबोधक्षमम् ।।३।।

ॐ शिवतत्त्वं शोधयामि स्वाहा ।

सभी आम्नायों के कला-कलाप से युक्त, कौतूहल से प्रकाशमान, चन्द्रमा, उपेन्द्र (विष्णु), महेन्द्र (देवराज इन्द्र), शम्भु (शिव), वरुण, ब्रह्मादि देवताओं द्वारा सेवित, देवगणों तथा मोक्षाकांक्षी श्रेष्ठमुनियों द्वारा सर्वदा ध्यान किया जाता हुआ जो तृतीयपात्र है, मैं अब अपने आत्मबोध के सामर्थ्यहेतु उसकी वन्दना करता हूँ ।।३।। कहकर पहले ही की भाँति ॐ शिवतत्त्वं शोधयामि स्वाहा से तृतीयपात्र ग्रहण करे ।

मद्यं मीनरसावहं हरिहरब्रह्मादिभिः पूरितम्
मुद्रामैथुनधर्मकर्मनिरतं क्षाराम्लतिक्ताश्रयम् ।
आचार्यार्चितमष्टभैरवकलान्यासेन चाच्छादितम्
पायात् पञ्चमकारतत्त्वनिलयं पात्रं चतुर्थं नमः ।।४।।

ॐ प्रकृतितत्त्वं शोधयामि स्वाहा ।

मद्य (कारण), मीन (तृतीया) के रस से जिसे हरिहर ब्रह्मादि देवताओं ने रसमय किया है । मुद्रा-मैथुन के धर्म-कर्म में निरत, क्षार, अम्ल, तिक्त रसयुत; आचार्य (गुरुपरम्परा) से अर्चित, आठ भैरवों एवं कलान्यास से आच्छादित जो पञ्चमकार तत्त्वों का निलय (आश्रयभूत) चतुर्थपात्र है, उसे नमस्कार है । वह मेरी रक्षा करे ।।४।। कहते हुए से ॐ प्रकृतितत्त्वं शोधयामि स्वाहा से चतुर्थपात्र ग्रहण करे ।

आधारे भुजगाधिराजवलये पात्रं महीमण्डलम्
मद्यं सप्तसमुद्रवारिपिशितं चाष्टौ च दिग्दन्तिनः ।
सोऽहं भैरवमर्चयेत् प्रतिदिनं तारागणैरक्षतैः
आदित्यप्रमुखैः सुरासुरगणैराज्ञाकरैः किङ्करैः ।।५।।

ॐ पुरुषतत्त्वं शोधयामि स्वाहा ।

भुजगाधिराज शेषनाग को आधार बनाकर स्थित, समस्त पृथ्वीमण्डल को ही पात्र, सातों समुद्रों के जल को मद्य तथा आठों दिग्गजों को पिशित (मांस) के रूप में ग्रहण किए, प्रतिदिन तारागणों से रक्षित और आदित्य आदि देवता तथा दानवों से आज्ञाकारी सेवक की भांति सेवित, सोऽहंरूप भैरवस्वरूप पंचमपात्र की मैं वन्दना करता हूँ ।।५।। ॐ पुरुषतत्त्वं शोधयामि स्वाहा से पंचमपात्र ग्रहण करे ।

छत्रं चामरभद्रपीठपरमानन्दोदयं दायकम्
वाजीदन्तमनोहरं सुखकरं सायुज्यसाम्राज्यदम् ।
नानाव्याधिभयान्धकारहरणं जन्मान्तरध्वंसनम्
श्रीमद्भैरवभैरवीप्रियतरं पात्रं च षष्ठं नमः ।।६।।

ॐ मनस्तत्त्वं शोधयामि स्वाहा ।

छत्र, चामर, भद्रपीठ (सिंहासन) के परमानन्द की अनुभूतिदायक, घोड़े, हाथी के सुन्दर-सुख को देने वाले तथा सायुज्य के साम्राज्यसुख प्रदाता, अनेक प्रकार की व्याधियों के भयरूपी अन्धकार को हरने वाला, जन्मान्तर, पुनर्जन्म के क्रम को ध्वंस करने वाला, श्री भैरव एवं भैरवी को विशेष रूप से प्रिय, छठेपात्र को नमस्कार है ।।६।। से ॐ मनस्तत्त्वं शोधयामि स्वाहा कथन पूर्वक षष्ठपात्र ग्रहण करे ।

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिबोधपवनं चैतन्यसाक्षिप्रदम्
विद्युद्भास्करवह्निजिष्णुधनुषां ज्योतिष्कलाव्यापितम् ।
वामा पिङ्गलमध्यगा त्रिवलया सत्कुण्डली चोर्ध्वगा
पात्रं सप्तमपूरणेन तरुणानन्दप्रदं पातु माम् ।।७।।

ॐ बुद्धितत्त्वं शोधयामि स्वाहा ।

जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति का बोध कराने वाले, वायु को चैतन्य और साक्षित्व प्रदायक, विद्युत्, सूर्य, अग्नि, जिष्णुधनुष (इन्द्रधनुष) में ज्योतिकला के रूप में विद्यमान, वामा (इडा), पिङ्गला, मध्यमा (सुषुम्ना) के मध्य में तीन-वलयीभूत (ऊर्ध्वगामिनी सत् कुण्डली के प्रभाव से पूरित, तरुणानन्दप्रदायक, सप्तमपात्र मेरी रक्षा करे ।।७।। ॐ बुद्धितत्त्वं शोधयामि स्वाहा । कहते हुए सप्तमपात्र ग्रहण करे ।

खड्गं पादुकमञ्जुलं सुतिलकं कण्ठे हि सारस्वतम्
शत्रोर्वर्ग्बलशौर्यकार्यकरणं देहस्थिते कारणम् ।
वाञ्छासिद्धिकरं मनःस्थिरकरं वश्यं जगद्योषितां
पात्रं चाष्टमष्टसिद्धिकरणं प्रौढप्रतापं भजे ।।८।।

ॐ अहङ्कारतत्त्वं शोधयामि स्वाहा।

सुन्दर खड्ग एवं पादुका, कण्ठ में सारस्वतज्ञान (वैदुष्य) का सुन्दरतिलक, शत्रु के वाग्बल (वाक्कौशल) रूप शौर्यकारण का हरण करने वाले देह में स्थित कारणमय, वाञ्छासिद्धिदायक, मनको स्थिर करने वाले, संसार की सभी स्त्रियों को वश में करने वाले, आठों सिद्धियों का प्रदाता अष्टमपात्र जो प्रौढ, प्रताप देने में समर्थ है, मैं उसका भजन (वन्दन) करता हूँ ॥८॥ ॐ अहङ्कारतत्त्वं शोधयामि स्वाहा। कहकर अष्टमपात्र ग्रहण करे।

सर्वानन्दकरं सदाशिवपदं सर्वार्थसम्पत्प्रदम्
साम्राज्यार्थकरं समस्तसुखदं चाज्ञानविध्वंसनम्।
आयु:कान्तियशोविवर्धनकरं संसारमोहच्छिदम्
पात्रं लक्षणगुणात्मकं च नवमं सर्वार्थसिद्धिप्रदम् ॥९॥

ॐ शक्तितत्त्वं शोधयामि स्वाहा।

सभी प्रकार के समस्त आनन्दकारक, सदाशिवपद और सभी अर्थ (सिद्धियों) तथा सम्पति को देने वाले, सायुज्यअर्थकारक, सभी सुखों के दाता अज्ञान के विध्वंसक, आयु, कान्ति, यश के विकासकारक, संसार के प्रति मोह के विच्छेदक, लाखों गुणों से युक्त नवमपात्र का भजन करता हूँ ॥९॥ ॐ शक्तितत्त्वं शोधयामि स्वाहा। कहकर नवमपात्र ग्रहण करे।

ब्रह्माविष्णुमहेशानां देवानां च विशेषत:।
दुर्लभं पावनं पात्रं दशमं प्रणमाम्यहम् ॥१०॥

ॐ भैरवतत्त्वं शोधयामि स्वाहा।

ब्रह्मा-विष्णु, महेश आदि देवताओं को भी विशेषरूप से दुर्लभ, पवित्र, दसवें-पात्र को मैं प्रणाम करता हूँ ॥१०॥ से ॐ भैरवतत्त्वं शोधयामि स्वाहा। कहकर दशमपात्र ग्रहण करे।

पापघ्नं शान्तिशुभदं दिव्यं स्वादुसुखालयम्।
पात्रमेकादशं वन्दे शुभं सेवासुखागतम् ॥११॥

ॐ सर्वतत्त्वं शोधयामिस्वाहा। इति पात्रवन्दनम्।

पाप को नाश करनेवाले, शान्ति व शुभत्वदायक, दिव्यस्वाद तथा सुख के आलय, सेवासुख से प्राप्त शुभ, एकादशपात्र की मैं वंदना करता हूँ ॥११॥ ॐ सर्वतत्त्वं शोधयामि स्वाहा कहकर एकादशपात्र ग्रहण करे। इस प्रकार पात्रवन्दना सम्पन्न करनी चाहिए।

अथ पात्रप्रशंसा

पात्रं....................पशु पानमतः परम्। इति पात्रप्रशंसां कृत्वा।

तब पात्रं कृत्वा—पशु पानमतः परं तक आठमन्त्रों को पढ़कर पात्रप्रशंसा करे।

पात्रं कृत्वा करे मन्त्री सर्वकर्मलभेत् सुखी।
इह लोके श्रियं भुक्त्वा देहान्ते भैरवो भवेत्॥१॥

हाथ में पात्र लेकर मन्त्रसाधक, सभी कर्मों के सुख को प्राप्त कर लेता है, वह इस लोक में श्रेय को प्राप्त कर देहान्त होने पर स्वयं भैरवरूप हो जाता है॥१॥

वामे रामा रमणकुशला दक्षिणे चालिपात्रम्
अग्रे मुद्राश्चणकवटुकौ शूकरस्योष्णशुद्धिः।
तन्त्री वीणा सरसमधुरा सद्गुरुः सत्कथायाम्
कौलोमार्गः परमगहनो योगिनामप्यगम्यः॥२॥

बाएँभाग में रमणकर्म में कुशल सुन्दरी हो, एवं दाहिनी ओर अलिपात्र (मधुपात्र) हो, आगे चना एवं बड़े की मुद्रा तथा शूकर का गरमागरम शुद्धिखण्ड हो, वातावरण में तन्त्री (सितार) और वीणा की सरस मधुरध्वनि गुञ्जायमान हो तथा सद्गुरु का सत्संग चल रहा हो। ऐसा विरोधाभास से युक्त कौलमार्ग, परमरहस्यमय तथा योगियों के लिए भी अगम्य है॥२॥

अलिपिशितपुरन्ध्री भोगपूजापरोऽहम्
बहुविधकुलमार्गारम्भसम्भावितोऽहम्।
पशुजनविमुखोऽहं भैरवीमाश्रितोऽहम्
गुरुचरणरतोऽहं भैरवोऽहं शिवोऽहम्॥३॥

मधु, मांस, स्त्री के भोग एवं पूजा में रत, बहुतप्रकार के मार्गारम्भ से सम्भावित (युक्त), पशुजन से विमुख, भैरवचरणों का आश्रित, गुरुचरणों की सेवा में रत, मैं स्वयं भैरव हूँ, शिव हूँ॥३॥

करे पात्रं मुखे स्तोत्रमानन्दो हृदयान्तरे।
भक्तिर्गुरुपदाम्भोजे शरणं किमतः परम्॥४॥

हाथ में पात्र, मुख में स्तोत्रपाठ, हृदयान्तर में आनन्द, गुरुभक्ति और उसकी शरणागतता इससे श्रेष्ठ क्या है? कुछ नहीं है॥४॥

एकेन शुष्कवटकेन घटं पिवामि।
वापीं पिवामि सहसा लवणार्द्रकेन॥५॥

एक सूखे बड़े से मैं घटभर तीर्थ ले सकता हूँ। अदरक एवं नमक से सरोवर पी सकता हूँ ॥५॥

आस्वाद्य मांसमलिरोहितमुण्डखण्डम्।
गङ्गां पिवामि यमुनां सह सागरेण ॥६॥

मांस, मधु, रोहितमुण्ड का टुकड़ा खाकर मैं गंगा-यमुना के सहित समुद्र को भी पी सकता हूँ ॥६॥

पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा यावत् पतति भूतले।
पुनरुत्थाय वै पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते ॥७॥

बारम्बार पीकर, पुनः पीकर जो जमीन पर गिर जाता है और उठने के बाद पुनः पीता है, उसका पुनर्जन्म नहीं होता ॥७॥

यावन्न चलते चित्तः यावन्न चलते मनः।
तावत् पानं प्रकर्तव्यं पशुपानमतः परम् ॥८॥

जब तक चित्त चञ्चल और मन विचलित न हो तभी तक पान करना चाहिए। इससे अधिक तो पशुपान है ॥८॥

इति पात्रप्रशंसा कृत्वा बलिपात्रस्थनिर्माल्यादिकं च पात्रान्तरे गृहीत्वा बहिर्गत्वा शुद्धदेशे ईशानकोणे मण्डलं विलिख्य— ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उच्छिष्टभैरव ! आगच्छागच्छ बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा इत्युच्छिष्टभैरवमावाह्य सम्पूज्य तन्निर्माल्यं तत्र संक्षिप्य, योनिमुद्रयोच्छिष्टभैरवं विसृज्य, नदीतीरं गत्वा, पाणिपादौ प्रक्षाल्य, पात्रं जलपूर्णं गृहीत्वा, स्वहृदि देवीं स्मरन्, पूजागृहद्वारं गत्वा उदयोऽस्तु इति ब्रुवन्तः प्रविश्य तत्र स्वासने समुपविश्य, जलपात्रे श्रीपात्रविन्दुं निक्षिप्य तेन जलेन स्वात्मानं सम्प्रोक्षयन्, शान्तिस्तोत्रं पठेत्। यथा—

तब बलिपात्र में स्थित निर्माल्य आदि को अन्य पात्र में ले, बाहर जाकर शुद्ध-देश में, ईशानकोण में, मण्डल बनाकर 'ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उच्छिष्ट भैरव ! आगच्छागच्छ बलिं गृह्णस्वाहा' मन्त्र से उच्छिष्टभैरव का आवाहन कर, पूजन करे और वहीं रखकर योनिमुद्रा से उच्छिष्टभैरव का विसर्जन करे। तत्पश्चात् नदी के किनारे जाकर हाथ पैर धोए। पात्र (जलपात्र) को जलपूर्ण कर ले आये। अपने हृदय में देवी का स्मरण करता हुआ, पूजागृह के द्वारपर जाकर उदयोस्तु ऐसा कहते हुए पूजागृह के अन्दर प्रवेश कर अपने आसन पर बैठे। जलपात्र में श्रीपात्र के बिन्दु का प्रक्षेप कर उस जल से अपना भलीभाँति प्रोक्षण करे। तत्पश्चात् शान्तिस्तोत्र पढ़े। जैसे—

श्रीभैरव उवाच

शान्तिस्तोत्र

देवि! वक्ष्यामि पूजान्ते शान्तिस्तोत्रमनुत्तमम्।
वीराः येन परानन्दपदं प्राप्स्यन्ति निःस्पृहाः ॥१॥

श्रीभैरव बोले—हे देवि ! मैं पूजा के अन्त में पढ़े जाने वाले उत्तम शान्तिस्तोत्र को कहूँगा जिसके पाठ से निस्पृह वीरसाधक परानन्दपद को प्राप्त करते हैं ॥१॥

योगिनीचक्रमध्यस्थं मातृमण्डलवेष्टितम्।
नमामि शिरसा नाथं भैरवं भैरवीप्रियम् ॥२॥

मैं योगिनियों के मध्य में स्थित, मातृमण्डल से घिरे हुए भैरवी के प्रिय, भैरवनाथ को सिर झुका कर प्रणाम करता हूँ ॥२॥

अनादिघोरसंसारव्याधिध्वंसैकहेतवे ।
नमः श्रीनाथवैद्याय कुलौषधप्रदायिने ॥३॥

अनादि (शाश्वत), संसाररूपी भयानकव्याधि के ध्वंस के एकमात्र हेतुभूत, कुलमार्गरूपी औषध प्रदान करने वाले, श्रीनाथरूपी वैद्य को नमस्कार है ॥३॥

आपदो दुरितं रोगाः समयाचारलङ्घनात्।
ये सर्वे ते व्यपोहन्तु दिव्यचक्रस्य मेलनात् ॥४॥

समयाचार के लङ्घन से उत्पन्न जो भी आपत्ति, रोग या पाप हैं, वे सभी दिव्यचक्र के सम्मेलन से नष्ट हो जायँ ॥४॥

आयुरारोग्यमैश्वर्यं कीर्तिलाभः सुखं जयः।
कान्तिमनोरथाश्चास्तु पान्तु सर्वाश्च देवताः ॥५॥

आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य, कीर्ति,लाभ, सुख, जय, कान्ति, और मनोरथ पूर्ण हो, सभी देवता रक्षा करें ॥५॥

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्रयोगीन्द्रतपोधनानाम्।
देशस्य राष्ट्रस्य कुलस्य राज्ञः करोतु शान्तिं भगवान् कुलेशः ॥६॥

कुलेश ! कुलमार्ग से पूजा करने वाले, उनके प्रतिपालकों, श्रेष्ठ यति (सन्यासी), योगी, तपस्वीजनों, देश, राष्ट्र, कुल तथा इसके राजा को शान्ति प्रदान करें ॥६॥

नन्दन्तु साधककुलान्वयदर्शकाः ये मृष्टाद्यनाख्यचतुरुक्तमहान्वये च।
नन्दन्तु सर्वकुलकौलरताः परे येऽप्यन्ये विशेषपदभेदकशाम्भवा ये ॥७॥

जो साधकों, कुल (मार्ग), अन्वय (परम्परा) के दर्शक (निदेशक) मृष्टादि अनाख्य अन्य चार महान परम्पराओं से युक्त हैं, वे आनन्दित हों, सभी श्रेष्ठकौल-मार्गानुयायी जो विभिन्न कुलों से सम्बन्धित हैं वे तथा अन्य भी जिन्होंने विशेष शाम्भवपद (शाम्भवीअवस्था) को प्राप्त कर लिया है, सभी आनन्दित हों ॥७॥

नन्दन्तु सिद्धगुरवः स्वगुरुक्रमौघा ज्येष्ठानुगाः समयिनो वटुकाः कुमार्यः ।
षड्योगिनीप्रवरवीरकुलप्रसूता नन्दन्तु भूमिपतयो द्विजसाधुलोकाः ॥८॥

सभी सिद्धगुरु, अपने गुरुक्रम से सम्बन्धित गुरजन, मुझसे ज्येष्ठसाधक, सहचरसाधक, वटुक, कुमारियाँ, छः श्रेष्ठ योगिनियाँ, कुल-प्रसूत, कौलिकवीर-साधक, राजागण, द्विज, साधु क्या समस्त लोक, आनन्दित हों ॥८॥

नन्दन्तु नीतिनिपुणा निरवद्यनिष्ठा निर्मत्सरा निरुपमा निरुपद्रवाश्च ।
नित्या निरञ्जनरता गुरवो निरीहाः शान्ताश्च शान्तमनसो हतशोकशान्ताः ॥९॥

नीतिनिपुण, निरवद्य निष्ठासम्पन्न, मत्सररहित, उपद्रवमुक्त, अनुपम, नित्य (शाश्वत), निरञ्जन के प्रति आसक्त, निरीह, शान्तस्वभाव व मन वाले गुरुजन जिनका हृदय का शोक शान्त हो चुका है, वे सभी आनन्दित हों ॥९॥

नन्दन्तु योगनिरताः कुलयोगयुक्ताः आचार्यसामयिकसाधकपुत्रकाश्च ।
गावो द्विजा युवतयो यतयः कुमार्यो धर्मे भवन्तु निरयाः गुरुभक्तियुक्ताः ॥१०॥

आचार्य, सामयिक (चक्रार्चन के सहयोगी), साधक एवं उनके पुत्रादि सभी आनन्दित हों। गौ, ब्राह्मण, युवतियाँ, यतिजन, कुमारियाँ सभी गुरुभक्तियुक्त हो धर्ममार्ग में निरत हों ॥१०॥

नन्दन्तु साधककुलान्यणिमादिनिष्ठाः
शापात् पतन्तु द्विषतां कुलयोगिनीनाम् ।
सा शाम्भवी स्फुरतु काऽपि ममद्यवस्था
यस्या गुरोश्चरणपङ्कजमेव लभ्यम् ॥११॥

अणिमादि सिद्धियों से सम्पन्न साधककुल आनन्दित हों। कुलयोगिनियों के शाप शत्रुओं पर पड़ें। मेरी किसी भी अवस्था में वह शाम्भवी, स्फुरित हो जिसमें गुरुचरण ही प्राप्तव्य रह जाय ॥११॥

याश्चक्रक्रमभूमिका वसतयो नाड़ीषु याः संस्थिताः
याः कोपद्रुमरोमकूपनिलया याः संस्थिता धातुषु ।
उच्छ्वासोर्मिमरुत्तरङ्गनिलया निःश्वासवासाश्च या-
स्ता देव्यो रिपुभक्ष्यभक्षणपरास्तृप्यन्तु कौलार्चिताः ॥१२॥

जो चक्रक्रम की भूमिका में निवास करती हैं, जो नाडियों में स्थित रहती हैं, जो शरीररूपद्रुम के रोमकूपों में अपना निवास बनाई हैं। जो सप्तधातुओं में स्थित हैं। जो उच्छवास की लहरियों में उत्पन्न मरुत् (वायु) के तरङ्गों में अपना आश्रय बनाये हुए हैं, जिन्होंने निःश्वास में अपना निवासस्थल बना रखा है। वे सभी कौलों द्वारा अर्चित, शत्रुरूपी भक्ष्य के भक्षण में लगी हुई देवियाँ, तृप्त हों ॥१२॥

या दिव्यक्रमपालिका क्षितिगता या देवतातोयगा या नित्यं
प्रथिताः प्रभाः शिखिगता या मातरिश्वाश्रया।
या व्योमामृतमण्डलामृतमया यास्सर्वगाः सर्वदा
ताः सर्वाः कुलमार्गपालनपराः शान्तिं प्रयच्छन्तु मे ॥१३॥

जो दिव्यक्रम का पालन करती हुई पृथ्वी पर स्थित, जल में स्थित देवता (देवियाँ) हैं, जो प्रथितप्रभा से युक्त अग्नि में नित्यस्थित, वायु के आश्रित, जो आकाश के अमृतमण्डल (अमृत) से युक्त हो सर्वदा, सर्वत्र गमन करने वाली देवियाँ हैं। वे सभी कुलमार्ग के पालन में तत्पर श्रेष्ठदेवियाँ, मुझे शान्ति प्रदान करें ॥१३॥

ऊर्ध्वं ब्रह्माण्डतो वा दिवि गगनतले भूतले निष्कले वा
पाताले वा वने वा पवनसलिलयोर्यत्रकुत्रस्थिता वा।
क्षेत्रे पीठोपपीठादिषु च कृतपदा धूपदीपालिमांसैः
प्रीताः द्रव्यः सदा नः शुभबलिविधिना पान्तु वीरेन्द्रवन्द्याः ॥१४॥

जो ब्रह्माण्ड से ऊपर, स्वर्ग, आकाश, समस्त पृथ्वीतल, पाताल, वन, वायु, जल या जहाँ-कहीं भी स्थित हैं। जिन्होंने पीठ, उपपीठ, क्षेत्रादि में अपना स्थान बना रखा हैं। जो धूप, दीप, मांस, शुभ बलिविधि से श्रेष्ठ वीर साधकों से वन्दित एवं पूजित होने पर प्रसन्न होती हैं, ऐसी देवियाँ सदैव हमारी रक्षा करें ॥१४॥

ब्रह्माश्रीशेषदुर्गागुहवटुकगणा भैरवाः क्षेत्रपालाः
वेतालादित्यरुद्रग्रहवसुमनुसिद्धाप्सरो गुह्यकाद्याः।
भूता गन्धर्वविद्याधरऋषिपितृगणासुराहि प्रभूता
योगीशाश्चारणाः किंपुरुषमुनिसुराश्चक्रग्राः पान्तु सर्वे ॥१५॥

ब्रह्मा, श्रीदेवी, शेष, दुर्गा, गुह (स्कन्द), वटुकगण, भैरव, क्षेत्रपाल, वेताल, द्वादशआदित्य, एकादशरुद्र, नवग्रह, अष्टवसु, चौदह मनु, सिद्ध, अप्सराएँ, गुह्यक, भूत, गन्धर्व, विद्याधर, ऋषी, पितृगण और प्रभूत देवगण, योगीश, चारण, किम्पुरुष (किन्नर), मुनिः और चक्रार्चन में उपस्थित देव (वीर) गण, उपर्युक्त सभी तत्त्व मेरी रक्षा करें ॥१५॥

सत्यं चेद् गुरुवाक्यमेव पितृदेवाः शेषवद्योगिनी
प्रीतिश्चेत् परदेवताश्च यदि चेत् वेदाः प्रमाणं च चेत्।
शाक्तेयं यदि दर्शनं भवति चेदाज्ञेयमेषाऽस्ति चेत्
सन्त्यत्रापि च कौलिकाश्च यदि चेत् स्यान्मे जपः सर्वदा ॥१६॥

यदि गुरुवाक्य सत्य है, यदि पितरों, देवता सहित योगिनियाँ प्रसन्न तथा शेषवत् स्थिरचित हैं। यदि पर देवता में प्रेम है। यदि वेद प्रमाणों की सार्थकता हैं। यदि शाक्त-दर्शन का आस्तित्त्व है, उनकी अज्ञेयता और रहस्यात्मकता यदि है, यदि इस धराधाम में कौलिकों का आस्तित्त्व है तो मेरी सर्वत्र जय हो ॥१६॥

तृप्यन्तु मातरः सर्वाः समुद्राः सगणाधिपाः।
योगिन्यः क्षेत्रपालाश्च मम देहे व्यवस्थिताः ॥१७॥

मेरे शरीर में स्थित सभी माताएं (मातृकाएँ), मुद्रा, गणपति, योगिनियों, क्षेत्रपालों के सहित तृप्त हों ॥१७॥

शिवाद्यवनिपर्यन्तं ब्रह्मादिस्तम्बसंयुतम्।
कालाग्न्यादिशिवान्तं च जगद्यज्ञेन तृप्यतु ॥१८॥

समस्त पृथ्वी पर ब्रह्मादि से युक्त ब्रह्मादिस्तम्बायुक्त कालाग्नि से लेकर शिवपर्यन्त सम्पूर्ण जगत्, मेरे इस यज्ञ से तृप्त हो ॥१८॥

इति शान्ति स्तोत्रं। शान्ति स्तोत्र सम्पूर्ण हुआ।

अथ वीरवन्दनम्

पठित्वेदं नमेद् वीरान् वीरवन्दनमाचरेत्।
स्तुवन् वीरान् नमेद् वीरान् मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये पूजाविधिर्नाम षष्ठः पटलः ॥६॥

शान्तिस्तोत्रपठन के बाद वीरवन्दनमन्त्र से वीरों को प्रणाम करे। इसे पढ़कर वीरों को नमस्कार कर वीरवन्दन का कार्य सम्पन्न करे। स्तुतिपूर्वक वीरों को नमस्कार करे, ऐसा करने से मन्त्रसिद्धि होती है।

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के पूजाविधि नामक षष्ठपटल
की कल्याणीटीका सम्पन्न हुई ।।६।।



सप्तमपटलः
कवचोद्धार

(इस अध्याय के ॐ ह्रीं क्लीं.....भुवनेश्वरी तक के २१ श्लोकों में भुवनेश्वरी-कवच का वर्णन है। जिसके ह्रीं क्लीं.....शरीरं भुवनेश्वरी तक के १२ श्लोकों में भुवनेश्वरी- देवी के विविधमन्त्रों से साधक द्वारा अपने शरीर की साङ्गोपाङ्ग रक्षा की प्रार्थना की गई है। यहाँ ॐ ह्रीं श्रीं से शिवा पर्यन्त ६ श्लोकों में मन्त्रों से विविधदिशाओं से तथा प्रभाते पातु से ह्रीं श्रीं भुवनेश्वरी पर्यन्त ३ श्लोकों में विभिन्न कालखण्डों में रक्षा की प्रार्थना की गई है।)

श्रीदेव्युवाच

भगवन् परमेशान सर्वागमविशारद्।
कवचं भुवनेश्वर्याः कथयस्व महेश्वर ॥१॥

हे महेश्वर ! हे भगवन् ! हे परमेश्वर ! सभी आगमों के विशारद (विशिष्टज्ञाता) ! आप मुझसे भुवनेश्वरीकवच के विषय में कहिए ॥१॥

श्रीभैरवउवाच

शृणु देवि महेशानि! कवचं सर्वकामदम्।
त्रैलोक्यमोहनं नाम सर्वेप्सितफलप्रदम् ॥२॥

श्रीभैरव बोले–हे देवि ! हे महेशानि ! सभी कामनाओं को प्रदान करनेवाले, सबप्रकार का और सबको इच्छितफल देने वाला त्रैलोक्यमोहननामक कवच सुनो ॥२॥

विनियोगः—ॐ अस्य श्रीत्रैलोक्यमोहनकवचस्य श्रीसदाशिवऋषिः, विराट्छन्दः, श्रीभुवनेश्वरीदेवता, चतुर्वर्गसिद्ध्यर्थं कवचपाठे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यासः—श्रीसदाशिवऋषये नमः शिरसि, विराट्छन्दसे नमः मुखे। श्रीभुवनेश्वरीदेवतायै नमः हृदि। चतुर्वर्गसिद्ध्यर्थं कवचपाठे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

ॐ ह्रीं क्लीं मे शिरः पातु श्रीं फट् पातु ललाटकम्।
सिद्धपञ्चाक्षरी पायान्नेत्रे मे भुवनेश्वरी ॥३॥

श्रीं क्लीं ह्रीं मे श्रुतिः पातु नमः पातुश्च नासिकाम्।
देवी षडक्षरी पातु वदनं मुण्डभूषणा ॥४॥
ॐ ह्रीं श्रीं ऐं गलं पातु जिह्वा पायान्महेश्वरी।
ऐं स्कन्धौ पातु मे देवी महात्रिभुवनेश्वरी ॥५॥
हूं घंटा मे सदा पातु देव्येकाक्षररूपिणी।
ऐं ह्रीं श्रीं हूं तु फट् पायादीश्वरी मे भुजद्वयम् ॥६॥
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं फट् पायाद्भुवनेशी स्तनद्वयम्।
ह्रां ह्रीं ऐं फट् महामाया देवी च हृदयं मम ॥७॥
ऐं ह्रीं श्रीं हूं तु फट् पायात्पार्श्वौ कामस्वरूपिणी।
ॐ ह्री क्लीं ऐं नमः पायात्कुक्षिं महाषडक्षरी ॥८॥
ऐं सौः ऐं ऐं क्लीं फट् स्वाहा कटिदेशे सदावतु।
अष्टाक्षरीमहाविद्या देवेशी भुवनेश्वरी ॥९॥
ॐ ह्रीं ह्रौं ऐं श्रीं ह्रीं फट् पायान्मे गुह्यस्थलम् सदा।
षडक्षरीमहाविद्या साक्षाद्ब्रह्मस्वरूपिणी ॥१०॥
ऐं ह्रां ह्रौं हूं नमोदेव्यै देवि सर्व पदं ततः।
ॐ दुस्तरं पदं तारय पदं तारय प्रणवद्वयम् ॥११॥
स्वाहा इति महाविद्या जानुनि मे सदावतु।
ऐं सौः ॐ ऐं क्लीं फट् स्वाहा जंघेऽव्याद्भुवनेश्वरी ॥१२॥
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं फट् पायात्पादौ मे भुवनेश्वरी।
ॐ ॐ ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं क्लीं क्लीं ऐं ऐं सौः सौः वद वद।
वाग्वादिनीति च देवि विद्या या विश्वव्यापिनी ॥१३॥
सौः सौः सौः ऐं ऐं ऐं क्लीं क्लीं क्लीं श्रीं श्रीं श्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ॐ।
ॐ ॐ चतुर्दशात्मिका विद्या पायात्तु बाहु मे ॥१४॥
सकलं सर्वभीतिभ्यः शरीरं भुवनेश्वरी।
ॐ ह्रीं श्रीं इन्द्रदिग्भागे पायान्मे चापराजिता ॥१५॥
स्त्रीं ऐं ह्रीं विजया पायादिन्दुमदग्निदिक्स्थले।
ॐ श्रीं सौः क्लीं जया पातु याम्यां मां कवचान्वितम् ॥१६॥
ह्रीं ह्रीं ऐं सौः हसौः पायान्नैर्ऋतिर्मां परात्मिका।
ॐ श्रीं श्रीं ह्रीं सदा पायात्पश्चिमे ब्रह्मरूपिणी ॥१७॥
ॐ ह्रां सौः मां भयाद्रक्षेद्वायव्यां मन्त्ररूपिणी।
ऐं क्लीं श्रीं सौः सदाव्यान्मां कौवेर्यां नगनन्दिनी ॥१८॥
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महादेवी ऐशान्यां पातु नित्यशः।
ॐ ह्रीं मन्त्रमयीविद्या पायादूर्ध्वं सुरेश्वरी ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं मां पायादधस्तथा भुवनेश्वरी ।
एवं दशदिशोरक्षेत्सर्वमन्त्रमयी शिवा ॥२०॥
प्रभाते पातु चामुण्डा श्रीं क्लीं ऐं सौः स्वरूपिणी ।
मध्याह्ने ऽव्यान्मामम्बा श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः स्वरूपिणी ॥२१॥
सायं पायादुमादेवी ऐं ह्रीं क्लीं सौः स्वरूपिणी ।
निशादौ पातु रुद्राणी ॐ क्लीं क्रीं सौः स्वरूपिणी ॥२२॥
निशीथे पातु ब्रह्माणी क्रीं हूं ह्रीं ह्रीं स्वरूपिणी ।
निशान्ते वैष्णवी पायादोंमैंह्रीं क्लीं स्वरूपिणी ॥२३॥
सर्वकाले च मां पायादों ह्रीं श्रीं भुवनेश्वरी ॥२४॥
एषा विद्या मया गुप्ता तन्त्रेभ्यश्चापि साम्प्रतम् ।
देवेशि कथिता तुभ्यं कवचेच्छा त्वयि प्रिये ॥२५॥

हे देवेशि ! हे प्रिये ! यह तन्त्रों में जो गोपनीयविद्या (कवच), मेरे द्वारा गुप्त रखी गई थी। वही तुम्हारे द्वारा इच्छा व्यक्त किए जाने पर तुमसे अब कही गई है ॥२५॥

इति ते कथितं देवि गुह्याद्गुह्यतरं परम् ।
त्रैलोक्यमोहनं नाम कवचं मन्त्रविग्रहम् ॥२६॥

हे भद्रे ! हे देवि ! यह गुह्य से भी गुह्य, अत्यन्त श्रेष्ठ, मन्त्र-विग्रह-मय, त्रैलोक्यमोहन नामक, केवल ब्रह्मरूप, यह कवच तुमसे कहा गया ॥२६॥

ब्रह्मविद्यामयं भद्रे केवलं ब्रह्मरूपिणम् ।
मन्त्रविद्यामयं चैव कवचं मन्मुखोदितम् ॥२७॥
गुरुमभ्यर्च्य विधिवत्कवचं धारयेद्यदि ।
साधको वै यथाध्यानं तत्क्षणाद्भैरवो भवेत् ।
सर्वपापविनिर्मुक्तः कुलकोटिसमुद्धरेत् ॥२८॥
गुरुः स्यात्सर्वविद्यासुह्यधिकारो जपादिषु ॥२९॥

हे भद्रे ! यदि साधक मेरे मुख से कहे गये, मन्त्रविद्यामय इस कवच को जो ब्रह्मविद्यामय तथा केवल ब्रह्मस्वरुप है, गुरु की पूजा कर विधिवत् धारण करे तो वह तत्क्षण सभी पापें से विनिर्मुक्त हो, ध्यान के अनुरूप भैरवस्वरूप हो जाता है। वह अपने करोड़ों कुल का उद्धार कर लेता है। यहाँ कुल शब्द वंशज अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। तथा सभी विद्याओं में गुरु एवं उनके जपदिक का अधिकारी हो जाता है ॥२७-२९॥

शतमष्टोतरं चास्य पुरश्चर्या विधिः स्मृता ॥३०॥

इसकी पुरश्चर्याविधि एकसौआठ पाठ करने की कही गई है ॥३०॥

शतमष्टोतरं जप्त्वा तावद्धोमादिकं तथा।
त्रैलोक्ये विचरेद्वीरो गणनाथो यथा स्वयम् ॥३१॥

वीरसाधक एक सौ आठ बार इस कवच का पाठ कर होमादिक सम्पन्न करे तत्पश्चात् स्वयं गणों के अधिपति के समान त्रैलोक्य में विचरण करे ॥३१॥

गद्यपद्यमयीवाणी भवेद्गङ्गा प्रवाहवत्।
पुष्पाञ्जल्याष्टकं दत्वा मूलेनैव पठेत्सकृत् ॥३२॥

जो मूलमन्त्र से आठपुष्पाञ्जलि अर्पण कर, एक बार इस कवच का पाठ करता है, उसकी गद्यपद्यमयीवाणी, गङ्गा के प्रवाह की भाँति अजस्र हो जाती है ॥३२॥

श्रीदेव्युवाच

भगवन्करुणाम्भोधे कीदृशं मन्त्रमुत्तमम्।
मूलकं भुवनेश्वर्याः कृपया वक्तुमर्हसि ॥३३॥

श्रीदेवी बोली—हे भगवन् ! हे करुणा के सागर ! भुवनेश्वरी का मूलमन्त्र किस प्रकार का होता है ? कृपा करके मुझसे कहें ॥३३॥

भैरवउवाच

शृणु देविप्रवक्ष्येऽहमुद्धारं मन्त्रविग्रहम्।
देवेशि भुवनेश्वर्या गोप्याद्गोप्यतमं कुरु ॥३४॥

भैरवबोले–हे देवि ! हे देवेशि ! मैं भुवनेश्वरी के मन्त्रविग्रह के उद्धारक्रम को कहता हूँ, तुम इसे गोप्य से भी गोप्य, अत्यन्त गोपनीय करो ॥३४॥

प्रणवं सकला लक्ष्मीः कामं वाग्भवमेव च।
शरश्च भुवनेश्वर्यै मध्येऽन्तश्च नमः इतिः।
प्रोक्तोऽयं भुवनेश्वर्या मन्त्रं त्रयोदशाक्षरः ॥३५॥

इत्युद्धारः।

प्रणव (ॐ), सकला (ह्रीं), लक्ष्मी (श्रीं), काम (क्लीं), वाग्भव (ऐं), शर (सौः) और मध्य में भुवनेश्वरी तथा अन्त में नमः युक्त तेरह अक्षरों वाला भुवनेश्वरीमन्त्र कहा गया है ॥३५॥

प्रकाशम्—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं सौः भुवनेश्वर्यै नमः। इति मूलम्।

अनेन मन्त्रेण नरेश्वरो यो
ध्यायेद्धृदब्जे भुवनेश्वरीं ताम्।
स याति भूपेश्वरतां च भूमौ
मृतोभवेत्सस्त्रिदिवे सुरेशः ॥३६॥

इस मन्त्र से जो राजा, उस भुवनेश्वरीदेवी का अपने हृदयकमल में ध्यान करता है, वह पृथ्वी पर राजाओं का भी राजा होता है तथा मृत्यु के पश्चात् स्वर्ग में देवताओं का स्वामी होता है ॥३६॥

भूर्जे विलिख्य गुटिकां स्वर्णस्थां धारयेद्यदि ।
पुरुषो दक्षिणे वाहौ योषिद्वाम करे तथा ।
सर्वसिद्धियुतो भूत्वा विचरेद्भैरवो यथा ॥३७॥

यदि भोजपत्र पर लिखकर सोने की गुटिकागत कर इसे यन्त्ररूप में जो पुरुष अपने दाहिनी तथा स्त्री बाईं भुजा में धारण करते हैं वे सभी प्रकार की सिद्धियों से युक्त हो भैरव या भैरवी के समान विचरण करते हैं ॥३७॥

तद्गात्रं प्राप्य शस्त्राणि ब्रह्मास्त्रादीनि पार्वती ।
अल्पानि कुसुमानीव भवन्ति सुखदानि च ॥३८॥
तस्य गेहे चिरं लक्ष्मीः वाणी च निवसे ध्रुवम् ॥३९॥

हे पार्वति ! उसके शरीर का स्पर्श प्राप्त कर ब्रह्मास्त्र आदि अस्त्र-शस्त्र, पुष्पों के समान सूक्ष्म और सुखद हो जाते हैं । उसके घर में निश्चित्‌रूप से चिरकाल तक लक्ष्मी एवं सरस्वती का वास होता है ॥३८-३९॥

इदं कवचमज्ञात्वा सयन्त्रं मन्त्रविग्रहम् ।
यो भजेदधमो मर्त्यो देवेशि भुवनेश्वरीम् ।
अल्पायुर्निर्बलो मूर्खो भवत्येव न संशयः ॥४०॥

हे देवेशि ! यन्त्रसहित, मन्त्रस्वरूप इस कवच को बिना जाने जो अधमप्राणी (मनुष्य), भुवनेश्वरीदेवी का भजन करता है, वह अल्पायु, निर्बल, एवं मूर्ख होता ही है । इसमें कोई सन्देह नहीं है ॥४०॥

श्रीदेव्युवाच

कीदृशं भुवनेश्वर्या यन्त्रमन्त्रमयं महत् ।
यं दृष्ट्वा लभते मुक्ति पूजित्वा मानवेश्वरः ॥४१॥

श्रीदेवी बोलीं—भुवनेश्वरीदेवी का मन्त्रमय महान् यन्त्रस्वरूप कैसा है, जिसे देख कर और जिसकी पूजा कर राजा, मुक्ति प्राप्त कर लेता है ॥४१॥

भैरव उवाच

ब्रवीमीमं यथा तुभ्यं गोपनीयं प्रयत्नतः ।
यस्य कस्य न दातव्यं दत्वा कुष्टी भवेच्छिवे ॥४२॥

श्रीभैरव बोले—हे शिवे ! इस (रहस्य) को जैसा मैं तुमसे कहता हूँ, प्रयत्न-पूर्वक गोपनीय रखना चाहिए । इसे जिस किसी को नहीं देना (बताना) चाहिए । इसे देने वाला कुष्ठी (कोढ़ी) होता है ॥४२॥

यन्त्र विधान

त्रिकोणं पूर्वमुद्धृत्य ह्यधस्थाद्वीरवन्दिते।
ऊर्ध्वं च तादृशं कुर्यात्त्रिकोणं च पुनः क्षिपेत् ॥४३॥
अधस्तात्कोण कुहरादूर्ध्वं कोणे समाक्षिपेत्।
उत्थाप्योर्ध्वं त्रिकोणञ्च यन्त्रमध्ये विनिक्षिपेत् ॥४४॥
पुनस्त्रिकोणमध्येतु बिन्दुस्थानं समाचरेत्।
यन्त्रान्ते चतुरस्त्राभिः मयाभिः सहितं चरेत् ॥४५॥
लताभिस्सहिता रेखाश्चतस्त्रास्त्रिः समाचरेत्।
बीजाक्षरान्विभज्यैवं यन्त्रं प्रोक्तं मया तव ॥४६॥

हे वीरों द्वारा वन्दनीया देवि ! यन्त्रविधान में साधक को सर्वप्रथम एक अधोमुख त्रिकोण बनाना चाहिए। तब वह उसी प्रकार एक ऊर्ध्वमुख त्रिकोण बनाए।

निचले कोण-कुहर को ऊपरी कोण पर स्थापित करे इस प्रकार से बने ऊर्ध्व-त्रिकोण (अधो युक्त ऊर्ध्व त्रिकोण अर्थात् षट्कोण) को यन्त्र के मध्य में स्थापित करे।

तब इस त्रिकोण (द्वय) के मध्य में बिन्दुस्थान का निर्धारण करे। यन्त्र के अन्त में शिवशक्तिमयी चार रेखाओं वाले तीन चतुरस्त्र बनाए।

अन्त में उसमें आगे बताये अनुसार बीजों को रखे। यह मन्त्रमय यन्त्रविधान तुमसे कहा गया ॥४३-४६॥

बिन्दोरूर्ध्वञ्च प्रणवं तत् ऊर्ध्वं परा न्यसेत्।
तत् ऊर्ध्वं च कमलां सव्ये च मदनं न्यसेत् ॥४७॥

बिन्दु के ऊपर प्रणव और उसके ऊपर परा (ह्रीं), उसके भी ऊपर कमला (श्रीं) तथा बाईं ओर मदन (क्लीं) का न्यास करे ॥४७॥

वामेऽपि चारणं प्रोक्तं पुनः सव्ये शरस्मृता।
वामेऽपि च नमो वर्णं नान्यः पर्वतनन्दिनि ॥४८॥
पर नाम्नों परं वर्णं पुनः वामेऽपि तादृशम्।
पुनर्नामाक्षरं सव्ये तथा वामेऽपि विन्यसेत् ॥४९॥

बाईं ओर चारण (ऐं), दाहिनी ओर शर (सौः) रखे। हे पर्वतनन्दिनि ! बाईं ओर नमः तथा दाई ओर भुवनेश्वरी नाम लिखे ॥४८-४९॥

बिन्दोरधस्थादपरं तदधस्तात्स्मृतं परम्।
अस्मिन्बीजाक्षराण्येवं विभज्य भुवनेश्वरीम् ॥५०॥
पूजयेत्साधको धीमान् धारयेत्साधकोत्तमः।
कवचं यन्त्रसंयुक्तं सर्वमन्त्रं मयं महत् ॥५१॥

बिन्दु के नीचे अपर उसके भी नीचे पर कहा गया है । उपर्युक्त क्रम में भुवनेश्वरी के बीजाक्षरों का न्यास करके साधक इस मन्त्रयुक्त, मन्त्रमय, महान् कवच का पूजन कर उसे धारण करे ॥५०-५१॥

सम्पूज्य कवचं यन्त्रं धृत्वापि साधकेश्वरः ।
त्रैलोक्ये विचरेद्वीरो यथैवाहं तथैव सः ॥५२॥

श्रेष्ठसाधक इन कवच तथा यन्त्र की पूजा कर, उन्हें धारण कर वीर भाव से जैसे मैं विचरण करता हूँ वैसे ही त्रिलोक में विचरण करे ॥५२॥

इदं रहस्यपरमं भक्तया तव मयोदितम् ।
यस्य कस्य न वक्तव्यं सत्यं जानीहि सुव्रते ॥५३॥

हे सुन्दर व्रतों वाली ! यह परमरहस्य तुम्हारी भक्तिवश मेरे द्वारा कहा गया है । इसे जिस-किसी से नहीं कहना चाहिए, यह सत्य जानो ॥५३॥

कर्मणा मनसा वाचा सत्यं सत्यं सुरेश्वरि ।
रहस्यं भुवनेश्वर्या न देयं यस्य कस्यचित् ॥५४॥

मनसा-वाचा-कर्मणा यह अत्यन्त सत्य है कि भुवनेश्वरी के इस रहस्य को जिस-किसी को नहीं देना चाहिए ॥५४॥

दद्याच्छिष्याय शान्ताय गुरुभक्तिपराय च ।
लोभमोहविहीनाय देवी भक्तियुताय च ॥५५॥
सत्यं सत्यं पुनः सत्यं सत्यं जानीहि पार्वति ॥५६॥

हे पार्वति ! यह सत्य से भी सत्य, परमसत्य जानो कि इसे गुरुभक्तिपरायण, शान्त, लोभ-मोहविहीन, देवीभक्त शिष्य को ही प्रदान करे ॥५५-५६॥

इत्येषः पटलो देवि गोपनीयं महेश्वरि ।
कवचोद्धारको नाम साधकेष्टफलप्रदः ॥५७॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये कवचोद्धारनाम सप्तमः पटलः ॥७॥

हे देवि ! हे महेश्वरि ! कवचोद्धारनामक साधकों को अभीष्टफल देने वाला यह गोपनीयपटल सम्पूर्ण हुआ ॥५७॥

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के कवचोद्धार नामक सप्तमपटल
की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ।।७।।



अष्टमपटलः

मन्त्रगर्भसहस्त्रनाम

भैरवउवाच

देवि तुष्टोऽस्मि सेवाभिस्त्वद्रूपेण च भाषया।
मनोभिलषितं किञ्चिद्वरं वरय सुब्रते ॥१॥

श्रीभैरवबोले—हे सुन्दरव्रतोंवाली ! हे देवि ! मैं तुम्हारी इस भाषागत सेवा (संवादप्रक्रिया) से सन्तुष्ट हूँ। तुम्हें यदि कुछ मनोभिलषित हो तो वर मांग लो ॥१॥

श्रीदेव्युवाच

तुष्टोऽसि यदि मे देव वरयोग्यास्म्यहं यदि।
वद मे भुवनेश्वर्या मन्त्रनामसहस्त्रकम् ॥२॥

श्रीदेवीबोलीं–हे देव ! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं और यदि मैं आपके वर देने योग्य हूँ तो मुझसे भुवनेश्वरी देवी के मन्त्रात्मकसहस्त्रनाम को कहिए ॥२॥

भैरवउवाच

तवभक्तया ब्रवीम्यद्य देव्या नाम सहस्त्रकम्।
मन्त्रगर्भं चतुर्वर्गफलदं मन्त्रिणां कलौ।
गोपनीयं सदा भक्तया साधकैश्च सुसिद्धये ॥३॥

श्रीभैरव बोले—हे देवेशि ! तुम्हारी भक्ति से सन्तुष्ट हो आज मैं तुमसे देवी के उस सहस्त्रनाम को कहूँगा जो मन्त्रयुक्त है तथा कलियुग में मन्त्रसाधकों को चतुर्वर्ग-फलप्रदान करने वाला है ॥३॥

सर्वरोगप्रशमनं सर्वशत्रुभयापहम्।
सर्वोत्पातप्रशमनं सर्वदारिद्र्यनाशनम्।
यशस्करं श्रीकरं च पुत्रपौत्रविवर्द्धनम् ॥४॥
देवेशि वेत्सि त्वद्भक्तया गोपनीयं प्रयत्नतः ॥५॥

सदैव सुन्दरसिद्धिप्राप्तिहेतु साधकों द्वारा भक्तिपूर्वक गोपनीय है। यह सभी रोगों का शमन करने वाला, सभी शत्रुओं के लिए भयकारक, सभी उत्पातों को दूर करने वाला, सभी प्रकार की दरिद्रता का नाश करनेवाला है। यह यश एवं श्री देने

बिन्दु के नीचे अपर उसके भी नीचे पर कहा गया है। उपर्युक्त क्रम में भुवनेश्वरी के बीजाक्षरों का न्यास करके साधक इस मन्त्रयुक्त, मन्त्रमय, महान् कवच का पूजन कर उसे धारण करे ॥५०-५१॥

सम्पूज्य कवचं यन्त्रं धृत्वापि साधकेश्वरः।
त्रैलोक्ये विचरेद्वीरो यथैवाहं तथैव सः ॥५२॥

श्रेष्ठसाधक इन कवच तथा यन्त्र की पूजा कर, उन्हें धारण कर वीर भाव से जैसे मैं विचरण करता हूँ वैसे ही त्रिलोक में विचरण करे ॥५२॥

इदं रहस्यपरमं भक्तया तव मयोदितम्।
यस्य कस्य न वक्तव्यं सत्यं जानीहि सुव्रते ॥५३॥

हे सुन्दर व्रतों वाली ! यह परमरहस्य तुम्हारी भक्तिवश मेरे द्वारा कहा गया है। इसे जिस-किसी से नहीं कहना चाहिए, यह सत्य जानो ॥५३॥

कर्मणा मनसा वाचा सत्यं सत्यं सुरेश्वरि।
रहस्यं भुवनेश्वर्या न देयं यस्य कस्यचित् ॥५४॥

मनसा-वाचा-कर्मणा यह अत्यन्त सत्य है कि भुवनेश्वरी के इस रहस्य को जिस-किसी को नहीं देना चाहिए ॥५४॥

दद्याच्छिष्याय शान्ताय गुरुभक्तिपराय च।
लोभमोहविहीनाय देवी भक्तियुताय च ॥५५॥
सत्यं सत्यं पुनः सत्यं सत्यं जानीहि पार्वति ॥५६॥

हे पार्वति ! यह सत्य से भी सत्य, परमसत्य जानो कि इसे गुरुभक्तिपरायण, शान्त, लोभ-मोहविहीन, देवीभक्त शिष्य को ही प्रदान करे ॥५५-५६॥

इत्येषः पटलो देवि गोपनीयं महेश्वरि।
कवचोद्धारको नाम साधकेष्टफलप्रदः ॥५७॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये कवचोद्धारनाम सप्तमः पटलः ॥७॥

हे देवि ! हे महेश्वरि ! कवचोद्धारनामक साधकों को अभीष्टफल देने वाला यह गोपनीयपटल सम्पूर्ण हुआ ॥५७॥

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के कवचोद्धार नामक सप्तमपटल की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ॥७॥



अष्टमपटलः

मन्त्रगर्भसहस्रनाम

भैरवउवाच

देवि तुष्टोऽस्मि सेवाभिस्त्वद्रूपेण च भाषया।
मनोभिलषितं किञ्चिद्वरं वरय सुब्रते ॥१॥

श्रीभैरवबोले—हे सुन्दरव्रतोंवाली ! हे देवि ! मैं तुम्हारी इस भाषागत सेवा (संवादप्रक्रिया) से सन्तुष्ट हूँ। तुम्हें यदि कुछ मनोभिलषित हो तो वर मांग लो ॥१॥

श्रीदेव्युवाच

तुष्टोऽसि यदि मे देव वरयोग्यास्म्यहं यदि।
वद मे भुवनेश्वर्या मन्त्रनामसहस्रकम् ॥२॥

श्रीदेवीबोलीं–हे देव ! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं और यदि मैं आपके वर देने योग्य हूँ तो मुझसे भुवनेश्वरी देवी के मन्त्रात्मकसहस्रनाम को कहिए ॥२॥

भैरवउवाच

तवभक्तया ब्रवीम्यद्य देव्या नाम सहस्रकम्।
मन्त्रगर्भं चतुर्वर्गफलदं मन्त्रिणां कलौ।
गोपनीयं सदा भक्तया साधकैश्च सुसिद्धये ॥३॥

श्रीभैरव बोले—हे देवेशि ! तुम्हारी भक्ति से सन्तुष्ट हो आज मैं तुमसे देवी के उस सहस्रनाम को कहूँगा जो मन्त्रयुक्त है तथा कलियुग में मन्त्रसाधकों को चतुर्वर्ग-फलप्रदान करने वाला है ॥३॥

सर्वरोगप्रशमनं सर्वशत्रुभयापहम्।
सर्वोत्पातप्रशमनं सर्वदारिद्र्यनाशनम्।
यशस्करं श्रीकरं च पुत्रपौत्रविवर्द्धनम् ॥४॥
देवेशि वेत्सि त्वद्भक्तया गोपनीयं प्रयत्नतः ॥५॥

सदैव सुन्दरसिद्धिप्राप्तिहेतु साधकों द्वारा भक्तिपूर्वक गोपनीय है। यह सभी रोगों का शमन करने वाला, सभी शत्रुओं के लिए भयकारक, सभी उत्पातों को दूर करने वाला, सभी प्रकार की दरिद्रता का नाश करनेवाला है। यह यश एवं श्री देने

वाला और पुत्र-पौत्र बढ़ाने वाला है। अपनी भक्ति के कारण तुम इसे मेरे द्वारा जान पा रही हो। यह प्रयत्नपूर्वक गोपनीय है ॥४-५॥

अस्य नाम्नां सहस्रस्य ऋषिः भैरवउच्यते।
पङ्क्तिश्छन्दः समाख्याता देवताभुवनेश्वरी ॥६॥
ह्रीं बीजं श्रीं च शक्तिः स्यात् क्लीं कीलकमुदाहृतम्।
मनोभिलाषसिद्ध्यर्थं विनियोगः प्रकीर्तितः ॥७॥

इस सहस्रनाम के ऋषि भैरव, छन्द-पक्ति, देवता भुवनेश्वरी, बीज-ह्रीं, शक्ति-श्रीं तथा कीलक-क्लीं कहे गए हैं। मनोभिलाषसिद्धि में इसका विनियोग कहा गया है।

ऋष्यादिन्यासः—श्रीभैरवऋषये नमः शिरसि, पंक्तिश्छन्दसे नमः मुखे, श्रीभुवनेश्वरीदेवतायै नमः हृदि, ह्रीं बीजाय नमः गुह्ये, श्री शक्तये नमः नाभौ, क्लीं कीलकाय नमः पादयोः मनोऽभिलाषसिद्ध्यर्थं पाठे विनियोगाय नमः सर्वांगे॥

उपर्युक्त विनियोग एवं ऋष्यादिन्यास करके सहस्रनाम पाठ करे।

ॐ ह्रीं श्रीं जगदीशानि ह्रीं श्रीं बीजा जगत्प्रिया।
ॐ श्रीं जयप्रदा ॐ ह्रीं जया ह्रीं जयवर्द्धिनी ॥८॥
ॐ ह्रीं श्रीं वां जगन्माता श्रीं क्लीं जगद्वरप्रदा।
ॐ श्रीं जुं जटिनी ह्रीं क्लीं जयदा श्रीं जगंधरा ॥९॥
ॐ क्लीं ज्योतिष्मती ॐ जुं जननी श्रीं जरातुरा।
ॐ स्त्रीं जुं जगतीं ह्रीं श्रीं जप्या ॐ जगदाश्रया ॥१०॥
ॐ श्रीं जुं सः जगन्माता ॐ जुं जगत्क्षयं करी।
ॐ श्रीं क्लीं जानकी स्वाहा श्रीं क्लीं ह्रीं जातरूपिणी ॥११॥
ॐ श्रीं क्लीं जाप्यफलदा ॐ जूं सः जनवल्लभा।
ॐ श्रीं क्लीं जननीतिज्ञा ॐ श्रीं जनत्रयेष्टदा ॥१२॥
ॐ क्लीं कमलपत्राक्षी ॐ श्रीं क्लीं ह्रीं च कामिनी।
ॐ गूं घोररवा ॐ श्रीं घोररूपा ह्सौः गतिः ॥१३॥
ॐ गं गणेश्वरी ॐ श्रीं शिववामाङ्गवासिनी।
ॐ श्रीं शिवेष्टदा स्वाहा ॐ श्रीं शीतातपप्रिया ॥१४॥
ॐ श्रीं गूं गणमाता च ॐ श्रीं क्लीं गुणिरागिणी।
ॐ श्रीं गणेशमाता च ॐ श्रीं शङ्करवल्लभा ॥१५॥
ॐ श्रीं क्लीं शीतलाङ्गी श्रीं शीतला श्रीं शिवेश्वरी।
ॐ श्रीं क्लीं ग्लौं गजराजस्था ॐ श्रीं गीं गौतमी तथा ॥१६॥

ॐ घां घुरघुरनादा च ॐ गीं गीतप्रिया ह्सौः ।
घरिणी गीं घटान्तस्था ॐ गीं गन्धर्वसेविता ॥१७॥
ॐ गौं श्रीं गोपति स्वाहा ॐ गीं गौं ॐ गणप्रिया ।
ॐ गीं गोष्ठी ह्सौः गोप्या ॐ गीं घर्मांशुलोचना ॥१८॥
ॐ श्रीं गंत्री हसौः घंटां ॐ घं घंटारवाकुला ।
ॐ घ्रीं श्रीं घोररूपा च ॐ गीं श्रीं गरुडी ह्सौः ॥१९॥
गणया गीं ह्सौः गुर्वी ॐ श्रीं घोरद्युतिस्तथा ।
ॐ श्रीं गीं गणगन्धर्वसेविताङ्गी गरीयसी ॥२०॥
ॐ श्रीं गाथ ह्सौः गोप्त्री ॐ गीं गणकसेविता ।
ॐ श्रीं गुणमति स्वाहा श्रीं क्लीं गौरी ह्सौः गदा ॥२१॥
ॐ श्रीं गीं गौररूपा च ॐ गीं गौरस्वरा तथा ।
ॐ श्रीं गीं क्लीं गदाहस्ता ॐ गीं गोदा ह्सौः पयः ॥२२॥
ॐ श्रीं क्लीं गम्यरूपा च ॐ अगम्या ह्सौःवनम् ।
ॐ श्रीं गीं घोरवदना घोराकारा ह्सौः पयः ॥२३॥
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं कोमलाङ्गी च ॐ क्रीं कालक्षयंकरी ।
ॐ क्रीं कर्पटहस्ता च क्रीं हूं कादम्बरी ह्सौः ॥२४॥
क्रीं श्रीं कनकवर्णा च ॐ क्रीं कनकभूषणा ।
ॐ क्रीं काली ह्सौः कान्ता क्रीं हूं कारुण्यरूपिणी ॥२५॥
क्रीं श्रीं कूटप्रिया क्रीं हूं त्रिकूटा क्रीं कुलेश्वरी ।
ॐ क्रीं कम्बलवस्त्रा च क्रीं पीताम्बरसेविता ॥२६॥
क्रीं श्रीं कुल्या ह्सौः कीर्तिः क्रीं श्रीं क्लीं क्लेशहारिणी ।
ॐ क्रीं कूटालया क्रीं ह्रीं कूटकर्त्री ह्सौः कुटीः ॥२७॥
ॐ श्रीं क्लीं कामा कमला क्लीं श्रीं कमला क्रीं च कौरवी ।
क्रीं श्रीं कुरुरवा ह्रीं श्रीं हाटकेश्वरपूजिता ॥२८॥
ॐ ह्रां रां रम्यरूपा च ॐ श्रीं क्रीं कांचनांगदा ।
ॐ क्रीं श्रीं कुण्डलीं क्रीं हूं काराबन्धनमोक्षदा ॥२९॥
ॐ क्रीं कुरा ह्सौः क्लौं ब्लूं ॐ क्रीं कौरवमर्दिनी ।
ॐ श्रीं कटु ह्सौः कुंटी ॐ श्रीं कुष्ठक्षयंकरी ॥३०॥
ॐ श्रीं चकोरकी कान्ता क्रीं श्रीं कापालिनी परा ।
ॐ श्रीं क्रीं कालिका कामा ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं कलङ्किता ॥३१॥
क्रीं श्रीं क्लीं क्रीं कठोराङ्गी ॐ श्रीं कपटरूपिणी ।
ॐ क्रीं कामवती क्रीं श्रीं कन्या क्रीं कालिका ह्सौः ॥३२॥

श्मशानकालिका श्रीं क्लीं ॐ क्रीं श्रीं कुटिलालका ।
ॐ क्रीं श्रीं कुटिलभ्रूश्च क्रीं हूं कुटिलरूपिणी ॥३३॥
ॐ क्रीं कमलहस्ता च क्रीं कुण्टी ॐ क्रीं कौलिनी ।
ॐ श्रीं क्लीं कंठमध्यस्था क्रीं क्लीं कान्तिस्वरूपिणी ॥३४॥
ॐ क्रीं कार्तस्वरूपा च ॐ क्रीं कात्यायनी ह्सौः ।
कलावती ह्सौः काम्या क्रीं कलानिधीशेश्वरी ॥३५॥
ॐ क्रीं श्रीं सर्वमध्यस्था ॐ क्रीं सर्वेश्वरीपयः ।
ॐ क्रीं हूं चक्रमध्यस्था ॐ क्रीं श्रीं चक्ररूपिणी ॥३६॥
ॐ क्रीं हूं चं चकोराक्षी ॐ चं चन्दनशीतला ।
ॐ चं चर्माम्बरा हूं क्रीं चारुहासा हसौः च्युता ॥३७॥
ॐ श्रीं चौरप्रिया हूं च चार्वङ्गी श्रीं चलाचला ।
ॐ श्रीं हूं कामराज्येष्टा कुलिनी क्रीं ह्सौः कुहु ॥३८॥
ॐ क्रीं क्रिया क्रीं कुलाचारा क्रीं क्रीं कमलवासिनी ।
ॐ क्रीं हेलाः हसौः लीलाः ॐ क्रीं कालविलासिनी ॥३९॥
ॐ क्रीं कालप्रिया हूं क्रीं कालरात्री हसौः बला ।
ॐ क्रीं श्रीं शशिमध्यस्था क्रीं श्रीं कन्दर्पलोचना ॥४०॥
ॐ क्रीं शीतांशुमुकुटा क्रीं श्रीं सर्ववरप्रदा ।
ॐ श्रीं श्यामाम्बरा स्वाहा ॐ श्रीं श्यामलरूपिणी ॥४१॥
ॐ श्रीं क्रीं श्रीं सती स्वाहा ॐ क्रीं श्रीधरसेविता ।
ॐ श्रीं रूक्षा हसौः रंभा ॐ क्रीं रसवर्तिपथा ॥४२॥
कुण्डगोलप्रियकरी ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं कुरूपिणी ।
ॐ श्रीं सर्वा हसौः तृप्तिः ॐ श्रीं तारा हसौः त्रपा ॥४३॥
ॐ श्रीं तारुण्यरूपा च ॐ क्रीं त्रिनयनापयः ।
ॐ श्रीं ताम्बूलरक्तास्या ॐ क्रीं उग्रप्रभा तथा ॥४४॥
ॐ श्रीं उग्रेश्वरी स्वाहा ॐ श्रीं उग्रखाकुला ।
ॐ क्रीं च सर्व भूषाढ्या ॐ श्रीं चम्पकमालिनी ॥४५॥
ॐ श्रीं चम्पकवल्ली च ॐ ह्री श्रीं च च्युतालया ।
ॐ श्रीं द्युतिमति स्वाहा ॐ श्रीं देवप्रसूः पयः ॥४६॥
ॐ श्रीं दैत्यारि पूजा च ॐ क्रीं दैत्यविमर्दिनी ।
ॐ श्रीं द्युमणिनेत्रा च ॐ श्रीं दंभविवर्जिता ॥४७॥
ॐ दारिद्र्यराशिघ्नी ॐ श्रीं दामोदरप्रिया ।
ॐ क्लीं दर्पापहा स्वाहा ॐ क्रीं कन्दर्पलालसा ॥४८॥

ॐ क्रीं करीरवृक्षस्था ॐ क्री हूंकारिगामिनी।
ॐ क्रीं शुक्रात्मिका स्वाहा ॐ क्रीं शुक्रकरा तथा ॥४९॥
ॐ श्रीं शुक्रश्रुतिः श्रीं क्लीं श्री ह्रीं शुक्रकवित्वदा।
ॐ क्रीं शुक्रप्रसू स्वाहा ॐ श्रीं क्रीं शवगामिनी ॥५०॥
ॐ श्रीं रक्ताम्बरा स्वाहा ॐ क्रीं पीताम्बरार्चिता।
ॐ श्रीं क्रीं स्मितसंयुक्ता ॐ श्रीं क्रीं सौः स्मरापुरा ॥५१॥
ॐ श्रीं क्रीं हूं च स्मेरास्या ॐ श्रीं स्मरविवर्द्धिनी।
ॐ श्रीं सर्पाकुला स्वाहा ॐ श्रीं सर्वोपवेशिनी ॥५२॥
ॐ क्रीं सौः सर्पकन्या च ॐ क्रीं सर्पासनप्रिया।
सौः सौः क्लीं सर्पकुटिला ॐ श्रीं सुरासुरार्चिता ॥५३॥
ॐ श्रीं सुरारिमथिनी ॐ श्रीं सूरिजनप्रिया।
ऐं सौः सुर्येन्दुनयना ऐं क्लीं सूर्यायुतप्रभा ॥५४॥
ऐं श्रीं क्लीं सुरसेव्या च ॐ श्रीं सर्वेश्वरी तथा।
ॐ श्रीं क्षेमकरी स्वाहा ॐ क्रीं हूं भद्रकालिका ॥५५॥
ॐ श्रीं श्यामा हसौः स्वाहा ॐ श्रीं ह्रीं शर्वरी स्वाहा।
ॐ श्रीं क्लीं शर्वरी तथा ॐ श्रीं क्लीं शान्तरूपिणी ॥५६॥
ॐ क्रीं श्रीं श्रीधरेशानि ॐ श्रीं क्लीं शासिनी तथा।
ॐ क्लीं शितिर्हसौः शौरी ॐ श्रीं क्लीं शारदा तथा ॥५७॥
ॐ श्रीं ह्रीं शारिका स्वाहा ॐ श्रीं शाकंभरी तथा।
ॐ श्रीं क्लीं शिवरूपा च ॐ श्रीं क्लीं कामचारिणी ॥५८॥
ॐ यं यज्ञेश्वरी स्वाहा ॐ श्रीं यज्ञप्रिया सदा।
ॐ ऐं क्लीं यं यज्ञरूपा च ॐ श्रीं यं यज्ञदक्षिणा ॥५९॥
ॐ श्रीं यज्ञार्चिता स्वाहा ॐ यं याज्ञिकपूजिता।
श्रीं ह्रीं यं यज्ञमानस्त्री ॐ श्रीं यज्वा ह्सौः वधू ॥६०॥
ॐ श्रीं वां बटुकपूजिता ॐ श्रीं वरूथिनी स्वाहा।
ॐ क्रीं वार्ता हसौस्तथा ॥६१॥
ॐ श्रीं क्लीं ऐं च वाराही ॐ श्रीं क्लीं वरवर्णिनी।
ॐ ऐं सौः वार्तदा स्वाहा ॐ श्रीं वाराङ्गना तथा ॥६२॥
ॐ श्रीं वैकुण्ठपूजा च वां श्रीं ऐं क्लीं च वैष्णवी।
ॐ श्रीं ब्रां ब्राह्मणी स्वाहा ॐ क्रीं ब्राह्मणपूजिता ॥६३॥
ॐ श्रीं ऐं क्लीं च इन्द्राणी ॐ ॐ क्लीं इन्द्रपूजिता।
ॐ श्रीं क्लीं ऐन्द्रि ऐं स्वाहा ॐ श्रीं क्लीं इन्दुशेखरा ॥६४॥

ॐ ऐं इन्द्रसमानाभा ॐ ऐं क्लीं इन्द्रवल्लभा ।
ॐ श्रीं इडाहसौः नाभिः ॐ श्रीं ईश्वरपूजिता ॥६५॥
ब्रां ब्राह्मी क्लीं रुं रुद्राणी ॐ ऐं द्रीं श्रीं रमा तथा ।
ऐं क्लीं स्थाणुप्रिया स्वाहा ॐ गीं गदक्षयंकरी ॥६६॥
ॐ गीं गीं श्रीं गुरुस्था च ऐं क्लीं गुदविवर्द्धिनी ।
ॐ श्रीं क्रीं क्रुं कुलीरस्था ॐ क्रीं श्रीं कूर्मपृष्ठगा ॥६७॥
ॐ श्रीं श्रूं तोतला स्वाहा ॐ त्रौं त्रिभुवनार्चिता ।
ॐ प्रीं प्रीतिर्हसौः प्रीतां प्रीं प्रभा प्रीं पुरेश्वरी ॥६८॥
ॐ प्रीं पर्वतपुत्री च ॐ प्रीं पर्वतवासिनी ।
ॐ श्रीं प्रीतिप्रदा स्वाहा ॐ ऐं सत्त्वगुणाश्रिता ॥६९॥
ॐ क्लीं सत्यप्रिया स्वाहा ऐं सौः क्लीं सत्यसङ्गरा ।
ॐ श्रीं सनातना स्वाहा ॐ श्रीं सागरशायिनी ॥७०॥
ॐ क्लीं चं चन्द्रिका ऐं सौः चन्द्रमण्डलमध्यगा ।
ॐ श्रीं चारुप्रभा स्वाहा ॐ श्रीं प्रें प्रेतशायिनी ॥७१॥
ॐ श्रीं श्रीं मथुरा ऐं क्रों काशी श्रीं श्रीं मनोरमा ।
ॐ श्रीं मन्त्रमयी स्वाहा ॐ चं चन्द्रक-शीतला ॥७२॥
ॐ श्रीं क्लीं शाङ्करी स्वाहा ॐ श्रीं सर्वाङ्गवासिनी ।
ॐ श्रीं सर्वप्रिया स्वाहा ॐ श्रीं क्लीं सत्यभामिनी ॥७३॥
ॐ क्लीं सत्यात्मिका स्वाहा ॐ क्लीं ऐं सौः च सात्त्विकी ।
ॐ श्रीं रां राजसी स्वाहा ॐ क्रीं रंभोपमा तथा ॥७४॥
ॐ श्रीं राघवसेव्या च ॐ श्रीं रावणघातिनी ।
निशुम्भहन्त्री ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ क्रीं शुम्भमदापहा ॥७५॥
ॐ श्रीं रक्तप्रिया हरा रक्तबीजक्षयंकरी ।
ॐ श्रीं माहिषपृष्ठस्था ॐ श्रीं महिषघातिनी ॥७६॥
ॐ श्रीं श्रीं माहिषे स्वाहा ॐ श्रीं श्रीं मानवेष्टदा ।
ॐ श्रीं मतिप्रदा स्वाहा ॐ श्रीं मनुमयी तथा ॥७७॥
ॐ श्रीं मनोहराङ्गी च ॐ श्रीं माधवसेविता ।
ॐ श्रीं मागधस्तुत्या च ॐ श्री वन्दीस्तुता सदा ॥७८॥
ॐ श्रीं मानप्रदा स्वाहा ॐ श्रीं मान्या हसौः मतिः ।
ॐ श्रीं श्रीं मानिनी स्वाहा ॐ श्रीं मानक्षयंकरी ॥७९॥
ॐ श्रीं मार्जारगम्या च ॐ श्रीं मृगीलोचना ।
ॐ मरालमतिः श्रीं श्रीं मुकुरा प्रीं च पूतना ॥८०॥

ॐ श्रीं परापरा ॐ श्रीं परिवारसमुद्भवा।
ॐ श्रीं पद्मवरा ऐं सौः पद्मोद्भवक्षयंकरी ॥८१॥
ॐ प्रीं पद्मा हसौः पुण्यै ॐ प्रीं पुराङ्गना तथा।
ॐ श्रीं पयोदृशदृशी ॐ प्रीं परावतेश्वरी ॥८२॥
ॐ पयोधरनम्राङ्गी ॐ ध्रीं धाराधरप्रिया।
ॐ धृति ऐं दया स्वाहा ॐ श्रीं क्रीं श्रीं दयावती ॥८३॥
ॐ श्रीं द्रुतगतिः स्वाहा ॐ द्रीं दं वनघातिनी।
ॐ चं चर्माम्बिरेशानी ॐ चं चण्डालरूपिणी ॥८४॥
ॐ चामुण्डाहसौः चण्डी ॐ चं क्रीं चण्डिकापयः।
ॐ क्रीं चण्डप्रभा स्वाहा ॐ चं क्रीं चारुहासिनी ॥८५॥
ॐ क्रीं श्रीं अच्युतेष्टा ह्रीं चण्डमुण्डक्षयंकरी।
ॐ त्रौं श्रीं त्रितये स्वाहा ॐ श्रीं त्रिपुरभैरवी ॥८६॥
ॐ ऐं सौः त्रिपुरानन्दा ॐ ऐं त्रिपुरसूदिनी।
ऐं क्लीं सौः त्रिपुराध्यक्षा ऐं त्रौं श्रीं त्रिपुराश्रया ॥८७॥
ॐ श्रीं त्रिनयने स्वाहा ॐ श्रीं तारावराकुला।
ॐ श्रीं तुंबुरुहस्ता च ॐ श्रीं मन्दभाषिणी ॥८८॥
ॐ श्रीं महेश्वरी स्वाहा ॐ श्रीं मोदकभक्षिणी।
ॐ श्रीं मन्दोदरी स्वाहा ॐ श्रीं श्रीं मधुरभाषिणी ॥८९॥
ॐ म्रीं श्रीं मधुरालापा ॐ श्रीं मधुरभाषिणी।
ॐ श्रीं मातामही स्वाहा ॐ मान्या म्रीं मदालसा ॥९०॥
ॐ म्रीं मदोद्धता स्वाहा ॐ म्रीं मन्दिरवासिनी।
ॐ श्रीं क्लीं षोडशारस्था ॐ म्रींद्वादशरूपिणी ॥९१॥
ॐ श्रीं द्वादशपत्रस्था ॐ श्रीं अं अष्टकोणगा।
म्रीं मातंगी हसौः श्रीं क्लीं मत्तमातङ्गगामिनी ॥९२॥
ॐ म्रीं मलापहा स्वाहा ॐ म्रीं माताहसौः सुधा।
ॐ श्रीं सुधाकला स्वाहा ॐ श्रीं म्रीं मांसिनी स्वाहा ॥९३॥
ॐ म्रीं मालाकरी तथा।
ॐ म्रीं माध्वी रसापूर्ण ॐ श्रीं सूर्वा हसौःसती ॥९४॥
ॐ ऐं सौः क्लीं सत्यरूपा ॐ श्रीं दीक्षा हसौः दरी।
ॐ द्रीं दातृप्रिया ह्रीं श्रीं दक्षयज्ञविलासिनी ॥९५॥
ॐ दातृप्रसू स्वाहा ॐ श्रीं दाता हसौः पयः!।
ॐ श्रीं ऐं सौः च सुमुखी ॐ ऐं सौः सत्यवारुणी ॥९६॥

ॐ श्रीं साडम्बरा स्वाहा ॐ श्रीं ऐं सौः सदागतिः ।
ॐ श्रीं सीताहसौः सत्या ॐ ऐं सन्तानशायिनी ॥९७॥
ॐ ऐं सौः सर्वदृष्टिश्च ॐ क्रीं कल्पान्तकारिणी ।
ॐ श्रीं चन्द्रकलाधरा ॐ ऐं श्रीं पशुपालिनी ॥९८॥
ॐ श्रीं शिशुप्रिया ऐं सौः शिशूत्संगनिवेशिता ।
श्रीं ऐं सौः तारिणी स्वाहा ॐ ऐं क्लीं तामसी तथा ॥९९॥
ॐ म्रीं मोहान्धकारघ्नी ॐ म्रीं मत्तमनास्तथा ।
ॐ म्रीं श्रीं माननीया च ॐ प्रीं पूजाफलप्रदा ॥१००॥
ॐ श्रीं श्रीं श्रीफला स्वाहा ॐ श्रीं क्लीं सत्यरूपिणी ।
ॐ श्रीं नारायणी स्वाहा ॐ श्रीं क्लीं नूपुराकिला ॥१०१॥
ॐ म्रीं श्रीं नारसिंही च ॐ म्रीं नारायणप्रिया ।
ॐ म्रीं हंसगतिः स्वाहा ॐ श्रीं हंसो हसौः पयः ॥१०२॥
ॐ श्रीं क्रीं करवालेष्टा ॐ क्रीं कोटरवासिनी ।
ॐ क्रीं काञ्चनभूषाढ्या ॐ क्रीं श्रीं कुरीपयः ॥१०३॥
ॐ क्रीं शशिरूपा च ॐ श्रीं सः सूर्यरूपिणी ।
ॐ श्रीं वामप्रिया स्वाहा ॐ वीं वरुणपूजिता ॥१०४॥
ॐ बीं बटेश्वरी स्वाहा ॐ वीं वामनरूपिणी ।
ॐ रं व्रीं श्रीं खेचरी स्वाहा ॐ रं व्री श्रीं साररूपिणी ॥१०५॥
ॐ रं व्रीं खर्परपात्रा च ॐ प्रीं प्रेतालया तथा ॥१०६॥
ॐ रीं क्लीं प्रीं च दूतात्मा ॐ प्रीं पुण्यविवर्द्धिनी ।
ॐ श्रीं श्रीं शान्तिदा स्वाहा ॐ प्रीं पातालचारिणी ॥१०७॥
ॐ म्रीं मूकेश्वरी स्वाहा ॐ रीं श्रीं मन्त्रसागरा ।
ॐ श्रीं क्रीं क्रयदा स्वाहा ॐ क्रीं विक्रयकारिणी ॥१०८॥
ॐ क्री क्रयात्मिका स्वाहा ॐ क्रीं श्रीं क्लीं कृपावती ।
ॐ क्रीं श्रीं ब्रां विचित्राङ्गी ॐ श्रीं क्लीं वीं विभावरी ॥१०९॥
ॐ वीं विभावसुनेत्रा वीं श्रीं वीं वामकेश्वरी ।
ॐ श्रीं वसुप्रदा स्वाहा ॐ श्रीं वैश्रवणार्चिता ॥११०॥
ॐ भैं श्रीं भाग्यदा स्वाहा ॐ भैं भैं भगमालिनी ।
ॐ श्रीं भगोदरा स्वाहा ॐ भैं क्लीं वैंदवेश्वरी ॥१११॥
ॐ श्रीं रीं भवमध्यस्था ऐं क्लीं त्रिपुरसुन्दरी ।
ॐ श्रीं क्रीं भीतिहर्त्री च ॐ भैं भूतक्षयंकरी ॥११२॥
ॐ भैं भयप्रदा भैं श्रीं भगिनी भैं भयापहा ।
ॐ ह्रीं श्रीं भोगदा स्वाहा श्रीं क्लीं ह्रीं भुवनेश्वरी ॥११३॥

उपर्युक्त ११३ श्लोकों में बीजात्मकमन्त्रमयभुवनेश्वरीसहस्रनाम वर्णित है जो भावमय हो पाठ करने योग्य है।

इति श्री देवदेवेशि नाम्ना सहस्रकोत्तमः।
मन्त्रगर्भंपरं रम्यं गोप्यं श्रीदं शिवात्मकम् ॥११४॥
माङ्गल्यं भद्रदं सव्यं सर्वरोगक्षयंकरम्।
सर्वदारिद्रयराशिघ्नं सर्वामरप्रपूजितम् ॥११५॥

हे श्रीदेवदेवेशि ! यह सहस्रनाम, उत्तम, माङ्गल्य व कल्याणदायक, सेवनीय, मन्त्रमय, सर्वश्रेष्ठ, सुन्दर, गोपनीय, श्रीदाता, भद्रकारक, सभी प्रकार के रोगों का क्षय करने वाला, सभी प्रकार के दारिद्र्य के समूह को नष्ट करने वाला, सभी देवताओं द्वारा पूजित है ॥११४-११५॥

रहस्यं सर्वदेवानां रहस्यं सर्वदेहिनाम्।
दिव्यं स्तोत्रमिदं नाम्नां सहस्रमनुभिर्युतम् ॥११६॥

सहस्र मन्त्रों तथा नामों से युक्त यह स्तोत्र, सभी देवताओं और सभी देहधारियों का रहस्य है ॥११६॥

परापरं मनुमयं परापररहस्यकम्।
इदं नाम्नां सहस्राख्यं स्तवं मन्त्रमयं परम् ॥११७॥

यह सहस्रनामवाला स्तव श्रेष्ठमन्त्रमय, परापरमन्त्रस्वरूप, परापररहस्य का बोधक स्तोत्र है ॥११७॥

पठनीयं सदा देवि शून्यागारे चतुष्पथे।
निशीथे चैव मध्याह्ने लिखेद्यत्नेन देशिकः ॥११८॥

हे देवि ! इसका पाठ सदैव आधी-रात या मध्याह्न में शून्यागार या (चौराहे चतुष्पथ) पर करना चाहिए। आधीरात में शून्यागार और मध्याह्न में चतुष्पथ अर्थ भी यहाँ लगाया जा सकता है ॥११८॥

गन्धैश्च कुसुमश्चैव कर्पूरेण च वासितैः।
कस्तूरीचन्दनैर्देवि दूर्वया च महेश्वरि ॥११९॥
रजस्वलाया रक्तेन लिखेनाम्नां सहस्रकम्।
लिखित्वा धारयेन्मूर्ध्नि साधकः शुभ वाञ्छकः ॥१२०॥

हे महेश्वरि ! हे देवि ! चन्दन, पुष्प, कपूर, कस्तूरी मिश्रित चन्दन और दूर्वा से अथवा रजस्वला के रक्त से इस सहस्रनामस्तोत्र को अपना शुभ चाहने वाला साधक लिखकर, इसे अपने मस्तक पर धारण करे ॥११९-१२०॥

यं यं कामयते कामं तं तं प्राप्नोति लीलया।
अपुत्रो लभते पुत्रान्धनार्थी लभते धनम् ॥१२१॥
कन्यार्थीलभते कन्यां विद्यार्थीशास्त्रपारगः।
वन्ध्यापुत्रयुता देवि मृतवत्सा तथैव च ॥१२२॥

इसे धारण कर साधक जो-जो कामना करता है उसे वह लीलामात्र में सरलता से प्राप्त कर लेता है। पुत्रहीन पुत्र, धन चाहने वाला धन, कन्या चाहने वाला कन्या प्राप्त करता है। विद्यार्थी इसके धारण करने से शास्त्रवेत्ता हो जाता है। वन्ध्या तथा मृतवत्सा स्त्रियाँ पुत्रयुक्त हो जाती हैं ॥१२१-१२२॥

पुरुषो दक्षिणे वाहौ योषिद्वाम करे तथा।
धृत्वा नाम्नां सहस्त्रं तु सर्वसिद्धिर्भवेद्ध्रुवम् ॥१२३॥

यदि पुरुष अपनी दाहिनी बाँह और स्त्री बाईं बाँह में इस सहस्त्रनाम को धारण करे तो उसे निश्चितरूप से सभी प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं ॥१२३॥

नात्र सिद्धाद्य प्रेक्षास्ति न वा मित्रारि दूषणम् ॥१२४॥

न यहाँ (इसकी साधना में) सिद्धि आदि की अपेक्षा है न मित्र और शत्रु का कोई दोष ही है ॥१२४॥

सर्वसिद्धिकृतं चैतत्सर्वाभीष्टफलप्रदम्।
मोहान्धकारापहरं महामन्त्रमयं परं ॥१२५॥

यह सबप्रकार की सिद्धियों का करनेवाला, सब प्रकार का अभीष्टफल देनेवाला, मोहान्धकारनाशक, महामन्त्रमय, श्रेष्ठस्तोत्र है ॥१२५॥

इदं नाम्नासहस्त्रं तु पठित्वा त्रिविधं दिनम्।
रात्रौ वारत्रयं चैव तथा मासत्रयं शिवे ॥१२६॥
बलिं दद्याद्यथाशक्त्या साधकः सिद्धिवाच्छकः।
सर्वसिद्धियुतोभूत्वा विचरेद्भैरवो यथा ॥१२७॥

इस सहस्त्रनामस्तोत्र का दिन में तीन बार या रात्रि में तीन बार पाठ करे। तीन महीनें तक ऐसा.करके सिद्धि चाहने वाला साधक, यथाशक्ति बलि दे। तो वह सभी सिद्धियों से युक्त हो भैरव के समान विचरण करता है ॥१२६-१२७॥

पञ्चम्यां च नवम्यां च चतुर्दश्यां विशेषतः।
पठित्वा साधको दद्याद्बलिं मन्त्रविधानवित् ॥१२८॥

मन्त्रविधान को जाननेवाला साधक, विशेष रूप से इस सहस्त्रनाम को पञ्चमी, नवमी और चतुर्दशी तिथि को पढ़े तथा बलिप्रदान करे ॥१२८॥

विशेष—दुर्गासप्तशती में अष्टम्यां वा चतुर्दश्यां नवम्यां चैकचेतसः करके देवीस्तोत्रपाठ की विभिन्न तिथियों का उल्लेख है । सामान्यजन इन्हें मासगत, मुख्यतः कृष्णपक्षगत, विशिष्टजन इन्हें पञ्चमी (वसन्त-पञ्चमी), अष्टमी (महाष्टमी या कृष्णाष्टमी), नवमी (रामनवमी), चतुर्दशी (दीपावली) आदि पर्वों से सम्बन्धित मानते हैं। शाक्तमत से वसन्तपञ्चमी, चैत्रनवमी, महाष्टमी एवं दीपावली का प्रयोग उचित प्रतीत होता है ।

कर्मणा मनसा वाचा साधको भैरवो भवेत् ॥१२९॥

ऐसा मनवाणीकर्म से करने वाला साधक, भैरवस्वरूप हो जाता है । (यहाँ मन से ध्यान, वाणी से स्तोत्रपाठ, कर्म से बल्यादि दान संकेतित है) ॥१२९॥

अस्य नाम्नां सहस्रस्य महिमानं सुरेश्वरि ।
वक्तुं न शक्यते देवि कल्पकोटिशतैरपि ॥१३०॥

हे सुरेश्वरि ! हे देवि ! सौ करोड़कल्पों में भी इस सहस्रनाम की महिमा का वर्णन नहीं किया जा सकता ॥१३०॥

मारीभये चौरभये रणे राजभये तथा ।
अग्निजे वायुजे चैव तथा कालभयं शिवे ॥१३१॥
वनेऽरण्ये श्मशाने च महोत्पाते चतुष्पथे ।
दुर्भिक्षे ग्रहपीडायां पठेन्नाम्नां सहस्रकम् ।
तत्सद्यः प्रशमं याति हिमवद्भास्करोदये ॥१३२॥

हे शिवे ! मारीभय, चोरभय, राजभय, कालभय, युद्ध, अग्नि, वायु से उत्पन्न भय उपस्थित होने पर, जल में, वन में, श्मशान में, महान् उत्पात होने पर चौराहे पर दुर्भिक्ष, ग्रहपीडा की स्थिति में इस सहस्रनामस्तोत्र का पाठ करना चाहिए । ऐसा करने से उपर्युक्त आपदाएँ वैसे ही नष्ट हो जाती हैं जैसे सूर्य के उदय होने पर बर्फ नष्ट हो जाती हैं ॥१३१-१३२॥

एक वारं पठेत्पात्रः तस्य शत्रुर्नजायते ।
त्रिवारं सुपठेद्यस्तु स तु पूजाफलं लभेत् ॥१३३॥
दशावर्तं पठेद्यस्तु देवीदर्शनमाप्नुयात् ।
शतावर्तं पठेद्यस्तु स सद्यो भैरवोपमः ॥१३४॥

जो पात्र (योग्यसाधक), एक बार इसका पाठ करता है उसके शत्रु नहीं रहते । यदि वह उसे तीन बार भलीभांति पढ़े तो वह पूजाफल को प्राप्त करता है । दशबार पढ़ने से वह देवीदर्शन प्राप्त कर लेता है । जो सौ बार इस स्तोत्र का पाठ करता है वह शीघ्र ही भैरवतुल्य हो जाता है ॥१३३-१३४॥

इदं रहस्यं परमं तव प्रीत्या मयास्मृतम् ।
गोपनीयं प्रयत्नेन चेत्याज्ञा परमेश्वरी ॥१३५॥
इत्येष पटलो देवि मन्त्रनामसहस्त्रकः ।
नाभक्तेभ्यः अदातव्यो गोपनीयं महेश्वरि ॥१३६॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये मन्त्रगर्भसहस्त्रनामाष्टमः पटलः ॥८॥

हे महेश्वरि ! यह परमरहस्य तुम्हारे प्रेम के कारण मुझसे कहा गया । इसे प्रयत्न पूर्वक गोपनीय रखना चाहिए तथा इसे भुवनेश्वरी की भक्ति से रहित अथवा अपनी भक्ति से रहित साधक को गुरु द्वारा नहीं देना चाहिए ॥१३५-१३६॥

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के मन्त्रगर्भसहस्त्रनाम नामक आठवें पटल की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ।।८।।



नवमपटलः

तत्त्वविद्यास्तोत्र

श्रीभैरव उवाच

अधुना शृणु देवेशि स्तोत्रं तत्त्वनिरूपणम् ।
सर्वस्वं भुवनेश्वर्याः परापररहस्यकम् ॥१॥
यस्य कस्य न वक्तव्यं बिना शिष्याय पार्वति ॥२॥

श्रीभैरव बोले—हे देवेशि ! अब तुम देवी भुवनेश्वरी के सर्वस्वभूत, परापर-रहस्य तथा तत्त्वनिरूपण करने वाले स्तोत्र को सुनो । हे पार्वति ! बिना शिष्य हुए इसे जिस किसी को नहीं बताना चाहिए ॥१-२॥

अस्य स्तोत्रस्य देवेशि ऋषि भैरव उच्यते ।
छन्दोऽनुष्टुप् समाख्यातं देवताभुवनेश्वरी ॥३॥
श्रीतत्त्वरूपिणी बीजं माया हैं शक्तिरुच्यते ।
हः कीलकं समाख्यातं भुवनेश्याः महेश्वरि ॥४॥
धर्मार्थकाममोक्षार्थे विनियोगः प्रकीर्तितः ॥५॥

हे महेश्वरि ! भुवनेशी के इस स्तोत्र के भैरव ऋषि कहे जाते हैं । इसका छन्द अनुष्टुप्, श्रीतत्त्वरूपिणीभुवनेश्वरी देवता, माया (ह्रीं) बीज, हैं शक्ति, हः कीलक कहा गया है । धर्मार्थकाममोक्ष के अर्थ में इसका विनियोग कहा गया है ॥३-५॥

ॐ अस्य श्रीतत्त्वनिरूपणस्तोत्रस्य भैरवऋषिः । अनुष्टुप्छन्दः । श्रीतत्त्वरूपिणी भुवनेश्वरीदेवता । माया (ह्रीं) बीजं, हैं शक्तिः, हः कीलकम् धर्मार्थकाममोक्षार्थे विनियोगः ।

ध्यानम्

उद्यत्कोटि सहस्राभां शशाङ्ककृतशेखराम् ।
पद्मासनां स्मेरमुखीं सूर्येंद्वग्निविलोचनाम् ॥६॥
रक्तवस्त्रधरां पद्मपाशाङ्कुशवरान्करैः ।
दधतीं भुवनेशानीं ध्यायेद्धृत्पङ्कजे शिवाम् ॥७॥

उगते हुए हजारों सूर्य के समान आभावाली, चन्द्रमा को अपने मस्तक पर

धारण की हुई, पद्मासन पर विराजमान, मुस्कराती हुई, सूर्य, चन्द्र, अग्नि रूप त्रिनेत्रयुक्त, लालवस्त्र धारण की हुई, हाथों में पद्म, पाश, अंकुश एवं वरमुद्रा धारण की, भुवनेश्वरी शिवा का ध्यान करे ॥६-७॥

वाग्भवं तव शिवे प्रियबीजं ध्यायते यदि नरोऽनलचेताः ।
तस्य त्वच्चरणपूजनमात्रात् जायते हि कमलवत् तदानीम् ॥८॥

हे शिवे ! यदि अग्नि के समान संतप्त चेतनावाला साधक, तुम्हारे वाग्भव (ऐं) नामक प्रियबीज का ध्यान करता है । तो तुम्हारे चरण के पूजनमात्र से ही उसका चित्त उस समय कमल की भाँति प्रफुल्लित हो जाता है ॥८॥

शक्तिबीजमनघं सुधाकरं साधको यदि जपेत् ।
हृदि भक्त्या तस्य स्वर्गललनाश्चरणाब्जे रञ्जयति मुकुटे मणियुक्तैः ॥९॥

यदि साधक तुम्हारे सुधाकारक (अमृतमय), निर्दुष्ट शक्तिबीज सौः, का अपने हृदय में भक्तिपूर्वक जप करता है तो अपने मणियुक्तमुकुटों से स्वर्ग की अप्सराएँ उसके चरणकमल को रञ्जित करती हैं ॥९॥

मायाबीजं ये जपेत् ते महेशि तत्त्वं मन्त्री भक्तिमान् मुक्तिकांक्षी ।
त्वत्सादृश्याद्याति तवद्धामरम्यं नाकस्त्रीभिर्वीज्यमानः सुतालैः ॥१०॥

हे महेशि ! जो जन तुम्हारे मायाबीज ह्रीं का, जो तुम्हारा तत्त्वरूप है, भक्ति की आकांक्षा से, भक्तिपूर्वक जप करता है, वह तुम्हारे सदृश हो, सुन्दर तालादि सहित स्वर्ग की स्त्रियों (अप्सराओं) द्वारा बीज्यमान (पंखा झले जाते हुए) तुम्हारे धाम को जाता है ॥१०॥

त्वन्मंत्रमध्ये भुवनेश्वरीति यो नाम रम्भापरिरम्भकांक्षी ।
ध्यायेत् हृदब्जे शशिखण्डचूड़े सयाति रम्भां परिरंभ्यस्वर्गम् ॥११॥

रम्भा के परिरम्भ (आलिंगन) की आकांक्षा रखने वाला जो साधक, चन्द्रचूड शिव के स्थान, अपने हृदय कमल में, तुम्हारे मन्त्र के मध्यवर्ती भुवनेश्वरी नाम का ध्यान करता है वह रम्भाअप्सरा के आलिंगनबद्ध हो, स्वर्ग को जाता है ॥११॥

मायाऽर्णं यः साधको ध्यायते ते तस्य ब्रह्माविष्णुशिवादयस्ते ।
देवाः पादौ रञ्जयतिस्म नित्यं मौलिस्थैरतैरिन्द्रनीलादिरत्नैः ॥१२॥

हे अम्ब ! जो साधक तुम्हारे मायाबीज का ध्यान करता है, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र आदि देवगण अपने मुकुट में स्थित इन्द्रनील आदि रत्नों से नित्य उसके चरणों को रञ्जित करते हैं ॥१२॥

तत्त्वरूपिणि भवन्मनु मध्ये यो जपेत्तव सुधाकरमाख्यम्।
देवि तस्य किल साधकराज्ञो विश्वमेतदखिलं वशमेति ॥१३॥

हे तत्त्वरूपिणि ! हे देवि ! जो तुम्हारे मन्त्र के मध्यवर्ती सुधाकररूप तुम्हारे नाम को जपता है। हे देवि ! यह समस्त विश्व, उस साधकराज का वशवर्ती हो जाता है ॥१३॥

मायाबीजं देवि मन्त्रान्तसंस्थं रात्रौ बह्निं ध्यायते यो हृदन्तः।
भूमौ भूपास्तस्यपादाब्जयुग्मं रञ्जतिस्वैर्मौलिरत्नाशुभिस्तैः ॥१४॥

हे देवि ! जो साधक रात्री में तुम्हारे मन्त्र के अन्तिमभाग में स्थित माया बीज (ह्रीं) का वह्निबीज रं सहित, अपने हृदय में ध्यान करता है। पृथ्वी के राजागण अपने मुकुट के रत्नों की किरणों से उसके चरणकमलों की शोभा बढ़ाते हैं ॥१४॥

इतीदं परमं तत्त्वं तत्त्वविद्यास्तवोत्तमम्।
रहस्यं भुवनेश्वर्याः सर्वस्वं मम पार्वति ॥१५॥

हे पार्वति ! यह तत्त्वविद्यास्तव नामक उत्तमस्तोत्र, भुवनेश्वरी का रहस्य, परम-तत्त्व तथा मेरा सर्वस्व है ॥१५॥

सम्पूज्य भुवनेशानीं यः पठेत्साधकोत्तमः।
तस्याष्टसिद्धयो देवि करसंस्था महेश्वरि ॥१६॥

हे महेश्वरि ! हे देवि ! जो उत्तमसाधक भुवनेश्वरी की पूजा कर, इसे पढ़ता है। आठोंसिद्धियाँ उसके हस्तगत हो जाती हैं ॥१६॥

अस्य स्तवस्य देवेशि प्रभावं कथितुं विभुः।
नास्म्यहं भुवनेश्वर्याः पञ्चवक्त्रैर्न संशयः ॥१७॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये तत्त्वविद्यास्तोत्रनाम नवमः पटलः ॥९॥

हे देवेशि ! भुवनेश्वरी देवी के इस विभुः (वैभवपूर्ण) स्तोत्र के प्रभाव को मैं अपने पाँचों मुखों से भी नहीं कह सकता हूँ ॥१७॥

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के तत्त्वविद्यास्तोत्र नामक नौवें पटल की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ।।९।।



दशमपटलः

साधना

श्रीभैरवउवाच

मन्त्रसाधन वक्ष्येऽहं रहस्यं सर्वमन्त्रिणाम् ।
येन साधनमात्रेण मन्त्रसिद्धिमुपोष्यति ॥१॥

श्रीभैरव बोले—हे देवि ! अब मैं सभी साधकों के लिए भुवनेश्वरी की मन्त्रसाधना के रहस्य को कहूँगा । जिसके साधनमात्र से साधक, मन्त्रसिद्धि को प्राप्त कर लेता है ॥१॥

बिना शापहरिं नैव मन्त्रसिद्धिप्रदायकः ।
सम्पुटेन बिना देवि शृणु तान् प्राणवल्लभे ॥२॥

हे प्राणवल्लभे ! शापहरी (शाप-मोचन) और सम्पुट के बिना मन्त्रसिद्धि नहीं होती, अब मैं उन्हें कहता हूँ तुम सुनो ॥२॥

विश्वान्ते सकलां दद्यात्जपेत् पार्वति जापकः ।
मनो श्रीभुवनेश्वर्याः स्यादुत्कीलनमुत्तमम् ॥३॥

हे पार्वति ! विश्वा (ॐ) के अन्त में कलामातृकाओं सहित जापक यदि भुवनेश्वरी के मन्त्र को जपे तो यह उत्तम उत्कीलन होता है ॥३॥

वारत्रयं पठेदादौ मूलमन्त्रस्य वै पराम् ।
मन्त्रस्य भुवनेश्वर्याः भवेत् संजीवनं परम् ॥४॥

मूलमन्त्र के आदि में पराबीज सौः के तीन बार पढ़ने से भुवनेश्वरी के मन्त्र का उत्तम सञ्जीवन होता है ॥४॥

माया भैरवशापञ्च मोचयेत् द्वयमञ्चले ।
माया सा भुवनेश्वर्याः विज्ञेयं शापहारिणी ॥५॥

भुवनेश्वरीमन्त्र के दोनों छोर पर मायाबीज उसके भैरवशाप को दूर करता है । वही माया भुवनेश्वरी की शापहारिणीविद्या जाननी चाहिए ॥५॥

ततः सिद्धमनुं देवि जपेन्मान्त्रिकसत्तमः ।
यथाशक्त्त्या ततो दद्यात् संपुटं साधकेश्वरः ॥६॥

यं विधाय भवेद्देवि सर्वसौख्यमयः सुधीः ॥७॥

हे देवि ! तब मान्त्रिकों में श्रेष्ठ साधक, यथा शक्ति सिद्धमन्त्र का जप करे, सम्पुट मन्त्र जपे, जिससे वह सुधीसाधक सभी प्रकार के सौख्य से युक्त हो जाता है ॥७॥

विश्वान्ते च पराबीजं दशवारं पठेच्छिवे !
मन्त्रोऽयं भुवनेश्वर्याः सम्पुटाख्यसुसिद्धिदः ॥८॥

हे शिवे ! विश्वा (ॐ) के अन्त में पराबीज सौः लगाकर दशबार पढ़ने से भुवनेश्वरी का सुन्दरसिद्धिदायक, सम्पुटनामक मन्त्र होता है ॥८॥

एवं संस्थितमीशानि मनुदेव्याः जपेत्सदा ।
सर्वसिद्धिमवाप्नोति साधको मन्त्रसाधकः ॥९॥

हे ईशानि ! देवी के इस प्रकार के मन्त्र का सदा जप करना चाहिए। ऐसा करने से साधना करने वाला मन्त्रसाधक, सभी सिद्धियों को प्राप्त कर लेता है ॥९॥

इत्येष पटलो देवि साधनाख्यो महेश्वरि ।
तवस्नेहान्मयाप्रोक्तः वक्तव्यः साधकोत्तमैः ॥१०॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये साधनानाम दशम पटलः ॥१०॥

हे देवि ! हे महेश्वरि ! साधनानामक यह पटल तुम्हारे स्नेह के कारण मुझसे कहा गया। यह उत्तम साधकों द्वारा कहे जाने योग्य है ॥१०॥

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के साधना नामक दशवें पटल
की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ॥१०॥



एकादशपटलः

ईश्वरमन्त्रप्रकाश

श्रीभैरवउवाच

अधुना विश्वविद्यान्ते वक्ष्यामि परमार्थदाम्।
सर्वसिद्धिमयीं सांख्यां सर्वतन्त्रेषुगोपिताम् ॥१॥

श्रीभैरव बोले—अब मैं परमार्थदायिनी, सभी तन्त्रों में गोपित, सांख्य-प्रतिपादिता, सर्वसिद्धिमयी, विश्वविद्या को तुमसे कहूँगा ॥१॥

केवलं यो जपेच्छाक्तं मनुं शैवं तु नो जपेत्।
जन्मकोटिषु जप्तेषु न मनुः सिद्धिभाग् भवेत् ॥२॥

जो साधक केवल शाक्तमन्त्र का जप करता है किन्तु शिवमन्त्र का जप नहीं करता, करोड़ों जन्मों तक जप करने के बाद भी वह जपसिद्धि का अधिकारी नहीं होता ॥२॥

यस्याः देव्यास्तु यो देवः शिवस्तत्साधको भवेत्।
ईश्वरो भुवनेश्वर्याः शिव इत्येवमीश्वरि ॥३॥

हे ईश्वरि ! जिस देवी का जो देवता होता है, वही उसका, शिव (भैरव) और साधक भी होता है। ईश्वर भुवनेश्वरी के शिव हैं ॥३॥

ईश्वरस्य मनुं वक्ष्ये सर्वसिद्धिकरं परम्।
तारं भूति रमा लक्ष्मीरीश्वरी याश्मरीततः।
मन्त्रोऽयमीश्वरप्रोक्तः साधकेष्टफलप्रदः ॥४॥

अब मैं भुवनेश्वरी के शिव, ईश्वर का मन्त्र कहता हूँ जो सब प्रकार की समस्त सिद्धियाँ प्रदान करने वाला श्रेष्ठ मन्त्र है। तार (ॐ), भूति (ह्रीं), रमा (श्रीं), लक्ष्मी (श्रीं), ईश्वरी (ह्रीं) तब अश्मरी (नमः) 'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीं ह्रीं नमः' यह ईश्वरमन्त्र कहा गया है। यह साधक को उसका अभीष्टफल प्रदान करने वाला है ॥४॥

अस्यमन्त्रस्य देवेशि ऋषिः प्रोक्तः सदाशिवः।
छन्दोऽनुष्टुप् समाख्यातं ईश्वरो देवता स्मृतः ॥५॥

बीजं च प्रणवः शक्तिः मा रमा कीलकं स्मृतम्।
धर्मार्थकाममोक्षार्थे विनियोगः प्रकीर्तितः ॥६॥

इस मन्त्र के ऋषि-सदाशिव, छन्द-अनुष्टुप्, देवता-ईश्वर, बीज-प्रणव, शक्ति मा (श्रीं), कीलक रमा (श्रीं) तथा धर्मार्थकाममोक्ष के निमित्त विनियोग कहा गया है।

(ॐ अस्य ईश्वरमन्त्रस्य सदाशिवऋषिः अनुष्टुपछन्दः ईश्वरोदेवता ॐ बीजं श्रींशक्तिः श्रींकीलकं धमार्थकाममोक्षार्थे विनियोगः) ॥५-६॥

तारं माया रमा बीजैन्यीसं षट्दीर्घसंयुतैः।
कुर्यात्कराङ्गया देवि साधकोऽभीष्टसिद्धये ॥७॥

साधक तार (ॐ), माया (ह्रीं), रमा (श्रीं) को छः दीर्घ स्वरों से युक्त कर अभीष्टसिद्धिहेतु करन्यास और षडङ्गन्यास करे ॥७॥

अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि सर्वकामार्थसिद्धिदम् ॥८॥

अब सभी कामनाओं एवं अर्थ (पुरुषार्थों) की सिद्धि देने वाले ईश्वरध्यान को कहता हूँ ॥८॥

ई.रध्यान

शुद्धस्फटिकशंकाशं त्रिनेत्रमीश्वरं प्रभुम्।
सिंहचर्मपरीधानं गजचर्मोत्तरीयकम् ॥९॥
सुधाढ्यकलशं शूलं वरं चाभयमेव च।
धारयन्तं कराम्भोजैः शशाङ्ककृतशेखरम् ॥१०॥
पद्मासनं स्मितमुखं वामाङ्गं संसृतं परम्।
भुवनेश्याः महादेव्याः हृत्पद्मे भावयाम्यहम् ॥११॥

मैं अपने हृदयकमल में शुद्धस्फटिक के समान धवल, तीननेत्रों से युक्त, सिंहचर्म (बाघाम्बर) का वस्त्र और गज-चर्म का उत्तरीय (दुपट्टा) धारण किए, अपने चारों हाथों में सुधापूर्णकलश, त्रिशूल, वर तथा अभयमुद्रा, मस्तक पर चन्द्रमा से सुशोभित, पद्मासन में स्थित, मुस्कानयुक्त मुख वाले, अपने बाएंअङ्ग में महादेवी भुवनेश्वरी से सम्पृक्त, ईश्वर का ध्यान करता हूँ। स्पष्टताहेतु इन्हें भुवनेश्वर भी कहा जा सकता है किन्तु तन्त्र में ईश्वर ही प्रोक्त है ॥९-११॥

अनेन ध्यानराजेन मनसा चिन्तितेन च।
विद्याहि भुवनेश्वर्याः कलौ सिद्ध्यति सत्वरम् ॥१२॥

इस ध्यानराज के मानसिकचिन्तन से कलियुग में भुवनेश्वरीविद्या शीघ्र ही सिद्धिदायिनी होती है ॥१२॥

इत्येष पटलो देवी दिव्यमन्त्रप्रकाशकः ।
गोपनीयो महेशानि साधकैः स्वात्मसिद्धये ॥१३॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये ईश्वरमन्त्रप्रकाशनाम एकादशः पटलः ॥११॥

हे देवि ! हे महेशानि ! इस प्रकार का दिव्य, मन्त्रप्रकाशक यह पटल, आत्मसिद्धिहेतु साधकों द्वारा अत्यन्त गोपनीय है ॥१३॥

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के ईश्वरमन्त्रप्रकाश नामक ग्यारहवें पटल की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ।।११।।



द्वादशपटलः

दीक्षाविधि

श्रीभैरवउवाच

दीक्षाविधिं प्रवक्ष्यामि साधकानां हितेच्छया।
विधाय विधिवद् दीक्षां पशुत्वात्प्रविमुच्यते ॥१॥

श्रीभैरव बोले—अब मैं साधकों के हित की इच्छा से दीक्षाविधि को कहता हूँ। विधिवद् दीक्षासंस्कार प्राप्त कर साधक, पशुत्व से मुक्त हो जाता है ॥१॥

दीयते परमां सिद्धिं क्षीयते कर्मवासना।
आप्यते परमं ध्यानं तेन दीक्षा स्मृता शिवे ॥२॥

हे शिवे ! यह परम सिद्धि प्रदान करती है तथा इससे कर्म-वासना का क्षय हो जाता है और परम ध्यान की प्राप्ति होती है। उसी से दीक्षा को दीक्षा कहा गया है ॥२॥

ब्रह्मादिकीटपर्यन्तं जगत् सर्वं महेश्वरि।
पशुत्वमोहितं देवि तस्माद्दीक्षां चरेत् कलौ ॥३॥

हे महेश्वरि ! हे देवि ! ब्रह्मा से प्रारम्भ हो कीटपर्यन्त यह सम्पूर्ण जगत, पशुत्व से मोहित है तथा उस पशुत्व से मुक्ति दीक्षासंस्कार से ही मिलती है। इसलिए कलियुग में दीक्षासंस्कार अवश्य होना चाहिए ॥३॥

श्रीदेवीसेवया देवि चक्रार्चनपुरस्सरम्।
साधकः पशुभावेन मुक्तो ज्ञानं भजेत्ततः ॥४॥

हे देवि ! चक्रार्चनपूर्वक श्रीदेवी की सेवा से साधक, पशुभाव से मुक्त हो, ज्ञान को भजता (धारण करता) है ॥४॥

दीक्षितो याति चरणं दीक्षाहीनो भवेत्पशुः।
दीक्षितस्तु लभेद्ज्ञानं पशुभावोज्झितो विधुः ॥५॥

दीक्षितसाधक देवी के चरणों में शरण पाता है। दीक्षाहीन पशुमात्र होता है। दीक्षित साधक पशुभाव से मुक्त हो ज्ञान को प्राप्त कर चन्द्रमा के समान निर्मल हो जाता है ॥५॥

सर्वपातकमुक्तो हि लभेत् स परमां गतिम् ।
यस्य दीक्षा शिवे नास्ति जीवनान्तं च जन्मिनाम् ॥६॥
स यातु नोत्तरेद्देवि निरयाम्बुनिधेः क्वचित् ॥७॥

हे शिवे ! दीक्षितसाधक सभी पापों से मुक्त हो जाता है। जिसकी दीक्षा नहीं हुई है, उस जन्म लेने वाले प्राणी का जीवनान्त ही समझना चाहिए तात्पर्य यह कि दीक्षाहीनसाधक जीते जी मृतकवत् होता है । इसलिये दीक्षारहित मानवजीवन मृत तुल्य है । हे देवि! वह नरक के सागर से कभी पार नहीं जाता ॥६-७॥

दीक्षाहीनस्य देवेशि पशोः कुत्सित जन्मनः ।
पापोऽधोऽन्तिकमायाति पुण्यं दूरं पलायते ॥८॥

हे देवेशि ! दीक्षारहितसाधक पशुभावापन्न होने से कुत्सितजन्मवाला होता है, पापसमूह उसके समीप आते हैं तथा पुण्य उससे दूर भागते हैं ॥८॥

तस्माद् यत्नेन दीक्षैषा ग्राह्या कृतिभिरुत्तमा ।
बाल्ये वा यौवने वापि वार्धक्येपि सुरेश्वरि ॥९॥

हे सुरेश्वरि ! उत्तमकर्मी जनों द्वारा बचपन, युवावस्था या वृद्धावस्था में जब भी अवसर मिले यत्नपूर्वक दीक्षा, ग्रहण करनी चाहिए ॥९॥

अन्यथा निरयं याति द्वात्रिंशद्वत्सरं नयेत् ।
अन्ते पशुमनुष्योऽसौ सर्पयोनिं ब्रजेच्छिवे ॥१०॥

हे शिवे ! अन्यथा वह बत्तीस वर्षों तक नरक में जाता है अन्त में पशुमनुष्य (पश्वाचारी) हो, मृत्यु के पश्चात् सर्पयोनि में जाता है ॥१०॥

पूर्वपुण्यार्जितां प्राप्य वासनां परमार्थदाम् ।
कुलीनं तं च तन्त्रज्ञं सर्वाङ्गैः सुमनोहरम् ॥११॥
लब्ध्वा भक्त्या प्रणम्यादौ तोषयित्वाविशेषतः ।
प्रणामैर्वन्दनैर्देवि दक्षिणाम्बरपूर्वकम् ॥१२॥
सिद्धसाध्यारि निर्णीतां दीक्षां देव्यायथाविधि ।
गृह्णीयात् परयाभक्त्या साधको येन जायते ॥१३॥

हे देवि ! पूर्वपुण्यवश परमार्थदायिनी वासना को प्राप्त कर कुलीन, तन्त्रज्ञ, सभी अङ्गों से सुन्दर, मनोहर, गुरु को प्राप्त कर पहले उन्हें भक्तिपूर्वक प्रणाम करे तत्पश्चात् उन्हें प्रणाम, वन्दना, दक्षिणा, वस्त्रदानपूर्वक विशेष सन्तुष्ट कर सिद्धसाध्य-अरि आदि का निर्णय कर विधिपूर्वक पराभक्ति युक्त हो देवी की दीक्षा ग्रहण करे । ऐसा करने से वह व्यक्ति, दीक्षा के पश्चात् श्रेष्ठसाधक हो जाता है ॥११-१३॥

गुरुश्च शिष्यरभ्याङ्गं सर्वाङ्गैः सुमनोहरम् ।
गुरुभक्तिरतं बालं कुलीनं गर्भदीक्षितम् ॥१४॥
देवीभक्तिरतं भक्तं पापभीतं कृतात्मकम् ।
दृष्ट्वा दीक्षां परां दद्यात् कृतभागी भवेत्ततः ॥१५॥

गुरु भी सभी अङ्गों से सुन्दर, मनोहर, गुरुभक्तिरत, बाल (सहज), कुलीन, गर्भदीक्षित, कौलवंशीय, देवीभक्तिपरायण, इष्ट एवं गुरुभक्त, कृतात्मा, पाप से भयभीत हो विरत, शिष्य को देखकर उसे परादीक्षा प्रदान करे। ऐसा करने से वह कृत (पुण्य) भागी होता है ॥१४-१५॥

श्रीदेव्युवाच

भगवन् करुणाम्भोधे साधकानां हितेच्छया ।
कदा दीक्षा परा ग्राह्या साधकेन वदस्व मे ॥१६॥

श्रीदेवी बोलीं—हे भगवन् ! आप करुणा के सागर हैं। आप साधकों के कल्याण की कामना से मुझे यह बताइये कि साधक को परादीक्षा कब लेनी चाहिए ॥१६॥

श्रीभैरवउवाच

सुदिने शुभनक्षत्रे संक्रान्तावयनेद्वये ।
नवरात्रदिने पित्र्योःश्राद्धे स्वजनि वासने ॥१७॥
नववर्षदिने देवि चन्द्रसूर्योपरागके ।
शिवरात्र्यां स्वजन्मर्क्षे दीक्षां दद्याद्विचक्षणः ॥१८॥

श्रीभैरव बोले—हे देवि ! शुभनक्षत्र, संक्रान्ति, दोनों अयन, नवरात्री, माता-पिता के श्राद्धदिन, अपने जन्मदिन, नववर्ष (वर्षारम्भ), वर्षप्रतिपदा, चन्द्र-सूर्य के ग्रहण या अपने जन्मनक्षत्र के सुदिन में विचक्षण गुरु, दीक्षा दे ॥१७-१८॥

तत्रादौ शुभनक्षत्रे स्नात्वा सम्पूज्य भैरवम् ।
गत्वा नदीतटं देवि तथा देवालयं क्वचित् ॥१९॥
देवताग्निगुरुं नत्वा मनःसंतोषहेतवे ।
द्वीपं वा परमं पुण्यं देवानामपि दुर्लभम् ॥२०॥
देवतापत्तनं वापि प्राप्त्वा सुप्रणमेत्ततः ।
तत्रादावासनं देवि संशोध्यगुरुमर्चयेत् ॥२१॥

प्रारम्भ में शुभनक्षत्र में नदीतट पर जाकर स्नान करे तथा किसी देवालय में जाकर भैरव का पूजन करे। मन की सन्तुष्टिहेतु देवता, गुरु एवं अग्नि को नमस्कार करे।

परमपुण्यमयद्वीप या देवताओं को दुर्लभ, देवताओं के पत्तन (स्थान) को प्राप्त कर उसे प्रणाम करे तत्पश्चात् सर्वप्रथम आसनशुद्धि कर गुरु का अर्चन करे ॥१९-२१॥

भूतान्निसार्य देवेशि साङ्गन्यासं चरेत्ततः ।
प्राङ्मुखो गुरुमासीनमुत्तराभिमुखं शिशुम् ॥२२॥
संस्थाप्य विधिवद्देवि देवीं स्मृत्वा परामयः ।
देवताग्रे पराप्रीत्यै दीक्षां दद्याद् यथाविधि ॥२३॥

हे देवि ! तब भूतनिस्सारण कर साङ्गोपाङ्गन्यासकर्म करे, तत्पश्चात् गुरु पूर्वाभिमुख बैठे तथा शिशु (शिष्य) को उत्तराभिमुख स्थापित करे । तब परापरायण होकर परा की प्रसन्नता हेतु देवता के सामने देवी का स्मरण कर उसे विधिपूर्वक दीक्षाप्रदान करे ॥२२-२३॥

कर्णमूले महाविद्यां श्रीविद्यासाधकेश्वरः ।
आनन्दासक्तहृदयः, शनैस्त्रिस्त्रिः समर्पयेत् ॥२४॥

साधकेश्वर (श्रेष्ठसाधक) आनन्दासक्तहृदय हो धीरे-धीरे तीन बार शिष्य के क़र्णमूल (कर्णांघि) में महाविद्या श्रीविद्या का समर्पण करे ॥२४॥

गणेशस्य च गायत्र्यास्ततो मृत्युञ्जयस्य च ।
इष्टदेव्याः शिवस्यापि ततो विद्यां समर्पयेत् ॥२५॥

तब गणेशमन्त्र, भुवनेश्वरीगायत्री, मृत्युञ्जयमन्त्र, इष्टदेवी एवं उसके शिव (भैरव) की विद्या (मन्त्र) भी क्रमशः प्रदान करे ॥२५॥

तोषयित्वा प्रणामैश्च दक्षिणाभिः शुभाम्बरैः ।
तदाज्ञां शिरसादाय जपाय परमेश्वरि ॥२६॥

हे परमेश्वरि! तब शुभवस्त्र, दक्षिणा, प्रणाम आदि से शिष्य, गुरु को सन्तुष्ट करे तथा मन्त्रजप के लिए उनकी आज्ञा, सिर झुका कर स्वीकार करे ॥२६॥

इति दीक्षाविधेः सारभूतो गुह्यो महेश्वरि ।
पटलः साधकैर्यातु न प्रकाश्यो कदाचन ॥२७॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये दीक्षाविधिनाम द्वादशः पटलः ॥१२॥

हे महेश्वरि ! यह पटल दीक्षाविधि का सारभूत और गोपनीय है । साधकों द्वारा इसे कभी भी अपात्र को नहीं प्रकाशित करना चाहिए ॥२७॥

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के दीक्षाविधिनामक बारहवें पटल की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ।।१२।।



त्रयोदशपटलः

पुनश्चरणविधि

श्रीभैरवउवाच

अथ देवि प्रवक्ष्यामि पुरश्चरणमुत्तमम् ।
यस्य साधनमात्रेण मन्त्रः कल्पसमो भवेत् ॥१॥

श्रीभैरव बोले—हे देवि ! अब मैं उत्तम पुरश्चरणविधि को कहूँगा जिसके साधन-मात्र से मन्त्र, कल्पवृक्ष के समान फलदायक हो जाता है ॥१॥

तत्रादौ सुदिने देवि सुनक्षत्रे सुपर्वणि ।
पुरश्चरणकर्मादावारभेत् साधकोत्तमः ॥२॥

इस क्रम में सर्वप्रथम उत्तमसाधक, सुदिन, सुन्दरनक्षत्र तथा पर्व अर्थात् मुहूर्त उपस्थित होने पर पुरश्चरणकर्म का आरम्भ करे ॥२॥

वर्णलक्षं जपेन् मन्त्रं तदर्द्धं वा सुरेश्वरि ।
एकलक्षावधिं कुर्यान्नातो न्यूनं कदाचन ॥३॥

पुरश्चरणप्रक्रिया में मन्त्र में जितने वर्ण हों उतने या उसके आधीलाखसंख्या में मन्त्रजप करना चाहिए अथवा एकलाख जप करे किन्तु इससे कम कभी न करे ॥३॥

श्रीदेव्युवाच

लक्षजप्तो मनुर्देव यदि कल्पद्रुमो भवेत् ।
तदा किं साधको लोके लभेत्तत्वं वदस्व मे ॥४॥

श्रीदेवी बोलीं—हे देव ! मन्त्र एक लाख जपे जाने पर कल्पवृक्ष के समान् फलप्रद हो जाता है । तब पुरश्चरणकर्त्ता साधक, लोक में क्या उपलब्धि करता है । इसे संक्षेप में बताइए ॥४॥

कस्य हस्तेन मन्त्रस्य पुरश्चरणकक्रियाम् ।
कारयेत् साधकश्चैतत्संशयं छिन्धि धूर्जटे ॥५॥

हे धूर्जटे ! साधक किसके हाथ से पुरश्चरण की क्रिया कराए । इस संशय को दूर कीजिए । पुरश्चरण का अधिकारी कौन है, यह बताये ॥५॥

श्रीभैरवउवाच

साधुपृष्टं त्वया देवि शृणु वक्ष्यामि पार्वति।
न कदाचित् स्वयं कुर्यादादौ मन्त्रपुरस्क्रियाम् ॥६॥

श्री भैरव बोले—हे देवि ! तुम्हारे द्वारा उत्तमप्रश्न किया गया है। हे पार्वति ! मैं कहता हूँ तुम उसे सुनो। साधक को मन्त्रपुरश्चरण की क्रिया, पहले स्वयं नहीं करनी चाहिए ॥६॥

गुरुहस्तेन देवेशि साधकस्यकरेण वा।
कुर्यान्मन्त्रवरस्यास्य पुरश्चरणकक्रियाम् ॥७॥

हे देवेशि ! इस श्रेष्ठमन्त्र की पुरश्चरण की क्रिया गुरु के हाथ से अथवा उनके अभाव में किसी साधक से करानी चाहिए ॥७॥

जीवहीनो यथा देही सर्वकर्मसु न क्षमः।
पुरश्चरणहीनो हि न मन्त्रः सिद्धिदायकः ॥८॥

जिस प्रकार जीवरहितशरीर सभी कामों के सम्पादन में समर्थ नहीं होता उसी प्रकार पुरश्चरणरहितमन्त्र भी सिद्धिदायक नहीं होता ॥८॥

जपाद्दशांश होमस्स्यात्तद्दशांशं हि तर्पणम्।
मार्जनं तद्दशांशेन तद्दशांशेन भोजनम् ॥९॥

जप का दशांश होम, उसका दशांश तर्पण, उसका दशांश मार्जन और उसका दसवाँभाग ब्राह्मणभोजन करना चाहिए ॥९॥

मन्त्रस्यादौ प्रमादाच्चेत् स्वयंकुर्यात्पुरस्क्रियाम्।
तदा जाप्यं भवेद् व्यर्थं क्षेत्रेष्विवघृतं यथा ॥१०॥

यदि कोई साधक, गुरु या अन्य साधक से कराने की अपेक्षा प्रमादवश स्वयं पहले पहल पुरश्चरण की क्रिया कर ले तो उसका जप उसी प्रकार विफल हो जाता है जैसा खेत में गिरा हुआ घी ॥१०॥

तस्माच्च गुरुहस्तेन साधकस्य करेण वा।
पुरश्चर्या स्वमन्त्रस्य कारयेत्साधकोत्तमः ॥११॥

इसलिए उत्तमसाधक अपने मन्त्र का पुरश्चरणकार्य, गुरु या अन्य साधक के हाथ से ही कराए ॥११॥

पुरश्चरणसंकल्पं दत्वादौ गुरवे शिवे।
यथाविधि जपं कुर्याद् गुरोः कुलमनुं प्रिये ॥१२॥

हे शिवे ! हे प्रिये ! सर्वप्रथम गुरु आदि को पुरश्चरण का संकल्प दे तब गुरुप्रदत्त कुलमन्त्र का यथाविधि स्वयं जप करे ॥१२॥

गुरोः पादप्रसादेन पुरश्चर्याफलं शिवे।
गृह्णीयात्साधको देवि गुरुं सन्तोषयेत्ततः ॥१३॥
दक्षिणाभिः शुभैः वस्त्रैर्यथाविभवमात्मनः।
ततः स्वयं पुरश्चर्या बह्वीं कुर्यात् साधकः ॥१४॥
येन मन्त्रः कलौ शीघ्रमष्टसिद्धिप्रदो भवेत् ॥१५॥

हे शिवे ! हे देवि ! साधक, गुरु के चरणों की कृपा से पहले पुरश्चरण के फल को प्राप्त करे तब उन्हें अपने वैभव के अनुरूप उत्तम, दक्षिणा तथा वस्त्रादि से सन्तुष्ट करे। तत्पश्चात् वह स्वयं बहुत संख्या में पुरश्चरण करे। ऐसा करने से वह मन्त्र कलियुग में शीघ्र ही अष्टसिद्धियों का देनेवाला हो जाता है ॥१३-१५॥

पर्वताग्रे नदीतीरे देवतायतने तथा।
एकान्ते च शुचौ देशे जपेन्नियतमानसः ॥१६॥

साधक को चाहिए कि वह पुरश्चरणप्रक्रिया में नित्य एकाग्रमन से, पर्वत पर, नदी तट पर, देवालय में, एकान्त में, पवित्र स्थान पर स्थित हो, जप सम्पन्न करे। इसमें जप-स्थानादि और मन दोनों ही नियत (स्थिर) होना चाहिए ॥१६॥

ब्रह्मचर्यधरो वीरो मिताहारो जितेन्द्रियः।
अनृतं मत्सरं दम्भं त्यजेत्प्रतिग्रहं तथा ॥१७॥

वीर (साधक), ब्रह्मचर्यचारी, मिताहारी, जितेन्द्रिय रहे। वह असत्य, मत्सर (द्वेष), दम्भ (अहंकार) और प्रतिग्रह (दान लेने) को छोड़ दे ॥१७॥

चारुमूलफलं क्षीरं दधिमिष्ठान्न सक्तवः।
शाकं चाष्टविधं चान्नं साधकस्योच्यते बुधैः ॥१८॥

विद्वान् साधकों द्वारा सुन्दर कन्द-मूल-फल, दूध, दही, मिष्ठान्न, सत्तू (चूर्ण), शाक एवं आठ प्रकार के अन्न साधकों के लिए ग्राह्य बताए गए हैं ॥१८॥

तदप्रशस्तं नात्युष्णं नचोच्छिष्टं नचाधिकम्।
मृदुकोष्णं सुपक्कं च कुर्याद्धि लघुभोजनम् ॥१९॥
नेन्द्रियाणां स्यात्तद्या भुञ्जीत साधकः ॥२०॥

वह भी अनुचित, अत्यधिकगर्म, जूठा, या अधिकमात्रा में उचित नहीं है।

साधक को चाहिए कि वह मृदु, थोड़ा गर्म, भली-भाँति पका हुआ, हल्का भोजन करे जिससे इन्द्रियों में किसी प्रकार का विकार न उत्पन्न हो ॥१९-२०॥

यद्वा तद्वा परित्याज्यं दुष्टान्नं कुत्सितं फलम् ।
प्रशस्तान्नं समस्नीयान् मन्त्रसिद्धिसमीहया ॥२१॥

मन्त्रसिद्धि का मन से प्रयत्नशील साधक, जैसे-तैसे भोजन, दुष्टान्न और कुत्सितफल का त्याग कर दे । वह प्रशस्त (उचित) अन्नादि का भोजन करे ॥२१॥

तपोव्रतस्यसिद्धिः स्याल्लक्षेनैव न संशयः ।
शाकभक्ष्यो हविष्याशी कलौ लक्षत्रयं जपेत् ॥२२॥

यद्यपि एतदर्थ तप और व्रत की सिद्धिमात्र एक लाख मन्त्रजप से ही हो जाती है । इसमें कोई संशय नहीं है । तथापि कलि में साधक को हविष्यान्न तथा शाकादि का भोजन कर तीन लाख और जप करना चाहिए ॥२२॥

यतिश्च ब्रह्मचारी च भिक्षान्नजीविनौ मतौ ।
सर्वधर्मवहिर्भूतो गृही भिक्षान्नजीवनात् ॥२३॥

यति (सन्यासी) और ब्रह्मचारी, भिक्षान्नजीवी कहे गए हैं किन्तु यदि गृहस्थ भी भिक्षान्नभोजी हो जाय तो वह सभी धर्मों से वहिष्कृत हो जाता है ॥२३॥

लवणं पललं चैव क्षारं क्षौद्रं रसान्तरम् ।
माषमुद्गमसूरादि कोद्रकान् चणकानपि ।
असम्भाषणमन्यायं बर्जयेदन्यपूजनम् ॥२४॥

पुरश्चरण काल में साधक को नमक, मांस, क्षार (खारा), क्षौद्र (मधु), रसान्तर (रसीले), माष (उर्द), मुद्ग (मूंग), मसूर, कोदो, चना, का भोजन; अनुचित विषय या जन से भाषण और अन्यायक्रम एवं अन्य देव-गुरु आदि का पूजन छोड़ देना चाहिए ॥२४॥

बिना श्रमोचितं नित्यमथ नैमित्तिकं च यत् ॥२५॥
स्त्रीशूद्रपतितव्रात्यनास्तिकोच्छिष्टभाषणम् ।
असत्यभाषणं चैव कौटिल्यं च परित्यजेत् ॥२६॥

साधक, उचितश्रमरहित एवं नित्य-नैमित्तिककर्मरहितजीवन, स्त्री-शूद्र-पतित-व्रात्य, नास्तिक से भाषण तथा उच्छिष्टभोजन, असत्यभाषण और कुटिलता का परित्याग कर दे ॥२५-२६॥

सद्भिरपि न भाषेत जपहोमार्चनादिषु ॥२७॥

जप, होम और पूजन आदि में उपर्युक्त के अतिरिक्त, सज्जनों से भी अनावश्यक बात नहीं करनी चाहिए ॥२७॥

बाग्यतः कर्मनिर्वर्त्य निस्पृहस्य वनादिषु।
वर्जयेद्गीतकाव्यादि श्रवणेऽनृतदर्शनम् ॥२८॥

साधक वाणी को नियन्त्रित रखते हुए, कर्म से निवृत्त, तथा वनादि के भ्रमण से भी निस्पृह हो, गीत,काव्यादि सुनने तथा असत्य या अनुचित दर्शन का त्याग करे ॥२८॥

ताम्बूलगन्धलेपं च पुष्पधारणमेव च।
मैथुनं तत्कथालापं तद्गोष्ठीं परिवर्जयेत् ॥२९॥

साधक, पान, गन्ध, लेप, पुष्पधारण, मैथुन या तत्सम्बन्धी वार्तालाप, या मैथुनाभिलाषि लोगों के सन्सर्ग का भी त्याग कर दे ॥२९॥

कौटिल्यं क्षौद्रमभ्यङ्गमनिवेदितभोजनम्।
असंकल्पित कृत्यं च वर्जयेन्मर्दनादिकम् ॥३०॥

वह कुटिलता, मधु, तैल, उबटन आदि के लेप, विना दिया भोजन, संकल्प-हीनकर्म, मालिश आदि न करे ॥३०॥

स्नायाच्च पञ्चगब्येन केवलामलकेन च।
श्रुतिस्मृत्यागमोत्कैश्चमन्त्रैः स्नायादनन्तरम् ॥३१॥
स्नानं त्रिषुवणं प्रोक्तमशक्तौद्विःसकृत्तथा ॥३२॥

वह पहले पञ्चगव्य या केवल आँवलामिश्रितजल से स्नान करे तत्पश्चात् वह श्रुति-स्मृति एवं आगमशास्त्रनिर्दिष्ट मन्त्रों से स्नान करे। प्रातः सायं एवं मध्याह्न तीनों समय स्नान करना चाहिए। अशक्त होने पर दो अथवा एक बार भी पर्याप्त है ॥३१-३२॥

अस्नातस्य फलं नास्ति नचातर्पयतः पितृन्।
पुरश्चरणकाले तु तद्धोमाचरणे तथा ॥३३॥

पुरश्चरणकाल में तत्सम्बन्धी होमादि आचरण में या पितृगणों के तर्पण में स्नान रहित अवस्था में कोई फल नहीं प्राप्त होता है। अतः प्रतिदिन स्नान अवश्य करना चाहिए ॥३३॥

मूलं जप्त्वैकलक्षं तु कृत्वा होमं दशांशतः।
साधकैः क्षत्रियेनापि दशाशं होममाचरेत् ॥३४॥

तर्पयेत्सहिते देवीं भोजयेत्साधकांस्ततः ।
पुरश्चर्याविधिश्चैषा वर्णिता कुलसुन्दरी ॥३५॥

हे कुलसुन्दरि ! पुरश्चरणकर्ता साधक उपर्युक्त आचारों का पालन करते हुए पहले एक लाख मन्त्रजप करे तब उसका दशांश होम करे । क्षत्रियों को भी दशांश ही होम करना चाहिए । यहाँ क्षत्रिय शब्द वीर साधकों हेतु प्रयुक्त प्रतीत होता है। तत्पश्चात् वह परिवार सहित देवी का तर्पण करे और साधकों को भोजन कराए । यही पुरश्चर्याविधि कही गई है ॥३४-३५॥

अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते ॥३६॥
अष्टम्यां च चतुर्दश्यां पक्षयोरुभयोरपि ।
सूर्योदयात्समारभ्य यावत्सूर्यास्तयो भवेत् ॥३७॥

अथवा अन्य प्रकार के पुरश्चरण भी कहे गये हैं । दोनों पक्षों की अष्टमी या चतुर्दशी को सूर्योदय से आरम्भ कर सूर्यास्त तक निर्भय होकर जप करने से भी वह मन्त्र, कल्पवृक्ष के समान फलदायी हो जाता है ॥३६-३७॥

चन्द्रसूर्यग्रहेवापि ग्रासावधिविमुक्तितः ।
यावत्संख्यो मनुर्जप्त्वा तावद्धोमादिकं चरेत् ।
सर्वसिद्धिश्वरोमन्त्रो भवेत्साधकवन्दिते ॥३८॥
शरत्काले रवौ देवि जपेन्मन्त्रं यथाविधि ॥३९॥

हे साधकों द्वारा वन्दिता ! चन्द्रमा और सूर्य के ग्रहण के समय भी उनके ग्रास से मुक्ति पर्यन्तकालखण्ड में जितनी संख्या में जप किया जाय उतना ही होम करे तो वह मन्त्र सभी प्रकार की सिद्धियों का स्वामी हो जाता है । ऐसा शरद्काल में रविवार को विधिपूर्वक मन्त्रजप करने से भी होता है ॥३८-३९॥

निशीथे रचयेद्धोमं क्षत्रन्यस्ताहुतिं शिवे ।
तत्क्षणात् साधको देवि क्षत्रियोपि शुभं लभेत् ॥४०॥

हे शिवे ! निशीथकाल में क्षत्रियसाधक क्षत्राणि में आहुति दे होम करे तो वह क्षत्रियसाधक भी तत्काल शुभ प्राप्त करता है । यह वीरसाधना का क्रम है, इसे सद्गुरु के निर्देशन में ही करना चाहिए ॥४०॥

अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते ।
गुरुमानीयसंस्थाप्य देवतापूजनं चरेत् ॥४१॥
वस्त्रालङ्कारहेमाद्यैः सन्तोष्यगुरुमेवच ।
तत्सुतं तत्सुतांश्चैव तस्यपत्नीं तथैव च ।
पूजयित्वा मनुं जप्त्वा सर्वसिद्धिश्वरो भवेत् ॥४२॥

अथवा अन्य प्रकार से भी पुरश्चरण कहा जाता है। गुरु को बुलाकर उन्हें स्थापित कर, पहले देवता का पूजन करें तब वस्त्रालङ्कार, हेम (दक्षिणा) आदि से गुरु, उनके पुत्र, पुत्री, पत्नी का पूजन कर मन्त्रजप करने से साधक सभी सिद्धियों का स्वामी हो जाता है ॥४१-४२॥

अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते।
सहस्त्रारे गुरोःपादपद्मंध्यात्वा प्रपूज्य च।
केवलं देवभावेन सर्वसिद्धिश्वरो भवेत् ॥४३॥

अथवा अन्य प्रकार से भी पुरश्चरण कहा गया है—यदि साधक सहस्त्रार में गुरु के चरणों का ध्यान एवं पूजन केवल देवभाव से करे तो भी वह सभी सिद्धियों का स्वामी हो जाता है ॥४३॥

गुरवे दक्षिणां दद्यात् यथाविभवमात्मनः।
गुरोरनुज्ञामात्रेण दुष्टमन्त्रोऽपि सिध्यति ॥४४॥

इस निमित्त अपने वैभव के अनुसार गुरु को दक्षिणा दे। गुरु की आज्ञा-प्राप्त होते ही दुष्ट-मन्त्र भी सिद्ध हो जाता है ॥४४॥

जपश्रान्तस्तुताध्याये ध्यानश्रान्तस्तु तं जपेत्।
जपध्यानसमायुक्तो मन्त्री सिध्यति नान्यथा ॥४५॥

जप करते-करते थक जाय तो उसका ध्यान करे। ध्यान से थक जाय तो जप करे। इस प्रकार जप-ध्यान युक्त मन्त्रजापक सिद्धि को प्राप्त करता है अन्यथा नहीं कर सकता ॥४५॥

इत्येष पटलो गुह्यो मन्त्रसारमयं ध्रुवम्।
अप्रकाश्योप्यदातव्यो नाख्येयो ब्रह्मवादिभिः ॥४६॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये पुरश्चरणविधिर्नाम त्रयोदशः पटलः ॥१३॥

इस प्रकार यह मन्त्रसारमय गुह्यपटल निश्चितरूप से प्रकाशित करने और देने योग्य नहीं है। इसे ब्रह्मवादियों (वैदिकों) से भी नहीं कहना चाहिए ॥४६॥

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के पुरश्चरणविधिनामक तेरहवें पटल की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ।।१३।।



चतुर्दशपटलः

होमविधि

श्रीभैरवउवाच

अथ होमविधिं वक्ष्ये सर्वतन्त्रेषुगोपितम्।
सार श्रीभुवनेश्वर्या मन्त्रराजस्य पार्वति ॥१॥

श्रीभैरव बोले—हे पार्वति ! मैं श्रीभुवनेश्वरी के सारभूत, सभी तन्त्रों में गोपितमन्त्रराज की होमविधि को कहूँगा ॥१॥

ध्यात्वा देवि परां देवीं गुरुं ध्यात्वा सशक्तिकम्।
जपेच्छ्रीचक्रपुरतो निशीथे मन्त्रमीश्वरी।
अयुतं चैकलक्षं वा दशांशं होममाचरेत् ॥२॥

हे ईश्वरि ! हे देवि ! परादेवी तथा शक्तिसहित गुरु का ध्यान कर, श्रीचक्र के सम्मुख मध्यरात्रि में दशहजार या एक लाख मन्त्र जपकर उसका दशांश होम करे ॥२॥

कोटि लक्षं प्रजप्तस्य मन्त्रस्य सुरसुन्दरि।
बिना दशांश होमेन न तत्फलमवाप्नुयात् ॥३॥

हे सुरसुन्दरि ! करोड़ों लाख मन्त्र जप करने पर भी उसके दशांश होम के अभाव में, उसका फल नहीं प्राप्त होता ॥३॥

बिना श्मशानगमनं नित्यहोमजपादयः।
न सिध्यति वरारोहे कलौ भैरवशापतः ॥४॥

हे श्रेष्ठ जंघोवाली ! भैरव के श्राप के कारण विना श्मशानगमन (शवसाधन), नित्यहोम तथा जप आदि के क्रियाएँ सिद्ध नहीं होती हैं ॥४॥

घृतपायसमृद्वीका गुडपुष्पशिताशरैः।
होमैर्दशांशतः कार्यो जपस्य सुरवन्दिते ॥५॥

हे देवताओं से वन्दित देवि ! घी, खीर, मृद्वीक (दाख), गुडपुष्प (महुआ के फूल), मिश्री, आदि से मन्त्रजप का दशांश होम करना चाहिए ॥५॥

पञ्चामृतेन देवेशि! तद्दशांशेन मार्जयेत्।
तर्पयित्वा दशांशेन पञ्चामृतमुखं सुधीः।
भोजयित्वा दशांशेन दीक्षितांश्च द्विजोत्तमान्॥६॥

हे देवेशि ! बुद्धिमान् साधक होम की दशांशसंख्या में पञ्चामृत से तर्पण, उसके दशांश से पञ्चामृतादि से ही मार्जन भी करे। तत्पश्चात् उसकी दशांशसंख्या में दीक्षित एवं उत्तम द्विजों (साधकों) को भोजन कराना चाहिए॥६॥

ततो देवि पुरश्चर्याफलमाप्नोति साधकः।
अन्यथा सिद्धिहानिः स्याज्जप्तस्यापि मनोः सदा॥७॥

हे देवि ! उपर्युक्त कर्मों को करके साधक पुरश्चर्या का फल प्राप्त करता है। अन्यथा सदैव मन्त्रजप करने के बाद भी सिद्धिहानि ही होती है॥७॥

श्रीदेव्युवाच

यस्य नैतावता शक्तिः होमं कर्तुं दशांशतः।
स कथं क्रियते होमं तद् वदस्व महेश्वर॥८॥

श्रीदेवी बोलीं—हे महेश्वर ! यदि साधक में होमादि पूर्वोक्तकर्म की सामर्थ्य न हो तो वह कैसे होम सम्पन्न करे, यह बताइये॥८॥

श्रीभैरवउवाच

यस्य होमं शिवे कर्तुं शक्तिर्नास्ति दशांशतः।
तस्य युक्तिं ब्रवीम्यद्य कौलिकानां हिताय च॥९॥

श्रीभैरव बोले—हे शिवे ! जिसके दशांश होम करने की सामर्थ्य नहीं है, ऐसे कौलिकसाधक के हितार्थ मैं युक्ति बताता हूँ॥९॥

शुभेऽह्नि सायं दवेशि गत्वोपवनमण्डलम्।
श्मशानं सुमुखं धृत्वा पृष्ठे वा परमेश्वरि॥१०॥
श्मशानं प्रणमेद्भक्त्या साधकः साधकैः समम्।
ज्वालाकरालवदने कल्पान्तदहनप्रिये।
प्राणे प्राणलयोद्भूते चित्ते मेऽनुग्रहं कुरु॥११॥

हे देवेशि ! हे परमेश्वरि ! ऐसा साधक साधकों के सहित शुभमुहूर्त में किसी उपवन में जाए। वहाँ श्मशान की ओर मुख अथवा पीठ करके वह, "ज्वाला कराल वदने.......मेऽनुग्रहं कुरु" मन्त्र से श्मशान को भक्तिपूर्वक प्रणाम करे।

मन्त्रार्थ—हे भयानक ज्वालाओं से युक्त मुख, कल्पान्तदहन में समर्थ अग्नि को प्रिय ! हे प्राणस्वरूप ! मेरे लयोभूत प्राण तथा चित्त पर आप अनुग्रह करें ॥१०-११॥

इति नत्वा महादेवि ज्ञात्वा दिग्भूत भैरवान् ।
निवसेत्तत्र रात्रौ तु कुर्याद्धोमं कुलेश्वरि! ॥१२॥

हे कुलेश्वरि ! हे महादेवि ! इस प्रकार श्मशान को नमस्कार कर तथा दिक्पालरूप भैरवों को जानकर (दिग्रक्षण करके) रात्रि में वहाँ निवास करे तथा होमकर्म सम्पन्न करे ॥१२॥

ऐशान्यां दिशि देवेशि श्रीचक्रं तु विभावयेत् ॥१३॥
सम्पूज्य विधिवमन्त्रैर्दिक्पालांस्तत्र पार्वति ।
गणेशं पूजयेत्तत्र पूजयेत् कुलयोगिनी ॥१४॥

हे पार्वति ! हे देवेशि ! ऐशान्यदिशा (ईशानकोण) में श्रीचक्र की भावना कर वहीं मन्त्रों द्वारा विधिवत् दिक्पाल, गणेश एवं कुल योगिनियों का पूजन करे ॥१३-१४॥

तत्पूर्वतः खनेत्कुण्डं हुनेदाज्यं च विद्यया ।
त्रिकोणं कुण्डमीशानि हस्ताधोऽगाधमद्रिजे ।
हस्तैक विस्तृतं विश्वं तस्मिंश्चक्रं विभावयेत् ॥१५॥

हे ईशानि ! हे अद्रिजा (पर्वतपुत्री) ! उपर्युक्त पूजन के पश्चात् एक हाथ गहरा और त्रिकोण कुण्ड, उसकी पूर्व दिशा में खोदे । उसमें सब ओर से एक हाथ चौड़े चक्र की भावना करते हुए शक्तिमन्त्र से घी की आहुति दे ॥१५॥

बिन्दुत्रिकोणषट्कोणं वसुपत्रं त्रिवर्तुलम् ।
भूगृहाङ्कं समाख्यातं बह्निचक्रं सुरेश्वरि ॥१६॥

हे सुरेश्वरि ! कुण्ड या स्थण्डिल में विन्दु, त्रिकोण, षट्कोण, अष्टदलकमल और तीन वृत्त तथा भूगृह (भूपुर) का अङ्कन ही वह्निचक्र कहा गया है ॥१६॥

गणेशधर्मवरुणाः कुबेरसहितास्ततः ।
पूजनीयाः विशेषेण गन्धाक्षतप्रसूनकैः ॥१७॥

तब गणेश, धर्मराज, वरुण का कुबेर सहित गन्धाक्षतपुष्प से विशेषरूप से पूजन करे ॥१७॥

ब्राह्मयाद्याः मातरः पूज्याः असिताद्याश्च भैरवाः ।
वसुपत्रेषु सम्पूज्या बह्निचक्रे महेश्वरि ॥१८॥

हे महेश्वरि ! वह्निचक्र में ही उपर्युक्त देवताओं के सहित, ब्राह्मी आदि अष्टमातृकाओं एवं असितादि आठभैरवों का, उसके आठ पत्रों में पूजन करे ॥१८॥

माया च मोहिनी चैव तृतीया च मनोन्मना ।
मुक्तकेशी च मातङ्गी, मदिराक्षी षडस्त्रके ॥१९॥

उसके षट्कोण में माया, मोहिनी, मनोन्मनी, मुक्तकेशी, मातङ्गी, मदिराक्षी देवियों का पूजन करे ॥१९॥

त्रिकोणे यमुना-गङ्गा सम्पूज्या च सरस्वती ।
बिन्दौ श्रीभुवनेशानी गन्धाक्षतप्रसूनकैः ।
विन्द्वावरणिनामध्ये मूलमन्त्रेण मान्त्रिकः ॥२०॥

मन्त्रसाधक त्रिकोण में गङ्गा, यमुना, सरस्वती का तथा बिन्दु पर आवरण देवताओं सहित श्रीभुवनेश्वरीदेवी का मूलमन्त्र से गन्धाक्षत एवं पुष्प द्वारा पूजन करे ॥२०॥

बह्निमावाह्य मूलेन तदावाहनमुद्रया ।
ॐ ॐ रां अग्नये स्वाहा मन्त्रेणेति सुरेश्वरि ॥२१॥

हे सुरेश्वरि ! कुण्ड में वह्निचक्र के पूजन के पश्चात् आवाहनमुद्रा से मूलमन्त्र सहित 'ॐ ॐ रां अग्नये स्वाहा' इस मन्त्र से अग्नि का आवाहन करे ॥२१॥

बह्निं मूलेन संस्कृत्य कृत्वाज्यं घृतमीश्वरि ।
दशांशं होमसंकल्पं कुर्यान्मूलस्य साधकः ॥२२॥

हे ईश्वरि ! तब साधक मूलमन्त्र से अग्नि और हवनीयघृत का संस्कार कर मूलमन्त्र जप के दशांश हवन का संकल्प करे ॥२२॥

मालया दहने दद्यादाहुतीनां शतत्रयम् ।
आहुतिः क्षत्रियैर्न्यस्तातत्रबह्नौ हुनेत् प्रिये ॥२३॥

हे प्रिये ! तब (संकल्प के पश्चात्), माला ले, क्षत्रिय (वीरसाधक) द्वारा न्यस्त, अग्नि में जपपूर्वक तीन सौ, मन्त्रों से आहुति दे ॥२३॥

पुष्पैः फलैराज्यमिश्रैस्ततो दद्यात् बलिंप्रिये ।
मकारैः पञ्चभिर्देवि पुनर्जप्त्वात्र पूर्ववत् ।
आहुतीनां शतं दद्यात् अष्टोत्तरमधोमुखः ॥२४॥

हे देवि ! हे प्रिये ! यह आहुति घीमिश्रितफूल और फलों से दी जानी चाहिए। तत्पश्चात् साधक पञ्चमकारों से बलिप्रदान करे । पुनः पहले की भाँति जप कर, अधोमुख १०८ आहुतियाँ दे ॥२४॥

ततः साधकचक्रस्य क्षत्रियस्य च पार्वती ।
पूजां विधाय चक्रेस्मिन् स्तोषयेन्नतिभिर्गुरुम् ॥२५॥

हे पार्वति ! तब साधक, चक्र में चक्र और क्षत्रिय दोनों की ही पूजा कर, नमस्कार द्वारा गुरु को सन्तुष्ट करे ॥२५॥

आशीभिर्वर्धयेत् क्षेत्रं येनासु क्षोणिपो भवेत् ।
क्षत्रियोपि वदेत्तत्र पुरश्चर्याफलं मनोः ।
लभस्व साधकश्रेष्ठ ततः पूर्णाहुतिं हुनेत् ॥२६॥

गुरु के आशीर्वाद से क्षेत्र का विकास करे जिससे वह शीघ्र ही पृथ्वीपति हो जाता है । (यहाँ क्षेत्र से साधनाक्षेत्र तथा पृथ्वीपति से सदाशिवत्व की प्राप्ति अर्थ प्रतीत होता है) । क्षत्रिय (वीर या गुरु), उस समय कहे, हे साधकों में श्रेष्ठ साधक ! तुम मन्त्र की पुरश्चर्या का फल प्राप्त करो । तत्पश्चात् पूर्णाहुति का होम करे ॥२६॥

लभस्व साधकश्रेष्ठ ततः पुर्णाहुतिं हुनेत् ।
ततो वर्म पठेद्देवि येन देवीमयो भवेत् ॥२७॥

हे देवि ! तब पुर्णाहुति के पश्चात् साधक, कवच का पाठ करे । ऐसा करने से वह देवीमय हो जाता है ॥२७॥

ततो देवीं च सशिवां मन्त्री संहारमुद्रया ।
साधकांस्तर्पयित्वादौ भक्ष्यपानादिभिः शिवे ।
विसृज्य साधकान् देवीं सशिवां सपरिच्छदाम् ॥२८॥

हे शिवे ! तदनन्तर वह मन्त्रसाधक शिवा (शक्ति) के सहित देवी और साधकों को भक्ष्यपान आदि से तृप्त कर, संहारमुद्रा से परिच्छद (आवरण देवता) सहित देवी का विसर्जन करे, साथ ही शक्तिसहित साधकों को भी विदा करे ॥२८॥

पुरश्चर्याफलं प्राप्य साधको मुक्तिभाग्भवेत् ॥२९॥

ऐसा करके पुरश्चर्या का फल प्राप्त कर साधक, मुक्ति का भागी होता है ॥२९॥

इत्येष पटलो दिव्यो होमपूजामयो ध्रुवम्।
सर्वतत्त्वैकनिलयो गोपनीयो मुमुक्षुभिः ॥३०॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये होमविधिर्नाम चतुर्दशः पटलः ॥१४॥

इस प्रकार का होम-पूजामय यह पटल निश्चितरूप से दिव्य, सभी तत्त्वों का एकमात्रआश्रय और मुमुक्षुओं द्वारा गोपनीय है ॥३०॥

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के होमविधि नामक चौदहवें पटल
की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ।।१४।।



पञ्चदशपटलः

चक्रसर्वस्व

श्रीभैरवउवाच

अधुना चक्रपूजान्ते वक्ष्यामि नगनन्दिनी ।
वरदा भविता शीघ्रं यथा श्रीभुवनेश्वरी ॥१॥

श्रीभैरव बोले—हे नगनन्दिनि, पर्वतपुत्री पार्वति ! अब मैं तुमसे चक्रपूजासम्बन्धी कुछ विशेष कहूँगा, जिसके करने से श्री भुवनेश्वरीदेवी भी शीघ्र वरदायिनी हो जाती हैं ॥१॥

एकादशाधिकादेवि साधकाः परमार्थदाः ।
एकादशापि चक्रे तु वर्णिताः साधकाः शुभाः ॥२॥

चक्रार्चन में भागीदार साधकों (वीरों) की संख्या का विवेचन करते हुए कहते हैं—

जिसमें ग्यारह से अधिक साधक हों वह (चक्रपूजा) परमार्थदेने वाली होती है । ग्यारह साधकों वाली पूजा भी शुभदायिनी कही गई है ॥२॥

उत्तमा नव देवेशि मध्यमाः पञ्च साधकाः ।
अधमास्तु त्रयोदेवि न पूज्याश्चक्रमध्यगाः ॥३॥

हे देवेशि ! नवसंख्यावाली उत्तम, पाँचवाली मध्यम तथा तीनवाली अधम पूजा होती है । हे देवि ! यह पूजा, चक्र के मध्य में करने योग्य नहीं है ॥३॥

विना चक्रार्चनं नैव नित्यपूजा जपादयः ।
फलदा योगिनीशापात्तस्माच्चक्रं प्रपूजयेत् ॥४॥

योगिनियों के शाप के कारण, चक्रार्चन किए बिना नित्य किए जाने वाली पूजा एवं जप आदि की क्रियाएँ फलदायक नहीं होतीं। इसलिए चक्रपूजन अवश्य करना चाहिए ॥४॥

कुहूपूर्णेन्दु संक्रान्तौ चतुर्दश्यष्टमीषु च ।
नवम्यां मङ्गले देवि चक्रपूजा शुभप्रदा ॥५॥

हे देवि ! कुहू (अमावस्या), पूर्णेन्दु (पूर्णिमा), सक्रान्ति, चतुर्दशी, अष्टमी और नवमी के अवसर पर अथवा मङ्गल को चक्रपूजा, शुभप्रदाता होती हैं ।।५।।

साधकास्तु सतीर्थ्याश्च मिलिता शिवमन्दिरे ।
देवतापत्तने वापि शून्ये शृङ्गाटकेऽथवा ।।६।।
दिग्भैरवान् विचार्यादौ ततस्तु परसाधकः ।
उपविश्यासने देवि संसोध्य वीरमण्डलम् ।।७।।
साधकानुपवेश्याथ कुर्यात्संकल्पमादरात् ।
न्यासं विधाय सर्वाङ्गे भूतशुद्ध्यादिकं चरेत् ।।८।।

अपने सतीर्थ्य (पूजा के भागीदारों) के साथ मिलकर किसी शिवमन्दिर, देवस्थान, शून्यस्थान या शृङ्गाटक (चौराहे) पर जाए । वहाँ दिग्भैरवओं का विचार (दिग्बन्धन) करके आसन पर बैठे और वीरमण्डल का शोधन कर, आगतसाधकों को भी यथास्थान बैठाए । तब सङ्कल्पपूर्वक सर्वाङ्ग में विविध न्यासों को करके साधक, भूतशुद्ध आदि की क्रियाएँ करे ।।६-८।।

तत्र प्राणान्प्रतिष्ठाप्य श्रीचक्रं पूजयेच्छिवे ।
आत्मश्रीचक्रयोर्मध्ये कुम्भस्थापनमाचरेत् ।।९।।

हे शिवे ! वहाँ प्राणप्रतिष्ठापूर्वक श्रीचक्र का पूजन कर अपने एवं श्रीचक्र के मध्य, कुम्भस्थापन की क्रिया सम्पन्न करे ।।९।।

गौडी माध्वीं तथा पैष्टीं यासवं पूजयेत् शिवे ।
एतेषां रसमादाय तत्त्वतो भैरवार्चने ।।१०।।

हे शिवे ! गौडी (गुड़ की बनी), माधवी (मधु की बनी), पैष्टी (जौ आदि अन्न के बने), या आसव की पूजा करनी चाहिए । इनके रस को लेकर तत्त्वतः भैरवअर्चन करना चाहिए ।।१०।।

आनन्दरस पूजायां तुष्यते परमेश्वरि ।
विप्राश्च क्षत्रिया वैश्या शूद्राः पूज्याः सुपावनाः ।।११।।

आनन्द-रस युक्त इस भैरवयुगल के अर्चन से परमेश्वरी सन्तुष्ट होती है । चक्रार्चन में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र चारो वर्णों के सुपावन (वीर) साधक पूजनीय हैं ।।११।।

गौडी विप्रेषु शुभदा माध्वी क्षत्रेषु चोत्तमा ।
वैश्ये तु शुभदापैष्टी शूद्रेषु शिवमासवम् ।।१२।।

गौडी ब्राह्मण, पैष्टी (वैश्य) के लिए शुभदायक, माध्वी क्षत्रियों के लिए उत्तम तथा शूद्रों के लिए आसव उत्तम है ।।१२।।

ब्रह्मक्षत्रियवैश्यानामानन्दस्तु शुभावहः ।
आसवं दूरतस्त्याज्यं साधकैश्चमुमुक्षुभिः ॥१३॥

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य के लिए आनन्द प्राप्ति ही शुभकर है । मोक्षकामी साधकों को आसव का दूर से ही त्याग करना चाहिए ॥१३॥

अभावे तु सुरानन्द रसनां परमेश्वरि ।
मधुनापूजयेद्देवि देवमानन्दभैरवम् ॥१४॥

हे देवि ! हे परमेश्वरि ! यदि सुरानन्द का अभाव हो तो मधु से ही आनन्दभैरव का पूजन करना चाहिए ॥१४॥

द्रव्यं संशोध्य देवेशि मकारान् पञ्चशोधयेत् ।
श्रीचक्राग्रेऽर्चयेत्तत्र साधकान् भैरवागमे ॥१५॥

हे देवेशि ! द्रव्यसंशोधन के पश्चात् पञ्चमकारों का शोध न करना चाहिए तत्पश्चात् श्रीचक्र के आगे भैरवागम में निष्णात् साधकों का पूजन करना चाहिए ॥१५॥

तत्र संपूज्य यन्त्रेशं देवमावाह्य भैरवम् ।
योगिनीं पूजयेत्तत्र बटुकं पूजयेत्ततः ॥१६॥

तब यन्त्रेश का पूजन कर, भैरव का आवाहन कर, उनके पूजनसहित योगिनी और बटुक का भी पूजन करना चाहिए ॥१६॥

गणेशं क्षेत्रपालं च पूजयेच्चक्रनायिकाम् ।
संतर्प्य देवान् पितृंश्च मुनीन् दिव्यान् महेश्वरि ॥१७॥

हे महेश्वरि ! तब गणेश, क्षेत्रपाल, चक्रनायिकाओं, देवता, पितरों, मुनियों आदि दिव्यतत्त्वों का भी पूजन तर्पण करे ॥१७॥

श्रीचक्राग्रे जपेन्मूलं पठेत्कवचमीश्वरि ।
मन्त्रनाम सहस्त्रंतु स्तोत्रं तत्त्वनिरूपणम् ॥१८॥

श्रीचक्र के आगे मूलमन्त्र का जप, कवच, सहस्त्रनाम तथा तत्त्वनिरूपणस्तोत्र का पाठ करे ॥१८॥

ततो देव्यै बलिं दत्वा साधकांस्तर्पयेच्छिवे ।
भैरवांस्तर्पयेदष्टदीक्षितांस्तर्पयेत्ततः ॥१९॥

हे शिवे ! तब देवता को बलिप्रदान कर साधकों का तर्पण करे । उस समय आठ भैरवों का तत्पश्चात् दीक्षितसाधकों का भी तर्पण करे ॥१९॥

उत्तमं नवपात्राणि पञ्चपात्राणिमध्यमम् ।
अधमं त्रीणिपात्राणि चैकपात्रं न पूजनम् ॥२०॥

नवपात्रग्रहणपूर्वक पूजन उत्तम, पाँच का मध्यम, तीन का अधम है । एकपात्र या एकवीर का चक्रार्चन नहीं करना चाहिए ॥२०॥

प्रवृत्ते भैरवीतन्त्रे सर्वे वर्णाः द्विजातयः ।
निवृत्ते भैरवीतन्त्रे सर्वे वर्णाः पृथक् पृथक् ॥२१॥

भैरवीचक्र के प्रारम्भ होने पर सभी वर्णों के साधक, द्विज (वीर) हो जाते हैं । भैरवीचक्रविसर्जन के पश्चात् वे पुन: अपने-अपने वर्णाचार में आ जाते हैं ॥२१॥

नवकन्याः समभ्यर्च्य वीरेशो भैरवार्चने ।
रेतसा तर्पयेद्देवीं कुलकोटिं समुद्धरेत् ॥२२॥

इस अवसर पर नवकन्याओं का पूजन कर भैरवार्चन में वीरेश, वीरसाधक यदि रेतस् से देवी का तर्पण करे तो वह करोड़ों कुलों का उद्धार कर लेता है ॥२२॥

शक्त्युच्छिष्टं पिवेद्द्रव्यं वीरोच्छिष्टं च चर्वणम् ।
मकारपञ्चसंयुक्तं कुर्याच्छ्रीचक्रमण्डले ॥२३॥
स्वगुरुं पूजयेत्तत्र तर्पयेच्छक्तितः परम् ॥२४॥

भैरवीचक्र में शक्तिउच्छिष्टद्रव्य तथा वीरउच्छिष्ट चर्वणग्रहण करना चाहिए । श्रीचक्रमण्डल में पञ्चमकारों से ही पूजन करना चाहिए । अन्त में अपने गुरु का यथाशक्ति पूजन एवं तर्पण करे ॥२३-२४॥

ब्रह्मरन्ध्रेण मध्यस्थं दिव्यकुम्भसमुद्भवम् ।
सद्योमद्यमयीपूर्णा वारुणी परिकीर्तिता ॥२५॥

यहाँ से पञ्चमकारों की आध्यात्मिकव्याख्या प्रस्तुत करते हैं जिनसे गुरु की पूजा करनी चाहिए—१ वारुणी—ब्रह्मरन्ध्र के मध्य में दिव्यकुम्भ (सहस्रार) से उत्पन्न सद्य: मद्यमयपूर्णा (अमृत) ही वारुणी कही गई हैं ॥२५॥

कामःक्रोधस्तथालोभः पशवस्त्रयमुच्यते ।
ज्ञानखड्गेन हननं द्वितीया परिकीर्त्तिता ॥२६॥

काम, क्रोध, लोभ ये तीन विकार, पशुत्रय कहे जाते हैं । जब साधक ज्ञानखड्ग से इनका हनन करता है तो यही अवस्था, द्वितीया, शुद्धि, कही जाती है ॥२६॥

अहंकार महामत्स्य वैराग्ये जालनिक्षिपेत् ।
तपः संयोजितो येन तृतीया परिकीर्तिता ॥२७॥

अहङ्काररूपी महामत्स्य को वैराग्यजाल में फंसाकर तप में संयोजित करना ही तृतीया (मत्स्य) कही जाती है ॥२७॥

विवेक विस्वासयोर्मध्ये रागद्वेषादि चूर्णवत् ।
तच्चूर्णं मुद्रिकां कृत्वा चतुर्थं परिकीर्तितम् ॥२८॥

विवेक और विश्वास के बीच राग-द्वेषादि विकारों को चूर्ण कर, उस चूर्ण (आटे) की मुद्रिका बनाकर ग्रहण करना ही चतुर्थ, मुद्रा नामक तत्त्व कहा गया है ॥२८॥

कुण्डलिनी नादरूपा विन्दुरूपस्तथा शिवः ।
उभौ संयोजितौ यत्र पञ्चमं परिकीर्तितम् ॥२९॥

नादरूपीकुण्डलिनी और विन्दुरूपशिव दोनों जहाँ संयोजित होते हैं उस अवस्था को पञ्चमतत्त्व मैथुन कहा जाता है ॥२९॥

(वाह्यचक्रार्चन इसी आन्तरिक चक्रार्चन का मार्ग है। इसे कौलदर्शन का आध्यात्मिकपक्ष भी कह सकते हैं)।

तोषयित्वा गुरुं देवि दक्षिणाभिश्चवन्दनैः ।
तदाज्ञां शिरसादाय कुर्यादानन्दमात्मनः ॥३०॥

हे देवि ! दक्षिणा, वन्दन आदि के द्वारा गुरु को सन्तुष्ट कर उनकी आज्ञा को शिरोधार्य कर आत्मानन्द की अनुभूति करनी चाहिए ॥३०॥

इत्येष पटलो देवि चक्रसर्वस्वसंज्ञकः ।
तव भक्त्या मयाख्यातो गोपनीयो मुमुक्षुभिः ॥३१॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये चक्रसर्वस्वनामपञ्चदशपटलः ॥१५॥

हे देवि ! इस प्रकार चक्रसर्वस्व नाम का यह पटल, तुम्हारी भक्ति के वशवर्ती हो, मुझसे कहा गया। यह मोक्षार्थि साधकों द्वारा गोपनीय है। कौलमार्ग, मोक्षमार्ग है जो भोग के जंगल से निकलता है ॥३१॥

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के चक्रसर्वस्वनामक पन्द्रहवें पटल की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ।।१५।।



षोडशपटलः

आचारविधि

श्रीभैरवउवाच

श्रृणुदेवि प्रवक्ष्यामि सारात्सारतरं परम्।
आचाराणां विधिं येन कलौ देवी प्रसीदति ॥१॥

श्रीभैरव बोले—हे देवि ! सार से सारतत्त्व, परमसारभूत, आचारविधि को मैं कहता हूँ। जिसके प्रयोग से कलियुग में देवी शीघ्र प्रसन्न होती हैं। तुम उसे सुनो ॥१॥

द्वौमार्गौ चागमे स्यातां बामाचारस्तु दक्षिणः।
तयोस्तत्त्वं कुलाचारः श्रृणु तेषां विधिं शिवे ॥२॥

हे शिवे! आगमशास्त्र में साधना के वामाचार एवं दक्षिणाचार दो मार्ग बताए गए हैं। उन दोनों का तात्त्विकरूप कुलाचार है। अब तुम उन आचारों के विषय में मुझसे सुनो ॥२॥

साधको दीक्षितो येन सिद्धिमवाप्नुयात्।
तद्वदामि तव स्नेहाद् न चाख्येयं दुरात्मने ॥३॥

जिनसे दीक्षित हो साधक, सिद्धि को प्राप्त कर लेता है, मैं तुम्हारे स्नेह के कारण उसे तुमसे कह रहा हूँ। इसे किसी दुरात्मा (पशुप्रवृत्तिजन) को नहीं देना चाहिए ॥३॥

प्रथमो दक्षिणाचारो बामाचारो द्वितीयकः।
तृतीयस्तु कुलाचारो विधिं तेषां श्रृणु प्रिये ॥४॥

हे प्रिये ! आगम में वर्णित उपर्युक्त तीनों आचारों में दक्षिणाचार प्रथम, वामाचार द्वितीय एवं कुलाचार तृतीय मार्ग है। अब मैं उनकी विधि कहता हूँ तुम उसे सुनो ॥४॥

प्रभाते स्नानसंध्यादि मध्याह्ने जपमीश्वरि।
और्णमासनमात्मार्थं भक्ष्यं पायसशर्करा ॥५॥
मालारुद्राक्षसंभूता पात्रं पाषाणसंभवम्।

भोगः स्वकीयकान्ताभिर्दक्षिणाचारइत्ययम् ।
द्रव्येण मधुना देवि सिद्धिहानिकरोमतः ।।६।।

हे ईश्वरि ! प्रातः काल स्नान, संध्या आदि, मध्याह्न में जप, आसन के निमित्त ऊनका आसन, भक्ष्य (खाद्यपदार्थ) के रूप में खीर और मिश्री, रुद्राक्ष की बनी माला, पाषाण का पात्र, अपनी पत्नी के साथ भोग और द्रव्य के रूप में मधु का प्रयोग, जिस उपासनापद्धति में होता है, वह दक्षिणाचार है । हे देवि ! कलियुग में यह मार्ग सिद्धि के लिए हानिकारक है । इसमें साधक को शीघ्रता से सफलता नहीं होती ।।५-६।।

वामाचारं प्रवक्ष्यामि भुवनेश्याः सुसाधनम् ।
यं विधाय कलौ शीघ्रं मान्त्रिकः सिद्धिभाग्भवेत् ।।७।।

अब मैं भुवनेश्वरीसाधना के वामाचार को कहता हूँ । जिसका आचरण कर मन्त्र-साधक कलियुग में शीघ्र ही मन्त्रसिद्धि प्राप्त कर लेता है ।।७।।

मालानृदन्तसम्भूता पात्रं पाषाणमुण्डकम् ।
आसनं सिंहचर्मादि कङ्कणं स्त्रीकचोद्भवम् ।।८।।
द्रव्यमासवतत्त्वाद्यं भक्ष्यं मांसादिकं शिवे ।
चर्वणं बालमत्स्यादि मुद्रा वीणारवा कथा ।।९।।
मैथुनं वरकान्ताभिः सर्ववर्णसमानता ।
बामाचार इति प्रोक्तः सर्वसिद्धिप्रदः शिवे ।।१०।।

हे शिवे ! इसमें मनुष्य के दांत की बनी माला, पाषाण (पत्थर) या मुण्ड (कपाल) का पात्र, सिंहचर्म (व्याघ्रचर्म) आदि चर्मासन, स्त्री के केश के बने कङ्कण, आसव आदि द्रव्य (तीर्थ), मांसादि मकार भक्ष्य, बालमत्स्य (छोटी मछलियों) का चर्वण मुद्रा, वीणाध्वनि के बीच वार्तालाप पूर्वक श्रेष्ठ सुन्दर स्त्रियों के साथ मैथुन, सभी वर्णों के प्रति समानता, यही वामाचार कहा गया है । हे शिवे ! यह सभी प्रकार की सिद्धियों को देनेवालामार्ग है ।।८-१०।।

अन्यथा सिद्धिहानिः स्यात् मन्त्रस्यास्य महेश्वरि ।
तस्माद्वामं भजेन्नित्यं बाम-एव परागतिः ।।११।।

हे महेश्वरि ! अन्यथा भुवनेश्वरीमन्त्र की सिद्धिहानि होती है । अतः वामाचार का ही नित्यसेवन करना चाहिए । यही परमगति देने वाला मार्ग है ।।११।।

दक्षिणं च कुलं चैव वीरैः साधकसत्तमैः ।
त्याज्यं दूरात्कलौ देवि बाममेव भजेत्कलौ ।।१२।।

हे देवि ! श्रेष्ठ वीरसाधकों द्वारा कलियुग में दक्षिण एवं कौलाचार का दूर से ही त्याग कर देना चाहिए। वे केवल वामाचार का ही अनुसरण करें ॥१२॥

कुलाचारं प्रवक्ष्यामि सेव्यं भोगिभिरुत्तमैः ॥१३॥

अब मैं उस कुलाचार के विषय में कहूँगा जो उत्तमभोगियों द्वारा ही सेवनीय है ॥१३॥

कुलस्त्रियं कुलगुरुं कुलदेवीं महेश्वरि।
नित्यं यत्पूजयेद्विश्वं स कुलाचार उच्यते ॥१४॥

हे महेश्वरि ! जिसमें नित्य, कुलस्त्री, कुलगुरु, कुलदेवी इन सबका पूजन होता है, वह कुलाचार कहा जाता है ॥१४॥

कुलस्त्रियां शिवे ज्ञात्वा नत्वा महेश्वरि।
हठादानीय सम्पूज्य तया भोगं विधाय च ॥१५॥
रेतसा तर्पयेद्देवीं चक्रेशीं भुवनेश्वरीम्।
ईश्वरश्चैव विधिवत् जपं कुर्याद्विशेषतः ॥१६॥

हे महेश्वरि ! हे शिवे ! साधकश्रेष्ठ, कुलस्त्री को जानकर उसे नमस्कार करे तब हठपूर्वक (आग्रहपूर्वक) उसे अपने स्थान पर ले आए और उसका पूजन एवं भोग करे। उस रेतस् से चक्रेश्वरी भुवनेश्वरीदेवी और उनके भैरव, ईश्वर का पूजन कर विशेषरूप से जप करना चाहिए। यहाँ हठ का बल अर्थ लेने पर उपर्युक्त क्रिया, साधना नहीं बलात्कार हो जाएगी ॥१५-१६॥

तत्पूर्वकं चरेद्धोमं कुलकान्तां विभूषयेत्।
पानैः पेयैस्तथा भक्ष्यैः संतर्प्य कुलयोषितम्।
प्रत्यहं वै चरेदेवं कुलाचार इति स्मृतः ॥१७॥

उपर्युक्त जपादि के पश्चात् पूर्वोक्त नियम से होम करे। पूजिताकुलस्त्री को वस्त्रालङ्कारों से विभूषित करे तथा उसे पीनेयोग्य पेयपदार्थों के पान, भक्ष्य आदि से तृप्त कर प्रतिदिन आचरण करे। यही कुलाचार कहा गया है ॥१७॥

इत्याचारपरो देवी कुलस्त्रीगुरुपूजकः।
वामाचारपरोमन्त्री मुक्तिभाग्भविताध्रुवम् ॥१८॥

हे देवि ! इस आचार का पालनकर्ता, कुलगुरु एवं कुलस्त्री का पूजक, कौल-साधक, अथवा वामाचारपरायणमन्त्रसाधक, शीघ्र ही मुक्ति का अधिकारी हो जाता है। यह सुनिश्चित है ॥१८॥

इत्येष पटलो गुह्यो देव्याश्चाचारवल्लभः ।
अदातव्योऽन्य भक्तेभ्यो न प्रकाश्यो मुमुक्षुभिः ॥१९॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये आचारविधिर्नाम षोडशः पटलः ॥१६॥

इस प्रकार का यह पटल अत्यन्त गोपनीय तथा देवी का प्रिय है । इसे अन्य देव या गुरु के भक्त को नहीं बताना चाहिए तथा मोक्षकामी साधकों को ही इसे प्रकाशित करना चाहिए ॥१९॥

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के आचारविधि नामक सोलहवें पटल
की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ।।१६।।



सप्तदशपटलः

सूर्यग्रहणपूजाविधि

श्रीभैरवउवाच

शृणुष्व कथयाम्यद्य पूजां सामयिकीं पराम्।
यस्याः श्रवणमात्रेण कोटिपूजाफलं लभेत् ॥१॥

श्रीभैरव बोले—अब मैं उस श्रेष्ठ सामायिकीपूजा को कहता हूँ जिसके सुनने मात्र से करोड़ों पूजा का फल प्राप्त होता है ॥१॥

बिनासमयपूजाभिर्देवि दीक्षापि निष्फला।
तस्मात् समयपूजान्ते वक्ष्यामि पारलौकिकीम् ॥२॥

हे देवि ! बिना समयपूजा के दीक्षा भी विफल हो जाती है। इसीलिए मैं तुमसे पारलौकिकी समयपूजा के विषय में कहता हूँ ॥२॥

न सिध्यन्ति महादेवि नित्यपूजाजपादयः।
यज्ञहोमादयो देवि बिनासमयपूजया ॥३॥

हे महादेवि ! हे देवि ! बिना समयपूजा के नित्य किये जाने वाले जप, पूजा, होम, यज्ञ आदि पूजनकर्म भी सिद्ध नहीं होते ॥३॥

अष्टोत्तरशतप्रख्याः समयाः सन्ति पार्वति !
तासु यः पूजयेद्देवि देवीं श्रीभुवनेश्वरीम्।
स याति परमेशानि श्रीदेवीगणतां पराम् ॥४॥

हे पार्वति ! एक सौ आठ समयाओं के नाम प्रसिद्ध हैं। हे देवी ! उनमें जो भुवनेश्वरीदेवी की पूजा करता है, हे परमेशानी ! वह देवी का श्रेष्ठगणत्व प्राप्त करता है ॥४॥

तेषामपि महादेवि समयासन्ति चोत्तमा ॥५॥
सूर्यग्रहणकालो वा चन्द्रग्रहणवासरः।
भूकम्पसमयो देवि नवरात्रदिनानि च।
कन्यासंक्रान्ति समयो देवानामपि दुर्लभः ॥६॥

हे महादेवि ! उनमें भी ये उत्तम समयाएँ कही गई हैं—

हे देवि ! सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण, भूकम्प, नवरात्रि के दिन, कन्यासंक्रान्तिकाल के समय देवीपूजनहेतु देवताओं को भी दुर्लभ हैं ॥५-६॥

एतेषु समयेष्वेव यः शिवां पूजयेच्छिवे ।
स साक्षाद् भैरवो ज्ञेयो वरदानक्षमः शिवः ॥७॥

हे शिवे! इन समयों पर भी देवी पूजन करना चाहिए। जो ऐसा करता है उसे साक्षात् भैरव जानना चाहिए। वह वरदान देने में समर्थ शिवस्वरूप हो जाता है ॥७॥

अत्रादौ पूजनं वक्ष्ये सूर्यग्रहणपूर्वकम् ।
यस्मिन् काले भवेद्राहुसूर्ययोश्च समागमः ।
तदैव साधकः स्नात्वा पूजां सामयिकीं चरेत् ॥८॥

उपर्युक्त सामयिकी पूजाओं में सर्वप्रथम सूर्यग्रहणकालिकी पूजा कहता हूँ— जिस अवसर पर राहु एवं सूर्य का समागम हो, उसी समय साधक, स्नान कर सूर्यग्रहणकालिक सामयिकीपूजा करे ॥८॥

स्नात्वा विलिख्य धरणीं भूमौ यन्त्रं लिखेच्छिवे ।
सिन्दूरेण महादेवि सर्वाशापरिपूरकम् ॥९॥

उस समय साधक, स्नान करके पृथ्वी पर सिन्दूर से सर्वाशापरिपूरकयन्त्र अङ्कित करे ॥९॥

त्रिकोणं बिन्दुसंयुक्तमष्टकोणं महेश्वरि ।
वृत्तमष्टदलं देवि भूगृहेणोपशोभितम् ।
विभाव्य यन्त्रं देवेशि पूजां मन्त्री समारभेत् ॥१०॥

हे देवि ! हे महेश्वरि ! इस क्रम में पहले बिन्दु समन्वित त्रिकोण, तब अष्टकोण, वृत्त और भूपुर से घिरे हुए अष्टदल कमल से सुशोभित यन्त्र बनाकर हे देवेशी ! मन्त्रसाधक पूजन आरम्भ करे ॥१०॥

आसनं देवि संशोध्य भूतशुद्धिं विधाय च ।
प्राणान् समर्प्य न्यासैश्च देहं व्याप्य महेश्वरि ॥११॥

हे देवि ! इस क्रम में वह आसनशुद्धि करके भूतशुद्धि करे तब प्राण-समर्पण, (प्राणप्रतिष्ठा) करके हे महेश्वरि ! साधक अपने शरीर को भी न्यास से व्याप्त करे ॥११॥

श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः मन्त्रेण पूजां कुर्याद्धिमान्त्रिकः ॥१२॥

तब मन्त्रसाधक को श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः मन्त्र से उस यन्त्र का पूजन करना चाहिए ॥१२॥

सर्वाशापूरकायादौ श्रीचक्रायमहेष्टिकृत्।
दत्वा पुष्पाञ्जलिं देवि चतुरस्त्रे समर्चयेत्।
गणेशं धर्मराजं च वरुणञ्च कुबेरकम्॥१३॥

यन्त्रपूजनक्रम में सर्वाशापूरकश्रीचक्र के लिए महान् यज्ञ (पूजन) करते हुए चतुरस्त्र के चारोकोनों में पूर्वादि से गणेश, धर्मराज, वरुण और कुबेर का पुष्पाञ्जलि से पूजन करे॥१३॥

करालं विकरालं च संहारं रुरुभैरवम्।
महाकालं च कालाग्नि सुप्तमुन्मत्तभैरवम्।
अष्टपत्रेषु देवेशि पूजयेद् गन्धपुष्पकैः॥१४॥

हे देवेशि ! तत्पश्चात् कराल, विकराल, संहार, रुरु, महाकाल, कालाग्नि, सुप्त, उन्मत्त नाम के आठ भैरवों का अष्टदलकमल के आठदलों में गन्धपुष्प से क्रमशः पूजन करे॥१४॥

वशिनी परमेशानि कामेश्वरि ततः परम्।
मोदिनी विमला चैवाप्यरुणा जयिनी तथा।
सर्वेश्वरी कौलिनी च पूजनीयाष्टकोणके॥१५॥
वामावर्तेन देवेशि गन्धाक्षतप्रसूनकैः।
पीतपुष्पैर्महादेवि पयसामधुनार्चयेत्॥१६॥

हे परमेशानि ! हे देवेशि ! वशिनी, कामेश्वरी, मोदिनी, विमला, अरुणा, जयिनी, सर्वेश्वरी, कौलिनी नामक शक्तियों का वामावर्तक्रम से यन्त्र के अष्टकोणों में पूजन करना चाहिए। यह पूजन, गन्धाक्षत, पुष्प विशेषतः पीले पुष्पों, खीर एवं मधु से करना चाहिए॥१५-१६॥

गङ्गा च यमुना चैव सरस्वती च पार्वति।
त्रिकोणेशान क्रमतः पूजनीया च साधकैः॥१७॥

हे पार्वति ! साधकों द्वारा त्रिकोण में ईशानक्रम से गंगा-जमुना-सरस्वती पूजनीय हैं॥१७॥

नीलपुष्पैश्च दध्ना घृतमत्स्याण्डपद्मकैः।
बिन्दौ श्रीपरमेशानि पूजयेद् भुवनेश्वरीम्॥१८॥

हे श्रीपरमेशानि ! भुवनेश्वरी देवी का नीलेपुष्प, घी, दही, मत्स्यण्ड (राब) एवं पद्म से बिन्दु पर पूजन करे॥१८॥

ईश्वरं नन्दिरुद्रं च भैरवं भैरवेश्वरम्।
ॐ ह्रीं श्रीं ऐं राहवे फट् स्वाहा मन्त्रेण साधकः।
बिन्दौ सम्पूजयेद्राहुं त्रिवारञ्च स्वशक्तितः ॥१९॥

ईश्वर, नन्दि, रुद्र, भैरव, भैरवेश्वर तथा ॐ ह्रीं श्रीं ऐं राहवे फट् स्वाहा मन्त्र से तीनबार राहु का, बिन्दु पर ही साधक अपने सामर्थ्य के अनुसार पूजन करे ॥१९॥

तत्र प्रपूजयेद्देवि श्रीसूर्यग्रहनायकम्।
सूर्यमन्त्रेण देवेशि गन्धाक्षत प्रसूनकैः।
नैवेद्याचमनीयाद्यैस्ताम्बूलैश्च सुवासितैः ॥२०॥

हे देवि ! हे देवेशि ! वहीं गन्ध, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, आचमनी यआदि एवं सुगन्धित ताम्बूल से ग्रहनायक श्री सूर्यदेव का साधक पूजन करे ॥२०॥

तत्रोपरि महादेवि ताम्रस्य च तुलादश।
दत्वा यन्त्रस्य पुरतो जपं कुर्यान्महेश्वरी ॥२१॥

हे महादेवि ! हे महेश्वरि ! तत्पश्चात् दशतुला मानका ताँबा रखकर यन्त्र के सम्मुख जप करना चाहिए ॥२१॥

अयुत्तार्धं तदर्धं वा सहस्रैकं च वा जपेत्।
जपाद्दशांशतो होमः कार्यः सर्पिस्तिलैर्यवैः ॥२२॥

जप, पाँच हजार, ढाई हजार या एक हजार की सुख्या में करे तत्पश्चात् जप का दशांश होम घी, तिल और जौ से करे ॥२२॥

तदग्रे कवचं नाम्नां सहस्रं स्तोत्रमेवच।
पठेद्देवि ततो देव्यै सशिवायै समर्पयेत् ॥२३॥

उसके आगे ही कवच, सहस्रनाम, स्तोत्र आदि पढ़कर उसे उनके शिव (ईश्वर) के सहित देवी भुवनेश्वरी को समर्पित कर दे ॥२३॥

राहवेकुलसूर्याय गुरवे साधकोत्तमः।
जपं समर्प्य विधिवन्नत्वा साष्टाङ्गमीश्वरि ॥२४॥
ब्राह्मणान् भोजयेद्देवि दक्षिणाभिस्समर्चयेत् ॥२५॥

हे ईश्वरि ! तब राहु, कुलगुरु, सूर्य को भी श्रेष्ठसाधक विधिवत् साष्टाङ्ग-नमस्कारपूर्वक जपसमर्पण करे। हे देवी ! तत्पश्चात् ब्राह्मणों को भोजन करा दक्षिणा से उनकी भली-भाँति अभ्यर्चना करे ॥२४-२५॥

य एवं पूजयेद्देवि देवीं श्रीभुवनेश्वरीम्।
ग्रहणे ग्रहनाथस्य सूर्यस्यामिततेजसः।
कोटिवर्षसहस्राणां पूजायाः फलमाप्नुयात् ॥२६॥

इस प्रकार (उपर्युक्त रीति) से ग्रहणकाल में देवीभुवनेश्वरी, अमिततेजस्वी ग्रहराजसूर्य, के पूजन से साधक को हजारकरोड़ वर्षों की पूजा का फल प्राप्त होता है। अत: यह पूजा, विशेष रूप से करनी चाहिए ॥२६॥

इत्येष पटलो देवि गोपनीयो मुमुक्षुभिः ।
सूर्यग्रहणपूजायाः साधकेष्टफलप्रदा ॥२७॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये सूर्यग्रहणपूजाविधिर्नाम सप्तदश: पटल: ॥१७॥

इस प्रकार सूर्यग्रहणपूजा का साधकों को इष्ट (इच्छित) फलदायक यह पटल मोक्षाभिलाषी साधकों द्वारा अनाधिकारियों से गुप्त रखने योग्य है ॥२७॥

विशेष—इस अध्याय में ब्राह्मणभोजन का तात्पर्य वीरभोजन से लेना चाहिए क्योंकि ग्रहणकाल में ब्राह्मणभोजन संभव नहीं ।

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के सूर्यग्रहणपूजाविधि नामक सत्रहवें पटल की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ।।१७।।



अष्टादशपटलः

चन्द्रग्रहणपूजाविधि

श्रीभैरवउवाच

शृणुष्वावहितोभूत्वा कथयामि महेश्वरि ।
रहस्यं भुवनेश्वर्याः पूजासारमनुत्तमम् ॥१॥

श्रीभैरव बोले—हे महेश्वरि ! मैं भुवनेश्वरी के रहस्यभूत, उत्तमपूजा को कहता हूँ, तुम उसे एकाग्रचित्त से सुनो ॥१॥

चन्द्रोपरागसमये स्नात्वा साधकसत्तमः ।
विलिप्य धरणीं धीमान् लिखेद् यन्त्रं महेश्वरि ॥२॥
त्रिकोणं बिन्दुसंयुक्तं दशारं पञ्चकोणकम् ।
वृत्तमष्टदलं देवि भूगृहेणोपशोभितम् ।
सिन्दूरेण महादेवि लिखित्वाष्टहरिद्रया ॥३॥

हे महेश्वरि ! हे देवि ! चन्द्रग्रहण के समय श्रेष्ठसाधक, सर्वप्रथम स्नान करे, तत्पश्चात् वह बुद्धिमान् पृथ्वी पर त्रिकोण, बिन्दु, दशार एवं पञ्चकोण तथा वृत्त, अष्टदलकमल और भूपुर से सुशोभित यन्त्र, सिन्दूर, अष्टगन्ध एवं हल्दी से लिखे ॥२-३॥

कुर्यादासनशुद्धिं च भूतशुद्धिं ततः परम् ।
प्राणान् समर्प्य देवेशि न्यासं कुर्याद्यथाविधि ॥४॥

हे देवेशि ! तब वह विधिपूर्वक आसनशुद्धि, भूतशुद्धि, प्राणसमर्पण और न्यास आदि की क्रियाएं क्रमशः सम्पन्न करे ॥४॥

भैरवर्ष्यादिन्यासेन देहं व्याप्य महेश्वरि ।
मातृकान्यासभेदेन श्रीकण्ठन्यासकेन च ॥५॥

हे महेश्वरि ! वह भैरव-ऋषि न्यासों, मातृकान्यास, तथा श्रीकण्ठन्यास से अपने शरीर को व्याप्त करे ॥५॥

ध्यात्वा सोमस्थितां देवीं सोमकोटिसमप्रभाम् ।
पात्रस्थापनकर्मादौ कृत्वावाह्यमहेश्वरीम् ॥६॥

तब वह करोड़ों चन्द्रमा के समान आभावाली, चन्द्रमण्डल में स्थित महेश्वरी (भुवनेश्वरी देवी) का पात्रासादनसहित ध्यान एवं आवाहन करे ॥६॥

सशिवां मनसावाह्य राहुं चैव सशक्तिकम् ।
आवाह्य सोमं देवेशि स्वागतं चेत्युदीरयेत् ॥७॥

हे देवेशि ! उस समय साधक, मानसिकरूप से शिव (भैरव) सहित महेश्वरी तथा शक्तिसहित राहु एवं सोम (चन्द्रमा) का आवाहन कर स्वागतमस्तु (आप लोगों का स्वागत है) ऐसा कहे ॥७॥

स्थाने संमुखे ध्याने कुर्यान्मुद्राः पृथक्-पृथक् ।
पाद्यार्घ्यादि निवेद्यादौ पश्चात्पूजां समारभेत् ॥८॥

उसी स्थान पर यन्त्र के सम्मुख ध्यान करे तथा पृथक्-पृथक् मुद्राओं से पाद्य-अर्घ्यादि पूजोपचारों को निवेदित कर पूजा प्रारम्भ करे ॥८॥

गणेशं नन्दिरुद्रं च पुष्पदन्तं किरीटिनम् ।
दक्षावर्तेन गन्धाद्यैः पूज्यास्ते चतुरस्रके ॥९॥

तब दाहिने, आर्वतन से गणेश, नन्दि, रुद्र, पुष्पदन्त एवं किरीटी का चतुरस्र में गन्धादि से पूजन करे ॥९॥

मङ्गला पिङ्गला धान्या भ्रामरी भद्रिका तथा ।
उल्का सिद्धा संकटा च पूजनीयाष्टपत्रके ।
वामावर्तेन देवेशि पीतपुष्पैर्महेश्वरि ॥१०॥

हे महेश्वरि ! हे देवेशि ! वहीं अष्टदलकमल पर वामावर्त में मङ्गला, पिङ्गला, धान्या, भ्रामरी, भद्रिका, उल्का, सिद्धा एवं संकटा नाम्नी अष्टयोगिनियों का भी पीले फूलों से पूजन करे ॥१०॥

श्रीमहात्रिपुराचैव तथा त्रिपुरमालिनी ।
त्रिपुराविजया देवि तथा त्रिपुरवासिनी ॥११॥
पञ्चकोणे सदा पूज्याः पञ्चदेव्यो महेश्वरि ।
वामावर्तेन गन्धार्घ्यधूपदीपप्रसूनकैः ॥१२॥

हे देवि ! हे महेश्वरि ! वहीं श्रीमहात्रिपुरा, त्रिपुरमालिनी, त्रिपुरा, विजया और त्रिपुरवासिनी इन पाँच देवियों का यन्त्र के पञ्चकोण में गन्धार्घ्य, धूप, दीप, पुष्प द्वारा पूजन करना चाहिए ॥११-१२॥

इन्द्रं देवि धर्मराजं वरुणं च कुबेरकम् ।
ईशमग्निं पलाशं च वायुं विष्णुकुमारकम् ।
दशारेषु सितैः पुष्पैर्दक्षावर्तेन पूजयेत् ॥१३॥

हे देवि ! वहीं इन्द्र, धर्मराज, वरुण, कुबेर, ईश, अग्नि, पलाश, वायु, विष्णु, एवं कुमार (स्कन्द), का सफेदफूलों से दशार में, दाहिनी ओर से पूजन करे ॥१३॥

कामेश्वरीं बज्रेश्वरीं पूजयेत्भगमालिनीं ।
त्रिकोणे साधको देवि पीतपुष्पैर्विशेषतः ॥१४॥

हे देवि ! साधक पीलेफूलों से विशेषरूप में कामेश्वरी, वज्रेश्वरी, भगमालिनी नाम की देवियों का त्रिकोण में पूजन करे ॥१४॥

सर्वानन्दमयेचक्रे वैन्दवे पूजयेत्ततः ।
सेश्वरां भुवनेशानीं श्रीदेवीं भुवनेश्वरीम् ॥१५॥
ईश्वरं च महारुद्रं कालाग्निं भैरवेश्वरम् ।
वरं चैवाङ्कुशं चैव पाशं चाभयमेवच ॥१६॥

तब बिन्दुरूप सर्वानन्दमयचक्र में अपने शिव (ईश्वर) सहित भुवनेश्वरी देवी एवं ईश्वर, महारुद्र, कालाग्नि, भैरवेश्वर, वरमुद्रा, अङ्कुश, पाश एवं अभयमुद्रा का पूजन करना चाहिए ॥१५-१६॥

तत्रैव राहुं संपूज्य मूलेनैव सशक्तिकम् ।
चन्द्रं सशक्तिकं चैव कलाः षोडशकास्तथा ।
भमालां पूजयेत्तत्र रात्रिं चैव समर्चयेत् ॥१७॥

वहीं मूलमन्त्र से शक्ति सहित राहु, शक्ति सहित चन्द्रमा, उसकी षोऽश कलाओं का तथा नक्षत्रमालाओं और रात्री का भी पूजन करे ॥१७॥

देव्यै निवेदितान्गन्धाक्षतपुष्पसमन्वितान् ।
धूपदीपादिनैवेद्यताम्बूलादीन्समर्पयेत् ॥१८॥

उस समय देवी को गन्धाक्षत, पुष्प, धूप, दीप नैवेद्य, ताम्बूल आदि पूजोपचार निवेदन (नम्रतापूर्वक समर्पित) करे ॥१८॥

न्यासं कृत्वा जपेन्मूलं अयुतार्धं सुरेश्वरि ।
तदर्धं वा सहस्रैकं जप्त्वा होमं दशांशतः ।
वर्मनामसहस्रादि स्तोत्रपाठं चरेत् पुनः ॥१९॥

हे सुरेश्वरि ! तब साधक न्यास करके, पाँच हजार, उसका आधा ढाई हजार अथवा एक हजार मूलमन्त्र का जप कर, उसका दशांश होम करे । तत्पश्चात् वह कवच, सहस्रनाम, स्तोत्रादि का पाठ करे ॥१९॥

दद्याद्यन्त्राय देवेशि रौप्यस्वर्णतुलां शिवे ।
गुरवे देवदेवीभ्यां जपं मन्त्री समर्पयेत् ॥२०॥

हे शिवे ! तब मन्त्रसाधक यन्त्र के लिए तुलामान की स्वर्ण या रजतदक्षिणा दे तथा गुरु, देव, देवी को वह जप अर्पण करे यहाँ देव से राहु और चन्द्रमा दोनों ही सम्बन्धित हैं ॥२०॥

संहारमुद्रया देवि देवदेव्यौ विसर्जयेत् ॥२१॥

हे देवि! अन्त में अवाहित देवी देवताओं का संहारमुद्रा से विसर्जन करे ॥२१॥

अनया पूजया देवि श्रीदेवीं भुवनेश्वरीम् ।
साधकः पूजयेद्यस्तु स साक्षाद्भैरवो भवेत् ॥२२॥

हे देवि ! जो साधक, इस पूजाविधि से श्रीभुवनेश्वरीदेवी का पूजन करता है वह साक्षात् भैरव हो जाता है ॥२२॥

नित्यं पूजां विधायात्र कोटिसंख्यं महेश्वरि ।
यत्फलं तत्फलं सद्यः स लभेत्पूजयानया ॥२३॥

हे महेश्वरि ! कोटिसंख्या में नित्यार्चन करने का जो फल प्राप्त होता है वह इस पूजा द्वारा साधक को सद्यः प्राप्त हो जाता है ॥२३॥

पुरश्चर्यासहस्रस्य चाश्वमेधायुतस्य च ।
फलं भवति देवेशि चन्द्रग्रहणपूजया ॥२४॥

हे देवेशि ! इस चन्द्रग्रहणकालिकापूजा से एक हजार पुरश्चरण तथा दसहजार अश्वमेधयज्ञ का फल प्राप्त होता है ॥२४॥

चन्द्रग्रहणपूजायाः पटलो देवि दुर्लभः ।
गोपनीयो विशेषेण नान्यथा सिद्धिहानिदः ॥२५॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये चन्द्रग्रहणपूजाविधिर्नाम अष्टादशपटलः ॥१८॥

हे देवि ! चन्द्रग्रहणपूजा सम्बन्धी यह पटल विशेष रूप से गोपनीय है अन्यथा यह सिद्धि की हानि करने वाला हो जाता है ॥२५॥

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के चन्द्रग्रहणपूजाविधि नामक अट्ठारहवें पटल की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ।।१८।।



एकोनविंशपटलः

भूकम्पपूजाविधि

श्रीभैरवउवाच

कथयामि तव प्रीत्या रहस्यं देवि दुर्लभम्।
तत्त्वं श्रीभुवनेश्वर्याः भूकम्पार्चनमुत्तमम् ॥१॥

श्रीभैरव बोले—हे देवि ! अब मैं तुम्हारे प्रेम के कारण श्री भुवनेश्वरीदेवी के तत्त्वरूप, रहस्यमय, दुर्लभ, उत्तम भूकम्पार्चनविधि को कहता हूँ ॥१॥

यत्क्षणं कम्पतेभूमिः देवासुरभयङ्करी।
स एव दुर्लभः कालः पूजायाश्चापि पार्वति ॥२॥

हे पार्वति ! यह पृथ्वी जिस समय देवताओं एवं असुरों को भी भयभीत करने की स्थिति में कांपती है। इस पूजा के लिए वही दुर्लभ (उत्तम) काल है ॥२॥

उत्थाय साधकःस्नात्वा कृत्वा विष्टरशोधनम्।
विभाव्य तत्र श्रीचक्रं यथावद्वर्ण्यते मया ॥३॥

साधक उठकर स्नान कर विष्टरशोधन करे। तब वहाँ श्रीचक्र की भावना (रचना) करे। जिसका मेरे द्वारा वर्णन किया जा रहा है ॥३॥

बिन्दुत्रिकोणसंयुक्तं रसकोणं सवृत्तकम्।
अष्टपत्रं ततो वृत्तं लिखेद् भूमन्दिरं प्रिये ॥४॥

हे प्रिये ! बिन्दु, त्रिकोण से युक्त, षट्कोण व वृत्तसहित अष्टदलकमल से सुशोभित, पुनः वृत्त और तत्पश्चात् भूगृहमय यन्त्र की रचना करे ॥४॥

एतद् भूकम्पपूजायाः चक्रं देवि सुदुर्लभम्।
इत्थं विलिख्य श्रीचक्रं भूतशुद्ध्यादिकं चरेत् ॥५॥
मातृकान्यासभागेन देहे देवमयं चरेत् ॥६॥

हे देवि ! यह भूकम्पपूजा का अत्यन्त दुर्लभ चक्र कहा गया है। इस प्रकार से श्रीचक्र की रचनाकर, भूतशुद्धि आदि करनी चाहिए। मातृकान्यासभाग से साधक अपने शरीर को देवमय बनाए ॥५-६॥

ध्यात्वा देवीं भूमिरूपां शेषरूपं महेश्वरम्।
मनसावाह्य मूलेन सशिवां भुवनेश्वरीम्॥७॥
भूमिं सशेषामावाह्य तन्त्रपूजां समारभेत्॥८॥

तब भूमिरूपी देवी एवं शेषरूप महेश्वर का ध्यान कर, मूलमन्त्र से ईश्वरसहित भुवनेश्वरीदेवी तथा शेषसहित पृथ्वीदेवी का मानसिक रूप से आवाहन कर, तान्त्रिकपूजा प्रारम्भ करे॥७-८॥

संकल्पं साधकः कुर्यात्प्राणायामत्रयं शिवे।
पात्राणि स्थापयेत्तत्र देवीं सन्तर्प्य नित्यवत्॥९॥

हे शिवे! साधक प्राणायामत्रय कर संकल्प करे तब पात्रस्थापन कर नित्यार्चन की भाँति देवी का भली-भाँति तर्पण करे॥९॥

योगपीठाचर्नं कृत्वा पूजयेच्चतुरस्त्रकम्।
गणेशं धर्मराजं च कुबेरं वरुणौ ततः॥१०॥
दक्षावर्तेन सम्पूज्य चतुर्द्वारिषु साधकः।
करालाय फडित्येवं तत्राशाबन्धनं चरेत्॥११॥

तत्पश्चात् योगपीठ का पूजन कर चतुरस्त्र का पूजन करे। इस क्रम में गणेश, धर्मराज, कुबेर, वरुण का दक्षिणावर्त से भूपुर के चारो द्वारों पर साधक पूजन करे तथा 'करालाय फट्' इस मन्त्र से दिग्बन्धन करे॥१०-११॥

गङ्गायै नमः इत्येवं तत्त्वबीजैस्त्रिराचमेत्।
आचम्य कुयद्दिवेशि षडङ्गं मन्त्रबीजकैः॥१२॥
अणिमाद्यष्टसिद्धीश्च पूजयेदष्टपत्रके।
वामावर्तेन गन्धार्घ्य सितपुष्पैर्यथाविधि॥१३॥

हे देवेशि! गङ्गायैनमः कहते हुए तत्त्वमन्त्रों से तीन बार आचमन करना चाहिए। आत्म-तत्त्वं शोधयामि, विद्यातत्त्वं शोधयामि, शिवतत्त्वं शोधयामि ये तत्त्वमन्त्र हैं। इनसे आचमन करे, तब बीजमन्त्रों से षडङ्गन्यास कर मन्त्र के बीजों से अष्टपत्रों में वामावर्त से अणिमादि अष्टसिद्धियों का गन्ध, अर्घ्य तथा श्वेतपुष्पों से विधिपूर्वक पूजन करे॥१२-१३॥

सर्वरक्षाकरेचक्रे गुरून्सन्तर्प्य साधकः।
श्रीदेवीं सशिवां ध्यात्वा भूमिदेवान् समर्चयेत्॥१४॥

तब सर्वरक्षाकरचक्र में साधक, गुरुओं का तर्पण कर, शिवसहित श्री देवी भुवनेश्वरी का ध्यान कर भूमिसम्बन्धी देवताओं का पूजन करे॥१४॥

शेषं कूर्मं मत्स्यराजं समुद्रं च हिमाचलम् ।
दिग्गजान्परमेशानि पूजयेद् वै षड्स्रके ॥१५॥

हे परमेशानि ! इस क्रम में षडस्र में शेष, कूर्म, मत्स्यराज, समुद्र, हिमालय एवं दिग्गजों का पूजन करना चाहिए ॥१५॥

गङ्गाञ्च यमुनाञ्चैव तृतीयां च सरस्वतीम् ।
त्रिकोणे पूजयेद्देवि देवीं श्रीभुवनेश्वरीम् ॥१६॥
ईश्वरं पूजयेत्तत्र महाप्रेतासनं ततः ।
वरांकुशौ च पाशं चाभीतिं चैव प्रपूजयेत् ॥१७॥

हे देवि ! त्रिकोण में गङ्गा, यमुना, सरस्वती का तथा बिन्दु में श्रीभुवनेश्वरीदेवी एवं ईश्वर का पूजन करे तत्पश्चात् महाप्रेतासन, वर, अंकुश, पाश, अभयमुद्रा का भी पूजन करे ॥१६-१७॥

भूमिं सम्पूजयेत्तत्र पूजयेत्कुलपर्वतान् ।
गन्धांक्षतप्रसूनाद्यैः धूपदीपादितर्पणैः ।
नैवेद्याचमनीयाद्यैस्ताम्बूलैश्च सुवासितैः ॥१८॥

वहीं भूमि एवं कुलपर्वतों का गन्धाक्षत, पुष्प, धूप-दीप आदि तथा तर्पण, नैवेद्य, आचमनीय, सुगन्धिततताम्बूल से पूजन करे। कुलपर्वत सात बताए गए हैं— १. हिमवान् २. निषध ३. विन्ध्य ४. माल्यवान् ५. पारियात्रक ६. गन्धमादन ७. हेमकूट ॥१८॥

तद्बिन्दौ स्वर्णरतिका दश दद्यात्स्वसिद्धये ॥१९॥
गोदानं साधकः कुर्याद् भूमिदानं तथैव च ।
यन्त्राग्रे च जपेन्मूलमेकसाहस्त्रिकावधि ॥२०॥

तब साधक गोदान और भूमिदान करे । तत्पश्चात् यन्त्र के आगे (सामने) बैठकर एकसहस्रसंख्या में मूलमन्त्र का जप करे । उसी बिन्दु पर अपनी सिद्धिप्राप्ति हेतु दशरत्ति स्वर्णदान करना चाहिए ॥१९-२०॥

जपाद्दशांशतो होमः कार्यः सर्पितिलेन्दुमैः ।
वर्मनामसहस्राणि स्तवपाठं चरेत्ततः ॥२१॥

जप का दशांश होम, घी, तिल, और अर्जुनवृक्ष की समिधा से करे तत्पश्चात् कवच, सहस्रनाम तथा अन्य स्तोत्रों का पाठ करे ॥२१॥

देवदेव्यौ गुरुं देवि समर्प्य जपमादरात्।
प्रणम्य योनिमुद्राभिर्नत्वा दण्डवदीश्वरि।
विसर्जयेद्देवदेव्यौ मन्त्री संहारमुद्रया ॥२२॥

हे देवि ! तब देव, देवी एवं गुरु को आदरपूर्वक जप सर्मण करे। हे ईश्वरि ! तदन्तर देवता और देवी को योनिमुद्रा से दण्डवत् प्रणाम कर मन्त्रसाधक, आवाहित देवी-देवताओं का संहारमुद्रा से विसर्जन करे ॥२२॥

अश्वमेधसहस्रस्य गोमेधायुतकस्य च।
सुवर्णाचलदानस्य यत्फलं साधकेश्वरि।
तत्फलं त्वरितं मन्त्री भूकम्पार्चनतो लभेत् ॥२३॥

हे साधकों की ईश्वरि ! हजारअश्वमेध तथा दस हजार गोमेध एवं स्वर्णपर्वतदान का जो फल है, उसे मन्त्रसाधक, भूकम्प-अर्चन से तुरंत प्राप्त कर लेता है ॥२३॥

इत्येषपटलो देवि भूकम्पार्चा प्रकाशकः।
गोपनीयो गोपनीयः सदा सेव्यः मुमुक्षुभिः।
भूकम्पस्य च पूजायाः साधकेष्टफलप्रदा ॥२४॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये भूकम्पपूजाविधिर्नाम एकोनविंशः पटलः ॥१९॥

हे देवि ! भूकम्पार्चा पर प्रकाश डालने वाला यह पटल, अत्यन्त गोपनीय है तथा मुमुक्षुओं द्वारा सदा सेवनीय है। यह भूकम्पपूजा, साधक को अभीष्ट फलप्रदान करने वाली है ॥२४॥

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के भूकम्पपूजाविधि नामक उन्नीसवें पटल की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ।।१९।।



विंशपटलः

कन्यासंक्रान्तिपूजाविधि

श्रीभैरवउवाच

अथ वक्ष्यामि देवेशि संक्रान्त्यार्चां यथाविधि ।
तत्त्वं श्रीभुवनेश्वर्याः सारात्सारतरां पराम् ॥१॥

श्रीभैरव बोले—हे देवेशि ! अब मैं तुमसे श्री भुवनेश्वरीदेवी की संक्रान्तिपूजा को विधिपूर्वक कहता हूँ । जो देवी का तत्त्वभूत, सार से भी सार, अत्यन्त श्रेष्ठ पूजा-विधान है ॥१॥

मन्दाकिनी भोगा ध्वांक्षी अघोरा च महेश्वरि ।
मिश्रका पूजनीया च वहिः षट्कोणके शिवे ॥२॥
गन्धार्घ्यपुष्पधूपाद्यैर्वामावर्तेन पार्वति !
राक्षसी डाकिनी चैव शाकिनी गुप्तयोगिनी ॥३॥
हाकिनी लाकिनी पूज्या मध्यषट्कोणके ततः ।
गङ्गाञ्च यमुनाञ्चैव तृतीयाञ्च सरस्वतीम् ।
त्रिकोणे पूजयेद्देवि साधको मन्त्रसाधकः ॥४॥

हे पार्वति ! संक्रान्तिपूजाहेतु निर्मित यन्त्र के बाहरीषट्कोण में क्रमशः मन्दाकिनी, भोगा, ध्वांक्षी, अघोरा, महेश्वरी और मिश्रका का, मध्यषट्कोण में राक्षसी, डाकिनी, शाकिनी, गुप्तयोगिनी, हाकिनी एवं लाकिनी का तथा त्रिकोण में गङ्गा यमुना, सरस्वती का गन्ध, अर्घ्य, पुष्प, धूप आदि पूजोपचारों से मन्त्रसाधक भक्तिपूर्वक वामावर्त से पूजन करे ॥२-४॥

विशेष—अन्य अर्चाओं की भाँति यहाँ स्नान, यन्त्रनिर्माण, शुद्धि और प्राण प्रतिष्ठा न्यासादि कर्मों का उल्लेख नहीं है अतः उन्हें वहाँ ही से लेना चाहिए ।

सर्वानन्दमये चक्रे वैन्दवे परमेश्वरि ।
श्रीदेवीं पूजयेद्देवि साधको भुवनेश्वरीम् ॥५॥

गन्धाक्षतप्रसूनाद्यैर्नैवेद्याचमनीयकैः ।
वस्त्रैश्च परमानन्दैस्ताम्बूलछत्रचामरैः ॥६॥

हे देवि ! हे परमेश्वरि ! साधक यन्त्रार्चनक्रम में सर्वानन्दमय वैन्दवचक्र (बिन्दु) पर श्रीदेवी का गन्धाक्षत, पुष्प, नैवेद्य, आचमनीय, वस्त्र, ताम्बूल, छत्र, चामर आदि पूजोपचारों से परमानन्दावस्था में पूजन करे ॥५-६॥

सम्पूज्य यन्त्रराजस्य बिन्दौ दद्यान्महेश्वरि ।
स्वर्णरौप्यादि पुष्पाणि कांस्यपात्रं तथैव च ॥७॥
निवेद्य मूलमन्त्रेण सुरीति कलशं तथा ।
बिन्दौ देवीं स्मरेन्मन्त्री सशिवां हसिताननाम् ॥८॥

हे महेश्वरि ! मन्त्रसाधक उपर्युक्त पूजन कर यन्त्रराज के बिन्दु पर मूलमन्त्र पढ़कर सोने, चाँदी के पुष्प, कांस्यपात्र तथा सुरी (सुरापूर्ण) कलश निवेदित करे एवं बिन्दु पर ही अपने शिवसहित हंसती हुई (प्रसन्नमुख) देवी भुवनेश्वरी का स्मरण करे ॥७-८॥

पूर्ववद्देवि संकल्प्य जपं कुर्याद्यथाविधि ।
जपाद्दशांशतो होमः कार्यः सर्पियवाङ्कुरैः ॥९॥

हे देवि ! तब वह पूर्ववर्णितविधि से संकल्प और सहस्रादि नाम से यथाविधि जप कर, घी और जौ के अंकुरों से जप का दशांश होम करे ॥९॥

वर्मनामसहस्राणि स्तवपाठं प्रकल्पयेत् ।
समर्प्य देव्यै तत्सर्वं विप्रान्संभोजयेत्ततः ॥१०॥
विशेषतः साधकांश्च साधको मन्त्रसाधकः ।
तथैव दक्षिणां दत्वा प्रणमेद्योनिमुद्रया ॥११॥

तब वह मन्त्रसाधक कवच, सहस्रनाम, एवं स्तोत्रादि का पाठ कर, देवी को उसका समर्पण करे तथा ब्राह्मणों को विशेषकर साधकों को, भली-भांति भोजन कराए एवं उसी प्रकार उन्हें दक्षिणा दे, योनिमुद्रा से प्रणाम करे। यहाँ उसी प्रकार में भली-भांति भक्तिपूर्वक का समावेश समझना चाहिए ॥१०-११॥

इत्येवं पूजयेद्देवीं कन्यां संक्रान्तिवासरे ।
गोदानकोटिसदृशं फलं भवति पार्वति ॥१२॥

हे पार्वति ! इस प्रकार की पूजा, कन्यासंक्रान्ति के अवसर पर करने से करोड़ों गोदानसदृश फल प्राप्त होता है ॥१२॥

सप्तजन्मानि यो देवीं पूजयेन्नित्यकर्मणा ।
यत्फलं तस्य तत्सद्यो भवेत्संकान्तिपूजया ॥१३॥

सातजन्मों तक नित्यार्चनकर्मों का साधक जो फल प्राप्त करता है वह इस संक्रान्तिपूजा से प्राप्त हो जाता है ॥१३॥

इत्येष पटलो देवि गुह्याद्गुह्यतरोमतः ।
अभक्तेभ्यो न दातव्यो गोपनीयश्च साधकैः ॥१४॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये कन्यासंक्रान्तिपूजाविधिर्नाम विंशः पटलः ॥२०॥

हे देवि ! इस प्रकार यह पटल गुप्त से भी गुप्त कहा गया है । इसे साधकों द्वारा गोपनीय रखना चाहिए, अभक्तों को नहीं देना चाहिए ॥१४॥

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के कन्यासंक्रान्तिपूजाविधि नामक बीसवें पटल की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ।।२०।।



एकविंशपटलः

शक्तिपूजाविधि

श्रीभैरवउवाच

अथ वक्ष्यामि देवेशि शक्तिपूजां यथाविधि।
तत्त्वं श्रीभुवनेश्वर्याः सारात्सारतरं परम् ॥१॥

श्रीभैरव बोले—हे देवेशि ! अब मैं तुमसे देवीभुवनेश्वरी के तत्त्वभूत, सार से सार, श्रेष्ठ, शक्तिपूजा का विधिवत वर्णन करता हूँ ॥१॥

दिने शुभे महादेवि स्नात्वा गत्वार्चनस्थलीम्।
समाप्य नित्यकर्मादौ निशादौ शक्तिमर्चयेत् ॥२॥

हे महादेवि ! साधक, शुभ दिन में स्नान कर इस निमित्त पूजास्थल पर जाकर पहले नित्यकर्म आदि सम्पन्न करे तब रात्रि के प्रारम्भ (पूर्वभाग) में शक्ति का पूजन करे ॥२॥

श्रीशक्तिपूजासारस्य ऋषिः प्रोक्तः सदाशिवः।
पङ्क्तिश्छन्दं समाख्यातं देवताभुवनेश्वरि ॥३॥
ऐं बीजं तथा सौः शक्तिः क्लीं कीलकमुदाहृतम्।
धर्मार्थकाममोक्षार्थे विनियोग इति स्मृतः ॥४॥

श्रीशक्तिपूजासार के ऋषि सदाशिव, छन्दपंक्ति, देवता भुवनेश्वरी, बीज ऐं, शक्ति सौः, कीलक क्लीं तथा धर्मार्थकाममोक्षार्थ विनियोग कहे गए हैं।

(ॐ अस्य श्रीशक्तिपूजासारस्य सदाशिवऋषिः पंक्तिश्छन्दः श्रीभुवनेश्वरी-देवता, ऐं बीजं, सौः शक्तिः क्लीं कीलकम् धर्मार्थकाममोक्षार्थे विनियोगः) ॥३-४॥

आसनं तत्र संशोध्य भूमिं संशोध्य साधकः।
भूतशुद्धिं विधायाथ प्राणार्पणविधिं ततः ॥५॥
सदाशिवर्षिन्यासेन मातृकान्यासकेन च।
षोढान्यासक्रमेणैवं देहं व्याप्य महेश्वरि ॥६॥

आसनशुद्धि, भूमिशुद्धि, भूतशुद्धि, प्राण-प्रतिष्ठा, सदाशिवऋषि आदि अर्थात्

ऋषि-कर-षडङ्गन्यास, मातृकान्यास, षोडान्यास के क्रम से हे महेश्वरि ! देह-व्यापन अर्थात् न्यासादि प्रक्रियाओं को, क्रमशः सम्पन्न करना चाहिए ।।५-६।।

भूमौ यन्त्रं लिखित्वाशु सिन्दूरेणात्रवर्ण्यते ।
बिन्दुत्रिकोणं षट्कोणं वृत्तं नागदलाङ्किकम् ।।७।।
देवेशि भूगृहं शक्तिपूजा-यन्त्रमुदाहृतम् ।
यन्त्रं विलिख्यातिदीर्घं विस्तृतं परमेश्वरि ।।८।।

हे परमेश्वरि ! भूमि पर सिन्दूर से शीघ्र यन्त्र बनाए। यन्त्र कैसा होगा यह बताया जाता है–वह बिन्दु, त्रिकोण, षट्कोण, वृत्त और अष्टदलकमल तथा भूपुर से सुशोभित, समान दीर्घ विस्तारयुक्त शक्तिपूजायन्त्र लिखना चाहिए ।।७-८।।

स्वशक्तिं परशक्तिं वा नग्नां मुक्तकचां शिवे ।
मालाभरणशोभाढ्यां स्वर्णकङ्कणराजिताम् ।
स्नातामानीय देवेशि स्वयं नग्नोत्र साधकः ।।९।।

हे शिवे ! अपनी शक्ति (स्त्री) हो या पराई शक्ति, उसे नग्न, केश खोले, माला और आभूषणों से सुशोभित, सोने के कङ्कणधारण किए, स्नान की हुई अवस्था में साधक वहाँ पूजास्थल में ले आए ।।९।।

करालं विकरालं च संहारं रुरु भैरवम् ।।१०।।
कालाग्निं च महाकालं सुप्तमुन्मत्तभैरवम् ।
अष्टपत्रेषु संपूज्य गन्धाक्षतप्रसूनकैः ।।११।।

हे देवेशि ! तब साधक, स्वयं नग्न हो, कराल, विकराल, संहार, रुरु, कालाग्नि, महाकाल, सुप्त और उन्मत नाम के आठ भैरवों का यन्त्र के अष्टदलकमल में गन्धाक्षतपुष्प से पूजन करे ।।१०-११।।

त्रिपुरां भैरवीं तारां बालां च सुमुखीं प्रिये ।
भगमालां च षट्कोणे पूजयेन्द्गन्धपुष्पकैः ।।१२।।

हे प्रिये ! तब त्रिपुरा, भैरवी, तारा, बाला, सुमुखी तथा भगमाला देवियों का षट्कोण में गन्ध और पुष्प से पूजन करे ।।१२।।

षट्कोणञ्चैव सम्पूज्य त्रिकोणं पूजयेत्ततः ।
गङ्गां च यमुनां देवि तृतीयाञ्च सरस्वतीम् ।
गन्धाक्षतप्रसूनाद्यैर्धूपदीपादितर्पणैः ।।१३।।

तब उपर्युक्तरीति से षट्कोण की पूजा करने के पश्चात् त्रिकोण में गन्धाक्षत

पुष्प, धूप, दीप आदि तथा तर्पण से गङ्गा, यमुना, सरस्वती का साधक पूजन करे ॥१३॥

बिन्दौ सम्पूजयेद्देवि देवीं श्रीभुवनेश्वरीम्।
ईश्वरञ्चैव कालाग्निं कामराजं महेश्वरि।
गन्धाक्षतैश्च सम्पूज्य तत्र घण्टारवं चरेत् ॥१४॥

हे देवि ! बिन्दुचक्र पर देवी श्रीभुवनेश्वरी, ईश्वर, कालाग्नि, कामराज, का गन्धाक्षत से पूजन कर, वहाँ घण्टाध्वनि करे ॥१४॥

भूतानुत्सार्यमन्त्रेण निवध्याशा स्वमूलतः।
शक्तिं देवीमयीं ध्यात्वा स्वयं शिवमयं स्मरेत् ॥१५॥

मन्त्र द्वारा भूतों का उत्सारण कर, अपने मूलमन्त्र से भी दिग्बन्धन कर, शक्ति का देवीमय ध्यान करते हुए स्वयं का शिवमय ध्यान करे ॥१५॥

यन्त्रे शक्तिं निवेश्यादौ तद्दक्षिणकरात्तले;
उपविश्य स्वयञ्चैव पूजां कुर्याद्यथाविधि।
मूलमन्त्रेण देवेशीं गन्धाक्षतप्रसूनकैः ॥१६॥

सर्वप्रथम यन्त्रपर पूर्वोक्त शक्ति को बैठाकर, उसके दाहिनेहाथ के नीचे स्वयं बैठकर, मूलमन्त्र से गन्ध, अक्षत, पुष्पों द्वारा देवेशी श्रीभुवनेश्वरीरूप में उसकी पूजा करनी चाहिए ॥१६॥

हृल्लेखा मस्तके पूज्या कराली कुन्तले तथा।
ललाटे विकराली च भ्रुवोश्चोमा प्रकीर्तिता ॥१७॥

यहाँ से शक्ति के विविध अङ्गों मे देवीपूजा का उल्लेख करते हैं—

शक्ति के मस्तक में हृल्लेखा, केश में कराली, ललाट में विकराली, भौंहों में उमादेवी पूजनीय कही गई हैं ॥१७॥

नेत्रयोः कर्णयोश्चैव श्रीः पूज्या परमेश्वरि।
देवि! दुर्गां नासिकायां पूषां च गण्डयोस्तथा ॥१८॥
मुखे लक्ष्मीः कण्ठदेशे श्रुतिश्च स्कन्धयोःस्मृतिः।
धृतिश्च हस्तयोर्देवि श्रद्धावक्षसि संस्मृता ॥१९॥

हे परमेश्वरि ! हे देवि ! उसके दोनों नेत्रों तथा कानों में श्री, पूजा के योग्य हैं। नासिका में दुर्गा, गण्डस्थलों में पूषा, मुख में लक्ष्मी, कण्ठदेश में श्रुति, कन्धों में स्मृति, हाथों में धृति, वक्षस्थल में श्रद्धा पूजा की दृष्टि से , स्मरण की जाती हैं ॥१८-१९॥

कुचयोः संस्मृता मेधा मतिः कुक्षौ महेश्वरि !
कान्तिश्च पार्श्वयोर्देवि पूज्यार्या पृष्ठदेशके ॥२०॥
नाभावनङ्गरूपा च योनौ भुवनपालिका।
अनङ्गमदनादेवि सम्पूज्या गुह्यदेशके ॥२१॥

हे महेश्वरि ! उसके दोनों स्तनों में मेधा, कुक्षि में मति, दोनों पार्श्वों में कान्ति, पीठ में आर्या, नाभि में अनङ्गरूपा, योनि में भुवनपालिका, गुह्यदेश में अनङ्गमदना देवी भली-भांति पूजा करने योग्य है ॥२०-२१॥

उर्वोर्भुवनवेगा च जान्वोश्चानङ्गवेदना।
जंघयोः सर्वशिशिरा सम्पूज्याः पादयोस्तथा।
अनङ्गमेखला देवि साधकैः मन्त्रसिद्धये ॥२२॥

हे देवि ! उसके दोनों उरुओं में भुवनवेगा, जानुओं में अनङ्गवेदना, जङ्घों में सर्वशिशिरा तथा दोनों पैरों में अनङ्गमेखला मन्त्रसिद्धि हेतु साधकों द्वारा पूजेजाने योग्य हैं ॥२२॥

पादादिमूर्धं पर्यन्ते गात्रे श्रीभुवनेश्वरी।
पूजनीया महादेवि गन्धाक्षतप्रसूनकैः।
विविधैः कुसुमैर्देवि भक्ष्यैर्भोग्यैर्विशेषतः ॥२३॥

हे देवि ! हे महादेवि ! शक्ति के शरीर में पैर से मूर्धापर्यन्त देवीभुवनेश्वरी, गन्धाक्षतपुष्प, अनेक प्रकार के पुष्प तथा विशेष भक्ष्य-भोज्य पदार्थों से पूजेजाने योग्य हैं ॥२३॥

द्रव्येण विविधाहारैः शक्तिं सन्तर्प्य पार्वति।
भगं सम्पूज्य लिंगेन लिंगं सम्पूजयेत्तथा ॥२४॥

विविधप्रकार के आहारद्रव्यों से शक्ति को सन्तुष्ट कर लिंग से भग का तथा भग से लिंग का पूजन (सम्मिलन) करे ॥२४॥

आत्मानं शिवरूपं तां शक्तिं देवीस्वरूपिणीम्।
विभावयेन्महेशानि साधकः सर्वसिद्धये ॥२५॥

हे महेशानि ! सभी प्रकार की सिद्धियों के लिए साधक, अपने को शिवरूप में तथा शक्ति की देवीस्वरूप में भावना करे ॥२५॥

रेतसा वै जपेन्मूलं यथाशक्त्या महेश्वरि।
रेतसा तर्पयेद्धीमान् देवीं श्रीभुवनेश्वरीम् ॥२६॥

सम्पूज्य विविधैः पुष्पैः प्रणमेद्योनिमुद्रया ।
विसर्जयेच्च तां शक्तिं नत्वा संहारमुद्रया ॥२७॥

हे महेश्वरि ! रेतस से यथाशक्ति मूलमन्त्र का जप करे तत्पश्चात् रेतस से तथा विविधपुष्पों से देवीभुवनेश्वरी की पूजा करे तथा उन्हें योनिमुद्रा द्वारा प्रणाम करे । अन्त में उस शक्ति को नमस्कार कर, संहारमुद्रा से उसका विसर्जन करे ॥२६-२७॥

इत्येष पटलो देवि शक्तिपूजाप्रकाशकः ।
अदातव्योऽप्यभक्ताय गोपनीयः स्वयोनिवत् ॥२८॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये शक्तिपूजाविधिर्नाम एकविंशः पटलः ॥२१॥

हे देवि ! इस प्रकार का शक्तिपूजाप्रकाशक यह पटल अभक्तों को देने योग्य नहीं है तथा स्त्री, जिस प्रकार अपने योनि को गुप्त रखती है उसी प्रकार गुप्त रखने योग्य है ॥२८॥

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के शक्तिपूजाविधि नामक इक्कीसवें पटल की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ।।२१।।



द्वाविंशपटलः

कुमारीवटुकपूजाविधि

श्रीभैरवउवाच

श्रृणुदेवि प्रवक्ष्यामि कुमारीणाञ्चपूजनम् ।
यं विधाय कलौ मन्त्री सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥१॥

श्रीभैरव बोले—हे देवि ! अब मैं कुमारीपूजा की विधि कहता हूँ, जिसका कलियुग में आचरण कर साधक, सभी प्रकार की सिद्धियों का स्वामी हो जाता है, तुम उसे सुनो ॥१॥

मन्त्री स्नात्वाथशुद्धात्मा कृत्वा देवि! क्रमार्चनम् ।
कुर्यान्नवकुमारीणां पूजामाश्विनमासके ॥२॥

हे देवि ! जब मन्त्रसाधक, स्नान आदि से, शुद्धात्मा हो जाय तब वह आश्विनमास में नवकुमारियों का क्रमार्चन करे ॥२॥

प्रतिपद्दिवसे मन्त्री कुमारीं सुमनोहराम् ।
अभ्यङ्गस्नानशुद्धां तां पूजासंस्थानमानयेत् ॥३॥

मन्त्रसाधक आश्विनमास के शुक्लपक्ष की प्रतिपद्तिथि, आश्विननवरात्र के प्रथमदिवस को सुन्दर, मनोहर, अभ्यङ्गस्नान आदि से शुद्ध हुई, कुमारी को पूजास्थान में ले आए ॥३॥

देवता सन्निधौ बालामुपवेश्य समर्चयेत् ।
गन्धपुष्पाक्षतैर्धूपदीपैश्च कदलीफलैः ॥४॥
भक्ष्यभोज्यान्नपानाद्यैः क्षीराज्यमधुमांसकैः ।
कदलीनारिकेलादि· फलैस्तां परितोषयेत् ॥५॥

उस बाला को देवता के समीप बैठाकर, गन्ध, पुष्प, अक्षत, धूप-दीप, कदलीफल से पूजन करे । उस समय साधक भक्ष्य-भोज्य पान आदि तथा दूध, घी, मधु, मांस, केला तथा नारीयल आदि फलों से उन्हें सन्तुष्ट करे ॥४-५॥

सशक्तिकः स्वयं देवि यौवनोल्लाससंयुतः ।
यथाशक्तिजपेदेकोत्तरवृद्ध्याथवामनुम् ॥६॥

हे देवि ! तब अपनी शक्ति के सहित यौवनोल्लास से संयुक्त हो साधक एक-एक माला वृद्धिक्रम से अथवा यथाशक्ति मूलमन्त्र का जप करे ॥६॥

बालामलंकृतां पश्यन् चिन्तयेत्स्वेष्टदेवताम् ।
ततस्तां देवताबुद्ध्या नमस्कृत्य विसर्जयेत् ॥७॥

उस अलंकृतबाला को देखते हुए अपने इष्ट देवता का चिन्तन करे, अन्त में देवताबुद्धि से उस कुमारी को नमस्कार कर, उसका विसर्जन करे। यह प्रथमदिन की पूजाविधि सम्पन्न हुई ॥७॥

द्वितीयायां द्विवर्षान्तामेकवर्षां च पूजयेत् ।
एवंविधिना कुमारीं च यजेत्पूर्वदिनेर्चिताम् ॥८॥

इसी प्रकार द्वितीया को दो वर्ष की कन्या और पहले दिन की एक वर्ष की कन्या का पहले दिन की विधि से ही पूजन करे ॥८॥

नवम्यामेकवर्षादि नववर्षान्तकन्यकाः ।
बाला शुद्धा लक्षिता च मालिनी च वसुन्धरा ॥९॥
सरस्वती रमा गौरी दुर्गा च नवकीर्तिताः ।
त्रितारार्द्यैर्नमोन्तैश्च देवता पद पश्चिमैः ।
नामभिः सचतुर्थ्यन्तैः पूजयेत्तां पृथक्-पृथक् ॥१०॥
बटुकं पञ्चवर्षं च नववर्ष गणेश्वरम् ॥११॥
गन्धपुष्पाम्बराकल्पैर्यथाविभवविस्तरम् ।
अभ्यर्च्य देवता बुद्ध्या पदार्थैः परितोषयेत् ॥१२॥

प्रतिपद से नवमी पर्यन्त एक-एक वर्ष के क्रम से नववर्ष तक की कन्याओं का जो बाला, शुद्धा, लक्षिता, मालिनी, बसुन्धरा, सरस्वती, रमा, गौरी, दुर्गा इन नव नामों से कही जाती हैं । उनके नामों के आदि में त्रितार (ऐं ह्रीं श्रीं), अन्त में देवता के नाम के पश्चात् नमः नाम में चतुर्थी के योग से उनका अलग-अलग पूजन करके साथ ही पाँचवर्ष के वटुक और नववर्ष के गणेश का भी गन्ध, पुष्प, वस्त्रादि से अपने वैभव के विस्तार के अनुरूप, पद्धति तथा पदार्थ से पूजन कर, देवताबुद्धि से उन सबका परितोष करे ॥९-१२॥

स्वकार्यफलसिद्ध्यर्थं वित्तशाठ्यविवर्जितः ।
नवरात्रं जपेदेकोत्तरवृद्धिक्रमेण च ॥१३॥

हे देवि ! अपने कार्यफल की सिद्धिहेतु, वित्तसाठ्य से रहित हो साधक, नवरात्रपर्यन्त एकोत्तरवृद्धिक्रम से (एक-एक बढ़ाते हुए) जप भी करे ॥१३॥

नवरात्रिकृतां पूजां देवि देव्यै समर्पयेत् ।
ताम्बूलं दक्षिणां दत्वा कुमारीं तां विसर्जयेत् ॥१४॥

हे देवि ! नवरात्रि में की गई पूजा को देवी को समर्पित कर, ताम्बूल एवं दक्षिणा देकर पूजा की गई कुमारियों का विसर्जन (विदाई) करे ॥१४॥

एवं नवकुमारीणामर्चनं प्रतिवत्सरम्: ।
यः करोति स पुण्यात्मा देवता प्रीतिमाप्नुयात् ॥१५॥
मनोभिलषितं प्राप्य निवसेत्तवसन्निधौ ॥१६॥

इस प्रकार प्रतिवर्ष जो नवकुमारियों का पूजन करता है वह सुन्दरपुण्यात्मा-साधक, देवता की प्रसन्नता को प्राप्त करता है तथा अपना मनोवांछित प्राप्त कर अन्त में तुम्हारे सान्निध्य में निवास करता है ॥१५-१६॥

इत्येष पटलोदेवि कुमारीपूजनात्मकः ।
गोपनीयः प्रयत्नेन मन्त्रसिद्धिकरोमतः ॥१७॥

इति श्रीभुवनेश्वरीरहस्ये कुमारीवटुकपूजाविधिर्नाम द्वाविंशः पटलः ॥२२॥

इस प्रकार का यह कुमारी पूजनात्मक पटल, प्रयत्नपूर्वक गोपनीय तथा मन्त्र-सिद्धिकारक कहा गया है ॥१७॥

श्रीभुवनेश्वरीरहस्य के कुमारीवटुकपूजाविधि नामक बाईसवें पटल की कल्याणीटीका सम्पूर्ण हुई ।।२२।।



श्रीविद्यार्णवतन्त्रम्

हिन्दीभाष्यकारः श्रीकपिलदेवनारायण

'श्रीविद्या' शब्द श्रीत्रिपुरसुन्दरी के मन्त्र एवं उसके अधिष्ठात्री देवता–इन दोनों का बोधक है। सामान्यता 'श्री' शब्द 'लक्ष्मी' अर्थ में प्रसिद्ध है; परन्तु हारितायन संहिता, ब्रह्माण्डपुराण-उत्तरखण्ड आदि पुराणेतिहासों में वर्णित आखियायिकाओं के अनुसार 'श्री' शब्द का मुख्य अर्थ 'महात्रिपुरसुन्दरी' ही है। श्री महालक्ष्मी ने महात्रिपुरसुन्दरी की चिरकाल-पर्यन्त आराधना कर जो अनेक वरदान प्राप्त किये हैं, उनमें एक वरदान 'श्री' की आख्या से लोक में ख्याति प्राप्त करने का भी है। अस्तु; 'श्री' शब्द का 'महालक्ष्मी' अर्थ तो गौण ही है; मुख्य अर्थ है–'श्री' अर्थात महात्रिपुरसुन्दरी की प्रतिपादिका विद्या–मन्त्र = 'श्रीविद्या'। वाच्य एवं वाचक का भेद मानकर इस मन्त्र की अधिष्ठात्री देवता भी 'श्रीविद्या' ही सिद्ध होती है। इस श्रीविद्या के उपासकों को लौकिक फल तो प्राप्त होते ही है; आत्मज्ञानी को प्राप्त होने वाला शोकोत्तीर्णतारूप फल भी श्रीविद्यापासकों को निश्चित रूप से प्राप्त होता है; साथ ही यही फल ब्रह्मविद्या से भी प्राप्त होता है; अतः फलैक्य होने के कारण श्रीविद्या ही ब्रह्मविद्या है–यह निर्विवाद सत्य प्रतिष्ठापित होता है। 'श्रीविद्या' का साङ्गोपाङ्ग विवेचन करने वाला सर्वप्रामाणिक महनीय ग्रन्थ 'श्रीविद्यार्णवतन्त्रम्' न केवल श्री विद्या; अपितु दश महाविद्याओं के विशद् विवेचन के साथ-साथ शैव, शाक्त, गाणपत्य, वैष्णव, सौर आदि सभी मन्त्रों एवं उनके तत्तद् यन्त्रों से पाठक को साक्षात्कार कराने वाला एक बृहत्काय ग्रन्थ है। स्वामी विद्यारण्य यति द्वारा छत्तीस श्वासों में गुम्फित यह ग्रन्थरत्न पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध रूप दो खण्डों में समुपलब्ध है। श्रीविद्या के सविधि विवेचन के साथ-साथ अन्य देवी-देवताओं के भी मन्त्र-यन्त्रों का समग्र रूप मे विवेचन, उनके उपसना की विधि एवं उपासना के फलस्वरूप प्राप्त होने वाले फलों को स्पष्टतया अभिव्यक्त करना इस ग्रन्थ की सर्वातिशायी विशेषता है। अन्य ग्रन्थों में जहाँ किसी भी उपस्य देवता के एक, दो, चार अथवा कतिपय प्रमुख मन्त्र-यन्त्रों का ही विवेचन उपलब्ध होता है; वही इस ग्रन्थ में विवेच्य समस्त देवी-देवताओं के प्रसिद्ध-अप्रसिद्ध सभी मन्त्र-यन्त्रों को उनकी विधियों सहित स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया गया है; फलस्वरूप सम्बद्ध देवता के किसी भी मन्त्र-यन्त्र अथवा उसकी विधि को जानने के लिये साधक को किसी अन्य ग्रन्थ का अवलम्ब ग्रहण करने की लेशमात्र भी आवश्यकता नही रह जाती। संक्षेप में कहा जा सकता है कि श्रीविद्यारण्य यति-प्रणीत 'श्रीविद्यार्णवतन्त्रम्' एकमात्र ऐसा ग्रन्थ है, जो साधक के समस्त कामनाओं की पूर्ति करने में सर्वतोभवेन समर्थ है। अस्तु; यह ग्रन्थ अद्यावधि अपने मूल स्वरूप में ही, बिना किसी भाषा-टीका के उपलब्ध था, जिससे जिज्ञासु साधकों को आराधना में पग-पग पर दुरूह कठिनाइयों का अनुभव होता था एवं ग्रन्थ के तात्पर्य से अवगत ने हो पाने के कारण वे बार-बार विशयग्रस्त हो जाते थे। इसी को हृदयङ्गम कर तन्त्रग्रन्थों के ख्यातिनाम भाषा-भाष्यकार श्री कपिलदेव नारायण ने इस विशालकाय ग्रन्थ को भाषा टीका से अलंकृत कर सर्वनहृद्य बनाने का साहसिक प्रयास किया है पूर्वार्द्ध-उत्तरार्द्ध के विभाजन से दो भागों में विभक्त यह विशालकाय ग्रन्थ भाषा-भाष्य से अलंकृत होने के फलस्वरूप और भी बृहद् कलेवर को प्राप्त हो गयाः फलस्वरूप जिज्ञासुओं के सौकर्य को दृष्टिगत कर इसे पाँच भागों (पूर्वार्द्ध–दो भाग एवं उत्तरार्द्ध–तीन भाग) में प्रकाशित किया जा रहा है। विद्वान् भाष्यकार श्री कपिलदेवनारायण द्वारा प्रयोगपरक भाषा भाष्य से अलंकृत यह ग्रन्थ जिज्ञासुओं की समस्त जिज्ञासाओं का शमन करने में सर्वविध समर्थ होगा–इसमें विचिकित्सा के लिये लेशमात्र भी स्थान नही है। **(सम्पूर्ण पाँच भागों में)**

वितरक
चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस
4697/2, 21-ए, अंसारी रोड़,
दरियागंज नई दिल्ली - 110002
फोन न. 011-23286537, 32996391

प्रकाशक
चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
के - 37/117 गोपाल मंदिर लेन
वाराणसी-221001
फोन न. 0542-2335263, 2335264